कृषि हानिकारक कीट-पतंग

लेखक

मोतीलाल सेठ एम०एस-सी० (प्रयाग)

इक्सटेन्सन प्राजेक्ट, एलाहाबाद अग्रीकल्चरल इंस्टीट्यूट, एलाहाबाद।
भूतपूर्व लेक्चरर, प्राणिशास्त्र-विभाग, ला० रामलाल
अग्रवाल कालेज सरसा, एलाहाबाद, एवं
संचालक, ग्रामीण क्षेत्र विज्ञान
विकास संघ, एलाहाबाद।

संशोधित एवं परिवर्धित संस्करण

प्रकाशक
देश सेवा मण्डल,
५४, हीवेट रोड, एलाहाबाद।

द्वितीय संस्करण
सजिल्द दो रुपया आठ आना
साधारण दो रुपया

मुद्रक
शारदा प्रसाद जायसवाल,
देश सेवा प्रेस,
५४ हीवेट रोड, एलाहाबाद

भूमिका

यह पुस्तक सरल हिन्दी भाषा में उन ३४ प्रमुख कृषि हानिकारक कीट-पतंगों के ऊपर प्रकाश डालती है, जो उत्तर भारत के किसानों की फसलों को हानि पहुँचाते रहते हैं। इस पुस्तक में इन कीट-पतंगों का वर्णन, उनका जीवन इतिहास तथा उनके नियंत्रण के प्रमुख साधनों का वर्णन भलीभांति दिया गया है। किसानों तथा अन्य ऐसे लोगों के लिये जो इन कीट-पतंगों से अपनी फसलों को बचाने में रुचि रखते हैं यह पुस्तक अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी। इसके पढ़ने से इस बात का समुचित ज्ञान हो जायगा कि फसलों को हानि पहुँचाने वाले कीट-पतंग कौन हैं और कैसे होते हैं तथा वे किस प्रकार और अपने किस रूप में हानिकारक सिद्ध होते हैं ? ऐसे प्रत्येक कीट-पतंग के सभी रूपों के चित्र दिये होने के कारण विषय बहुत ही सरल और रोचक बना दिया गया है। कृषि हानिकारक कीट-पतंगों का नियंत्रण अधिक अन्न और पशुचारा उत्पन्न करने में सहायक होता है। अतः इस दृष्टिकोण से इस विषय का अध्यन बहुत ही आवश्यक है।

इस पुस्तक की एक विशेषता यह भी है कि इसके अंत में कीट-पतंगों के नियंत्रण में प्रयोग किये जाने वाले यन्त्रों का चित्र, उनके मिलने का स्थान तथा उनके मूल्य भी दिये गये हैं।

मुझे पूर्ण आशा है कि पाठकों को इस विषय का ज्ञान प्राप्त कराने में यह पुस्तक अधिक सहायक होगी।

डब्लू० के० वेसली,
एम० एस-सी०, डी० फिल०,
प्रोफेसर, जन्तुशास्त्र एवं पतंगशास्त्र
प्राणिशास्त्र विभाग,
एलाहाबाद एग्रीकल्चरल इन्सटीट्यूट, एलाहाबाद।

तिथि ५-४-५३

दो शब्द

खेती की पैदावार का बहुत बड़ा भाग कीट-पतंग नष्ट कर डालते हैं। इस सम्बन्ध में भारतवर्ष में भी अनेक सफल प्रयोग किये गये। परन्तु ऐसे सभी प्रयोगों के परिणाम अंग्रेजी भाषा में लिखे और छपे हुये होने के कारण सर्व साधारण उनसे अधिक लाभ नहीं उठा पाते। अत: इस कमी को कुछ अंशों में पूरा करने के लिये ही मैंने इस पुस्तक को सरल हिन्दी भाषा में लिखने का प्रयत्न किया है। मेरी समझ में कृषि-सूचना का एक अंग बनकर यह पुस्तक हिन्दी जानने वाले सभी क्षेत्रों के किसानों की अधिक सहायता कर सकेगी, क्योंकि इस पुस्तक में खेती को हानि पहुँचाने वाले सभी प्रधान कीट-पतंगों का वर्णन, उनका जीवन-इतिहास तथा उनकी रोक थाम का सम्पूर्ण विवरण दिया गया है। इतना ही नहीं कीट-पतंगों की रोक थाम में प्रयोग होने वाले विभिन्न कीटमार, मशीन तथा उनके मिलने का स्थान और उनके मूल्य के सम्बन्ध में भलीभाँति बताया गया है। कीट-पतंगों से कृषि को बचाने के लिये किसानों को सभी प्रकार की सूचना देना ही इस पुस्तक का मुख्य उद्देश्य है मुझे पूर्ण आशा है कि पढ़े लिखे किसान भाई इस पुस्तक का सदुपयोग स्वयं करेंगे तथा इस विषय की जानकारी औरों को करायेंगे। कीट-पतंगों के विषय "पतंग शास्त्र" में रुचि रखने वाले "कृषि-स्नातकों" को भी इस पुस्तक से सहायता मिलेगी ऐसी मुझे आशा है।

इस पुस्तक के लिखने में मैंने विख्यात पतंग-शास्त्रियों द्वारा लिखी गई अनेक पुस्तिकों एवं साहित्य से सहायता ली है। अत: उन लेखकों में मेटकाफ-फ्लिन्ट, कामस्टाक, हू और मैसन, मद्रास सरकार के भूतपूर्व कीट-विशेषज्ञ श्री अइय्यर तथा उत्तर प्रदेशीय सरकार के कीट-विशेषज्ञ डा० के० बी० लाल का आभारी हूँ।

एलाहाबाद एग्रीकल्चरल इंस्टीट्यूट के डा० डब्ल्यु० के० वेसली का मैं अधिक आभारी हूँ जिन्होंने इस पुस्तक की भूमिका लिखने का कष्ट किया।

अंत में मैं अपने परम पूज्य गुरु प्रोफेसर एस० सी० वर्मा, जन्तुशास्त्र-विभाग, प्रयाग विश्वविद्यालय के प्रति आभार प्रकट करता हूँ जिनकी विशेष अनुकम्पा से ही मैं इस विषय का अध्ययन कर सका।

३४।१०, जार्ज टाउन, एलाहाबाद
३०-४-५३

मोतीलाल सेठ

विषय-सूची

प्रथम अध्याय

द्वितीय अध्याय

तृतीय अध्यांय

———



भिण्डी की पत्तियों को नष्ट करने वाले सुण्डों का निरूपण करते हुये लेखक

प्रथम अध्याय

पतंग परिचय

वर्त्तमान भारत में खाद्यान्नों की कमी एक बहुत बड़ी समस्या है। एक ओर बढ़ती हुई जनसंख्या तथा दूसरी ओर प्रतिवर्ष पैदावार की कमी के बीच की तनातनी ने एक विचित्र परिस्थित उत्पन्न कर रक्खी है। "जन संख्या की बाढ़ रोकी जाय" यह जनसाधारण की समझ के बाहर है। हाँ, अधिक अन्न उपजाने की बात कुछ समझ में अवश्य आती है। इस दिशा में पिछले कई वर्षों से सरकार की ओर से जो आन्दोलन चलाया जा रहा है उसमें जनता की कुछ रुचि भी बढ़ती हुई दिखाई पड़ती है। और इसमें कोई संदेह नहीं है कि लोगों को अधिक सफलता भी मिली है। खेतों में अधिक अन्न उपजाने के हेतु अनेक नई प्रकार की मशीनें, हल, ट्रैक्टर, तथा उत्तम खादों का प्रचार दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। परन्तु जहाँ इन उपायों द्वारा अन्न की वृद्धि की आशा की जाती है वहां एक ऐसी शक्ति काम करती है जो पैदावार को बढ़ने नहीं देती और वह विनाशकारी शक्ति कीट पतंगों की है। फसल बोने के समय से लेकर अन्न के बखार में पड़े रहने तक अनेक प्रकार के कीट-पतंग अन्न के सर्वनाश में जुटे रहते हैं। जहाँ नये नये उपायों द्वारा कुछ वृद्धि होती है, वहाँ दूसरी ओर 'मान न मान मैं तेरा मेहमान' बन कर कीट-पतंग उत्पन्न हुए अन्न को अनेक रीतियों द्वारा नष्ट कर देते हैं। इन पतंगों में दीमक, टिड्डी, टिड्डे (फिनगा) कटुआ, गंधी, लाही, पाई तथा घुन इत्यादि का परिचय परमावश्यक है। यों तो संसार असंख्य तथा अनेक रूप रंग के पतंगों से भरा पड़ा है परन्तु मैं इस पुस्तक में केवल उन्हीं पतंगों का वर्णन करूँगा जो हमारी फ़सलों को सदैव हानि पहुँचाते रहते हैं तथा जिनसे हमारे किसान भाई भली भाँति परिचित हैं।

ऐसे कृषि हानिकारक कीट-पतंगों की विशेष जानकारी प्राप्त करने के लिये उनके नाम की परिभाषा, उनके रूप रंग का परिचय तथा उनकी वृद्धि और विकास सम्बन्धी परिस्थितियों का साधारण परिचय प्राप्त कर लेना इस पुस्तक के समझने में सहायक होगा।

कीट-पतंगों की परिभाषा तथा उनका रूप रंग

सम्पूर्ण विश्व मनुष्य, बन्दर, भेड़, बकरी, हाथी, घोड़े, पक्षी, सर्प, गोजर, बिच्छी खेखड़े, मगर, मछली तथा मेढक जैसे असंख्य और अनेकानेक रूप रंग के जीव जंतुओं

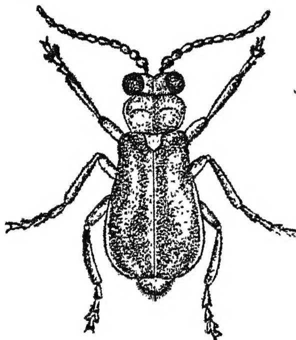
और अध्ययन के लिये इन असंख्य जीव-जन्तुओं को कई कक्षा, श्रेणी तथा जातियों में विभक्त कर रक्खा है। इन्हीं जीवों की अनेक श्रेणियों में कीट-पतंगों की भी एक श्रेणी है। इस श्रेणी के सभी सदस्यों में जिन्हें कीट-पतंग कहते हैं अपनी निजी विशेषतायें होती हैं जो इस प्रकार हैं :—

(१) प्रत्येक कीट पतंग को चलने के लिये छः पांव तथा

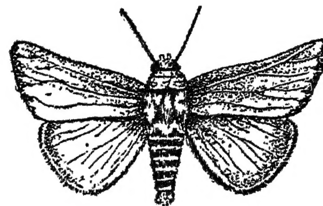
(२) उड़ने के लिए दो जोड़े पंख होते हैं। परन्तु किसी-किसी पतंग में केवल एक ही जोड़ा पंख होता है (मक्खी) इसके साथ ही साथ कुछ कीट-पतंग ऐसे भी होते हैं जिनको एक भी पंख नहीं होते (खटमल, जूं, चीलर तथा दीमक)।

(३) प्रत्येक पतंग का शरीर कई टुकड़ों में विभाजित रहता है। इनकी इस प्रकार की शरीर रचना इन्हें उड़ने, फुदकने और दौड़ने में सहायक होती है।

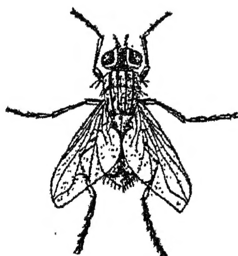
(४) प्रत्येक पतंग अपने समूचे जीवन काल में कई रूप धारण करता है।



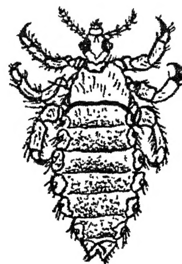
अ



ब



स



द

चित्र १— चार विभिन्न पतंग

अ—कुम्मड़ा लौकी का पीला पतंग, ब—धान का विनाशकपतंग,

स—घर की मक्खी, द—जुआँ।

कीट-पतंग कई रूप रंग के होते हैं। इसका अनुभव आप वर्षा ऋतु में स्वयं कर सकते हैं। शाम हुई कि लालटेन और दीपक के सामने अनेक रूप रंग के पतंग उछलने कूदने लगते हैं। कोई लम्बा तो कोई छोटा; कोई काला तो कोई लाल पीला इत्यादि। ठीक इसी प्रकार आप को खेत में भी अनेक रूपरंग के कीट-पतंग दिखलाई पड़ते रहते हैं।

ठन्डे देशों की अपेक्षा गर्म और तर देश में (जहां वर्षा अधिक होती है) कीट-पतंग अधिक पाये जाते हैं। यही कारण है कि वर्षा ऋतु में हमारे देश में जब गर्मी के पश्चात् पानी बरसना आरम्भ होता है अनेक प्रकार के असंख्य कीट-पतंग उत्पन्न हो जाते हैं; उस समय कोई भी स्थान उनकी उपस्थिति से खाली नहीं रहता। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि कीट-पतंगों की अधिकता केवल हमारे ही देश में है। भारतवर्ष की भांति जिस देश की जलवायु होगी वहां इसी प्रकार के कीट-पतंग अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। परन्तु इसके विपरीत ठन्डे देशों में इनकी संख्या कुछ कम होती है। हमारे यहां भी जैसे जैसे सर्दी बढ़ने लगती है कीट-पतंग कम होते जाते हैं। अपनी प्रसिद्ध रामायण में महात्मा तुलसीदास जी ने भी शरद्-वर्णन करते समय लिखा है "मसक दंस बीते हिम त्रासा।" सारांश यह है कि इनके विकास के लिए गर्मी और नमी अति आवश्यक है। जहाँ ये दो परिस्थियियाँ प्रतिकूल होंगी कीट-पतंगों की वृद्धि और विकास रुक जायगा।

कीट-पतंगों का रूप परिवर्त्तन

अण्डा देने वाले जीवों को छोड़कर साधारणत: सभी जीवजन्तु अपने समूचे जीवन काल में अपने जन्मदाता के ही स्वरूप के होते हैं। गाय के बछड़े को अथवा मनुष्य को देखिये। भले ही बच्चा बड़ा होते होते तौल और डील डौल में बढ़ जाय परंतु उसकी शरीर रचना सदैव एक सी होगी। परंतु कीट-पतंगों की वृद्धि बड़ी विचित्र होती है, क्योंकि वे अपने सम्पूर्ण जीवनकाल में कई रूप बदलते और छोड़ते हुये अंतिम रूप पतंग का धारण करते हैं।

सर्व प्रथम अधिकांश कीट-पतंग अपनी माता-पतंग द्वारा अण्डे के रूप में उत्पन्न होते हैं। भिन्न भिन्न कीट-पतंग के अलग अलग रूप रंग के अण्डे होते हैं। इन अण्डों में कोई गोल तो कोई लम्बे, कोई तिकोने तो कोई पहलदार होते हैं। किसी अण्डे का रंग पीला तो कोई सफेद होता है। कहने का अर्थ यह है कि अण्डे अनेक रंग और रूप के होते हैं। अण्डे फूटते हैं। फलस्वरूप प्रत्येक अण्डे से एक लम्बा कई जोड़ वाला तथा रेंगने वाला जीव निकलता है जिसे किरौना, भुड़िला, ईलट या सुन्डा कहते हैं।

नीम के हरे सुण्डे को आपने नीम से नीचे गिरते हुए देखा होगा। सड़े गोबर तथा घोड़े की लीद में असंख्य सुन्डे नाचते दिखाई पड़ते हैं। कुम्हड़ा, नेनुआं तथा तरोई इत्यादि की पत्तियों को खाने वाले हरे सुण्डों को भी आप जानते ही होंगे। उरद और मूंग के पौधों पर एक तरह के बालदार सुण्डे चलते रहते हैं। उन्हें आप भालू कहते हैं। बड़ा भयानक होता है वह भालू सुण्डा। ककड़ी और फूट में भी आप किरौना नाचते देखे होंगे। ये एक प्रकार के सुण्डे ही हैं। सुण्डों की एक विशेषता यह होती है कि इनका मुँह अधिक तेज होता है। अपने तेज मुँह के सहारे ही सुण्डे प्रत्येक वस्तु को बड़ी शीघ्रता से काट कर खा जाते हैं।

अण्डों के फूटने का समय भी भिन्न-भिन्न होता है। परन्तु इतना जान लेना आवश्यक है कि गर्मी में अण्डे जल्दी फूटते हैं। जैसे जैसे सर्दी बढ़ती है अण्डे देर में

फूटते हैं। अण्डे तो कुछ खाते पीते नहीं, परन्तु उनसे जो सुण्डे (भुड़िले) बाहर निकलते हैं वे भोजन की खोज में इधर-उधर दौड़ने लगते हैं। समय पाकर ये सुण्डे पौधों के कोमल तनों की फुनगियों, पत्तियों तथा फलों को खाते हैं। आप भालू सुण्डे को जानते हैं। वह अरहर, मूँग तथा उरद इत्यादि की पत्तियों को खाता है। कुम्हड़ा, लौकी तथा नेनुआं के पत्तियों पर जो हरा हरा सुण्डा मिलता है वह उनकी पत्तियों को खाता है। अतः आप समझ गये होंगे कि ये सुण्डे तो बाहर ही रहकर अपने तेज मुख से अपना भोजन पूरा करते रहते हैं। परन्तु इन सुण्डों के अतिरिक्त कुछ ऐसे भी सुण्डे होते हैं जो तने, जड़ तथा फल में छेद बनाकर उसमें घुस जाते हैं और उनके पदार्थ खा जाते हैं। फलस्वरूप उनका भीतरी भाग नष्ट हो जाता है। ऐसे सुण्डों को छेदनकर्त्ता-सुण्डा कहते हैं, क्योंकि वे सुण्डे छेद करके ही पौधे के किसी भाग में घुसते हैं। परिचय के लिए तनिक गन्ने के उन सुण्डों की ओर ध्यान दीजिए जो गन्ने के तनों में घुस कर उन्हें भीतर ही भीतर खोखला कर देते हैं। गन्ने गिर जाते हैं। भांटे में भी सुण्डे घुसकर भांटे को बरबाद कर देते हैं। कपास तथा चने के ढोंढ़ों में भी सुण्डे घुसे रहते हैं। इस प्रकार आप समझ सकते हैं कि ये सुण्डे आपकी अनेक फ़सलों को कितना हानि पहुँचाते हैं। आपको जानकर आश्चर्य होगा कि थोड़े समय में ही ये सुण्डे पूरी फ़सल को नष्ट कर देते हैं। यही कारण है कि पतंगों का यह रूप, "सुण्डा", बड़ा भयानक होता है। आपकी फ़सलों को नष्ट करने में इन सुण्डों का ही अधिक हाथ रहता है। चने के सुण्डे चने के उगते हुये पौधों के तनों को काट-काट कर एक रात में समूची फ़सल नष्ट कर देते हैं। अच्छा होता कि आप कुछ सुण्डों का परिचय यहीं प्राप्त कर लेते।

हानिकारक सुण्डे—

१. भालू सुण्डा.........	उर्द, मूँग, मोथी, अरहर, ज्वार और बाजरे की उगती हुई कोमल डालों और पत्तियों को खाकर पौधों को निर्बल बना देता है।
२. मकाई, ज्वार और बाजरे का सुण्डा...	यह सुण्डा इन पौधों के तनों में छेद करके भीतर घुस जाता है। तत्पश्चात उनके भीतरी (बीच के) तत्व को खाता है जिसके फलस्वरूप पौधे गिर कर नष्ट हो जाते हैं।
३. तिल का सींगधारी सुण्डा......	यह सब सुण्डों में बड़ा एवं डरावना होता है। यह अजगर की भाँति शान्तिरूप से तिल की डंठलों और पत्तियों को खाता रहता है।
४. धान के सुण्डे.........	(क) धान की पत्तियों को काटने वाला। (ख) धान के तनों को खोखला कर देने वाला।
५. गन्ने के सुण्डे.........	(क) गन्ने की जड़ को खोखला करने वाला। (ख) गन्ने के तनों को खोखला करने वाला।

(ग) गन्ने के अग्रिम भाग को खोखला करने वाला। सभी सुण्डे अलग अलग जाति के होते हैं।

६. चने के सुण्डे.......... (क) चने के पेड़ को काटने वाला जिसे आप कटुआ कहते हैं।
(ख) चने की ठोंठी में घुसकर चने को नष्ट करने वाला।

७. मटर का सुण्डा.......... मटर की पत्तियों के ऊपरी भाग का हरा पदार्थ खाने वाला। इसकी इस आदत से पत्तियों पर सफेद रेखायें बन जाती हैं। पत्तियाँ नष्ट हो जाती हैं। पौधा निर्बल हो जाता है।

८. कपास के सुण्डे...... (क) कपास का लाल सुण्डा जो कपास की ढोंढ़ और उसके मनवा (बीज) को खोखला कर देता है। यह सम्पूर्ण संसार में अपने सर्वनाश के लिये प्रसिद्ध है।
(ख) कपास का धब्बेदार सुण्डा जो कपास की ढोंढ़ और उसके मनवा को नष्ट करता है।
(ग) कपास का पत्ती मोड़ सुण्डा जो इस पौधे की पत्तियों के हरे पदार्थ को खाकर और उन्हें मोड़कर पौधों को निर्बल बना देता है।

९. भाजी के सुण्डे.......... (क) कुम्हड़ा, लौकी, नेनुआँ और ककड़ी की पत्तियों को काटकर खाने वाला हरा सुण्डा।
(ख) ककड़ी, लौकी, फूट, और करैला के फलों में घुस कर भीतरी भाग को खाने वाला सफेद सुण्डा।
(ग) भांटे के फल के भीतर घुसने वाला सफेद गुलाबी सुण्डा।
(घ) आलू के भीतर घुसनेवाला मटमैला सुण्डा।
(च) भिण्डी, मूली, गाजर, बन्दगोभी तथा पातगोभी की पत्तियों को खाने वाला काला कीड़ा।

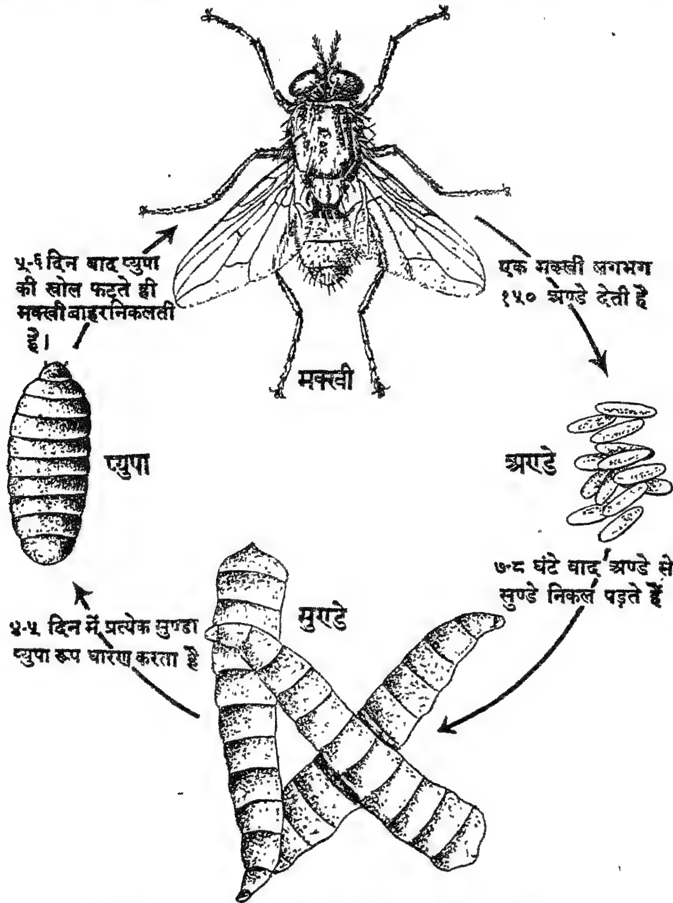
इस प्रकार आप समझ गये होंगे कि सभी प्रकार की फ़सल पर कोई न कोई सुण्डा आक्रमण करता है। क्यों? खाकर जीवित रहने के लिये। परन्तु क्या ये सुण्डे

सदैव अपने ही रूप में बढ़कर बराबर बड़े होते रहते हैं ? नहीं ऐसा नहीं होता। आपकी फ़सलों को नष्ट करने वाले ये सुण्डे कई दिनों तक लगातार भोजन कर लेने के पश्चात पत्तियों को मोड़ कर या भूमि पर लुढ़क कर अथवा फलों के भीतर घुस कर अपने ऊपर एक खोल चढ़ा लेते हैं। इस रूप में वे कपड़े से ढके हुये बच्चे के समान होते हैं। पतंग के इस रूप को प्युपा कहते हैं। प्युपा-रूप में सुण्डे का रूप भीतर ही भीतर बदल जाता है और धीरे धीरे उसके भीतर के जीव को पंख जमने तथा अन्य आन्तरिक अंग बनने लगते हैं। कहने का अर्थ यह है कि प्रौढ़-रूप तथा सुण्डा रूप के बीच में प्युपा-रूप बहुत ही आवश्यक है। क्योंकि इस रूप में ही कीट-पतंग उड़ने तथा मैथुन के हेतु अंगों का निर्माण करते हैं। प्रतिकूल दशा एवं जलवायु के कठिन दिनों को पार करने में भी पतंगों का यह प्युपा-रूप सहायक होता है। अपने वृद्धि के हेतु अनुकूल जलवायु पाते ही प्युपा की खोल फटती है और उसमें से प्रौढ़ पतंग बाहर निकलता है। कठिन गर्मी के कारण बहुत से कीट-पतंग प्युपा-रूप में भूमि में छिपे रहते हैं और वर्षा प्रारम्भ होते ही प्युपा की खोल फटने पर प्रौढ़ पतंग इधर-उधर उड़ने लगते हैं। यही कारण है कि वर्षा में अधिक कीट-पतंग आप के सामने दिखाई पड़ते हैं ? आपको आश्चर्य होता है कि आखिर जल गिरते ही ये पतंग कहाँ से निकल पड़ते हैं। बीर-बहूटी जिसे आप अपनी ग्रामीण भाषा में धोबइन कहते हैं वर्षा की पहली झड़ी में ही खेतों में घूमने लगती है। मल-पतंग से आप परिचित होंगे। वे भी वर्षा की पहली झड़ी के पश्चात ही मल के छोटे टुकड़ों को लुढ़काते दिखाई पड़ते हैं। प्रत्येक मल-टुकड़े को लुढ़काने में दो पतंग लगे हुये होते हैं। कहने का अर्थ यह कि कृषि को हानि पहुँचाने वाले अनेक प्रकार के कीट-पतंगों के प्युपा खेत की मिट्टी में छिपे रहते हैं जो खेत की जुताई कर देने पर बाहर आ जाते हैं। तेज धूप से वे नष्ट हो जाते हैं। चिड़ियाँ उन्हें खा जाती हैं।

प्युपा की खोल फटने के पश्चात् जिस रूप में पतंग बाहर निकलता है उसे प्रौढ़ रूप कहते हैं। यही रूप कीट-पतंगों का असली रूप होता है। इस अवस्था में ही प्रत्येक पतंग मैथुन के पश्चात् वंश वृद्धि में योग देता है। मैथुन के पश्चात् अधिकांश नर पतंग मर जाते हैं। ठीक यही दशा मादा पतंग की होती है। अधिकांश मादा पतंग असंख्य अण्डे देने के कारण मर जाती हैं। परन्तु इसके विपरीत रानी-दीमक जिसका वर्णन आप आगे पढ़ेंगे प्रति दिन ७००००–८०००० अण्डे देती हुई ७-८ वर्ष तक जीवित रहती हैं। कीट-पतंग का जीवन इतिहास भलीभांति समझने के लिये आपको चित्र संख्या २ से सहायता मिल सकती है।

वंश वृद्धि के लिये प्रौढ़ पतंगों को अधिक भोजन की आवश्यकता होती है। अतः वे भी अपने समीप की हरी भरी वस्तुओं पर आक्रमण करके अपना पेट भरते रहते हैं। उनकी इस क्रिया से भी हमारी फ़सलों को अधिक हानि होती है। सभी पतंगों का एक ही प्रकार का भोजन नहीं होता क्योंकि पतंगों के मुँह भी भिन्न-भिन्न बनावट के होते हैं। कुछ पतंग ऐसे होते हैं जिनका मुँह सुण्डों के तेज मुँह की भांति पौधों को काटकर खाने योग्य होता है, जैसे टिड्डी, टिड्डा तथा दीमक का मुँह। दीमक अपनी

मुँह की रचना के लिए संसार में प्रसिद्ध है। इसके विपरीत कुछ ऐसे पतंग होते हैं जिनके मुँह की रचना सूई की भाँति होती है। इस प्रकार के मुँह में दो भाग होते हैं।



चित्र २— मक्खी का समूचा जीवन इतिहास

एक भाग से पतंग अपने भोजन के लिये किसी वस्तु (पेड़) में छेद करता है तथा दूसरे भाग से बनाये हुए छेद से निकले हुये रस को चूसता है। मच्छर का मुँह इसी प्रकार होता है। हमारी फ़सलों को भी हानि पहुँचाने वाले बहुत से ऐसे पतंग हैं जिनके मुँह की रचना इस प्रकार होती है। ये पतंग पत्तियों, फूलों अथवा कोमल डंठलों का रस चूस कर उन्हें निकम्मा बना देते हैं। इनका आक्रमण सुण्डों के आक्रमण से किसी प्रकार कम नहीं होता। मुँह की रचना के आधार पर भी कई पतंगों से परिचित हो जाना अच्छा होगा।

अ—पौधों को काटकर खाने वाले पतंग

१. टिड्डा········ वर्षा आरम्भ होने पर अधिक टिड्डे उत्पन्न होकर नये उगते हुये कोमल अरहर,

	ज्वार, बाजरा, उर्द तथा मूँग के तनों और पत्तियों पर आक्रमण आरम्भ कर देते हैं। इसी समय कहा जाता है कि खेत में कटुआ लग गये हैं। वर्षा की कमी इनके आक्रमण को और प्रबल कर देती है।
२. टिड्डी………	इस पतंग से तो सारा विश्व परिचित है। जहाँ कहीं भी इनका आक्रमण हो जाता है, आकाश बादलों की तरह ढक जाता है। इनके भूमि पर उतरते ही गांव की समूची हरियाली समाप्त हो जाती है। टिड्डियों के छोटे छोटे बच्चे जिन्हें "फुदुक्का" या "हापर्स" कहते हैं बड़ी टिड्डियों से अधिक विनाशकारी होते हैं। इनका काटकर खाने वाला मुँह बहुत तेज चलता है।
३. दीमक………	इनके आक्रमण से लकड़ी के सामान, चारपाई, मेज, कुर्सी, कपड़े-लत्ते, पुस्तकें तथा अन्य वस्तुयें क्षण भर में नष्ट हो जाती हैं। सम्पूर्ण विश्व इनसे कांपता है। वाह रे मुँह की रचना ! गन्ना, गेहूँ और कपास इत्यादि के पौधे तो इनसे सदैव ग्रसित रहते हैं।

ब— पौधों का रस चूसने वाले पतंग

१. गंधी … … …	धान की दुधार बालियों का रस चूस चूस कर उन्हें निर्बल बना देते हैं। दाने खोखले हो जाते हैं। फ़सल मारी जाती है।
२. माँहू … … …	ये पतंग सरसों के तने, छीमियों तथा पत्तियों पर चिपककर रस चूस कर पौधों को निकम्मा बना देते हैं।
३. कपास और पेटुआ का लाल पतंग…	ये पतंग लाल रंग के होते हैं जो कपास के डंठलों, पत्तियों, तथा कच्चे और नये दूध से भरे ढोंढ़ों का रस चूस चूस कर उन्हें निर्बल बना देते हैं।
४. झांगा या बहुँरंगी पतंग……	ये पतंग मूली, पातगोभी, फूलगोभी तथा सरसों आदि के पत्तियों का रस चूसते

रहते हैं। इनके शरीर का चितकबरा रंग होता है।

अब उपर्युक्त वर्णन से आपको ज्ञात हो गया होगा कि अधिकांश कीट-पतंग अपने जीवन काल में चार रूप (अण्डा, सुन्डा, प्यूपा, तथा प्रौढ़-पतंग) धारण करते हैं। इनमें से अण्डा और प्यूपा-रूप किसी प्रकार भी हानिकारक नहीं होता। हमें इन हानिकारक पतंगों के सुण्डा और प्रौढ़ पतंग रूप पर ही अधिक ध्यान देना चाहिये क्योंकि इन रूपों में ही ये कृषि के महान शत्रु हैं। अतः इन्हें नष्ट करने के लिये हमें अधिक से अधिक उपाय कनी चाहिये। इन दो प्रधान रूपों में कीट-पतंग बड़ी तीव्र गति से एक स्थान से दूसरे स्थान को बढ़ते हैं। अतः इनके नष्ट करने के उपाय इनके अण्डों और प्युपों पर विशेष रूप से लागू हो सकते हैं क्योंकि इन दो रूपों में कीट-पतंग एक ही स्थान पर पड़े रहते हैं। इन्हें आसानी से नष्ट किया जा सकता है। यदि अण्डे नष्ट हो जांय तो सुण्डे कहां से उत्पन्न हो सकते हैं? मक्खियों को नष्ट करने के लिये आप मक्खियां तो नहीं मार सकते, मक्खियों का नाश उनके अण्डों द्वारा ही हो सकता है। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि प्रौढ़ पतंगों को नष्ट करने के लिये कोई उपाय ही नहीं है। इस सम्बन्ध में द्वितीय अध्याय में बतांये गये पतंगों के अलग अलग वर्णन से आपको अधिक जानकारी हो सकेगी।

———

द्वितीय अध्याय

दीमक

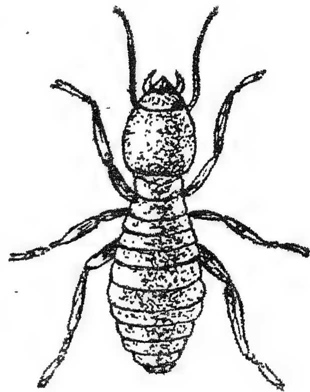
दीमक पतंग से सम्पूर्ण विश्व परिचित है। अन्य प्रादेशिक पतंगों की अपेक्षा यह विश्वव्यापी पतंग है। इस पतंग की उत्पति भी बहुत पुरानी है। एक महर्षि के शरीर में दीमक लगने की कथा एक भारतीय धर्म पुस्तक में मिलती है। अतः इस आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि ये पतंग कितने पुराने हैं और साथ ही साथ संख्या में असंख्य होने के कारण कितनी हानि कर चुके होंगे। विश्व के कोने कोने में इनकी रोक थाम के लिये विभिन्न उपाय सोचे जा रहे हैं। लकड़ी, शहतीर, बांस, बल्ली तथा लकड़ी की बनी वस्तुओं पर इनका आक्रमण अधिक हानि पहुँचाता है। घर में धन्नियों पर; किवाड़ और दरवाजों पर; खाट, चारपाई, मेज और कुर्सियों पर, बोरे चट्टी और बहुमूल्य कपड़ों तथा पुस्तकों पर इनका अक्रमण नित्य प्रति का झगड़ा है।

दीमक गन्ना, मूंगफली और रूई इत्यादि फसलों के प्रधान शत्रु हैं। गेहूँ, जौ, जई, आलू तथा अन्य शाक बनस्पतियों पर भी इनका आक्रमण होता है। आम, अमरूद, सेब तथा ताड़ इत्यादि फल-वृक्षों को वे कम हानि नहीं पहुँचाते। कटाई के बाद खेतों में पड़ी खूटियां (डंठल) तथा गिरी हुई पत्तियां और कच्ची खाद इनके मुख्य भोजन हैं।

यों तो साधारण दृष्टि में आप दीमक का एक ही रूप देखते हैं। परन्तु यह आप का भ्रम है। एक ही बिल में चार प्रकार के दीमक होते हैं। वस्तुओं को नष्ट करते हुए जो दीमक आप देखते हैं उन्हें मज़दूर दीमक कहा जाता है। प्रत्येक मज़दूर दीमक चौथाई इंच लम्बा और हल्के पीले-सुनहले रंग का होता है। इनके पंख नहीं होते। वस्तुओं को खाकर भूमि में बिल बनाना, मिट्टी एकत्रित करके भूमि के बाहर घर बनाना तथा नये दीमक के अण्डों को एक स्थान से दूसरे स्थान को लेजाना इन्हीं मज़दूर दीमकों का काम है।

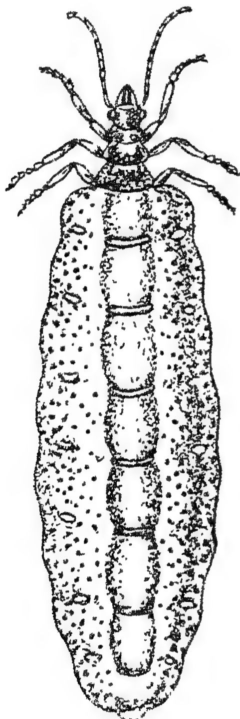
मज़दूर दीमकों के साथ साथ सभी बिलों में कुछ ऐसे भी दीमक होते हैं जिनका शिर भाग कुछ सांवला होता है। ये दीमक लम्बाई में मज़दूर दीमकों से थोड़े बड़े होते हैं। इनमें एक विशेषता और होती है कि इनके मुँह के काट खाने वाले हिस्से बड़े तेज़ होते हैं। इनके भी पंख नहीं होते। इन दीमकों को रक्षक दीमक कहते हैं। रक्षक दीमक मज़दूर दीमकों का कार्य निरीक्षण करते हैं। रक्षक दीमक अपने बिल में किसी बाहरी जीव जन्तु को नहीं घुसने देते। इतना ही नहीं वे बिल के अन्दर राज-गृह में विश्राम करने वाले राजा तथा रानी दीमक की शरीर-रक्षा भी करते हैं।

रक्षक और मज़दूर दीमकों के अतिरिक्त प्रत्येक बिल में एक राजा तथा एक रानी दीमक होती है। राजा और रानी दीमक मैथुन एवं वंश-वृद्धि को छोड़ अन्य कोई कार्य नहीं करते। राजा दीमक साधारण दीमकों से अधिक बड़ा होता है। इसे भी पंख नहीं होते।



चित्र ३
मज़दूर दीमक

रानी-दीमक बिल के सभी दीमकों में सर्वश्रेष्ठ होती है। इसके भी पंख नहीं होते। पंखहीन रानी दीमक का धड़ भाग, सिर और गले से कई गुना लम्बा चौड़ा होता है। धड़ जिसमें पेट का हिस्सा प्रधान होता है, सदैव अधिक फूला रहता है। क्योंकि इसमें असंख्य अण्डे भरे होते हैं। आपको आश्चर्य होगा कि रानी दीमक प्रति दिन लगभग ७००००–८०००० के लगभग अण्डे देती है, और यह क्रिया प्रति दिन होती रहती हैं। अब आप समझ सकते हैं कि रानी दीमक केवल अण्डे देने में ही कैसे जीवन व्यतीत करती है? आप ही सोचिये।



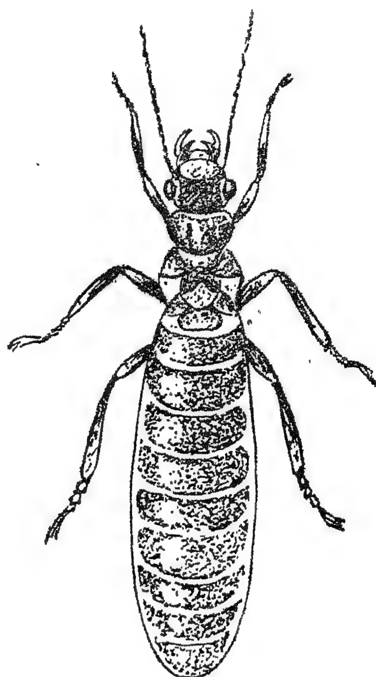
चित्र ४
रानी दीमक



चित्र ५
पंखधारी दीमक

मज़दूर, रक्षक, राजा तथा रानी दीमक के साथ साथ कुछ पंखधारी दीमक (चित्र-५) भी होते हैं। वर्षा की पहली कई झड़ियों में ये पंखधारी दीमक सायंकाल और रात्रि में प्रकाश की ओर झपटते हैं। इन्हीं को ही पंखी, पांखी या परवाना कहा जाता है। कुछ समय उड़ते रहने के पश्चात ये पंखी (दीमक) मैथुन करते एवं पंख झाड़कर भूमि में घुस कर वंश-वृद्धि आरम्भ करते हैं। पंखहीन राजा और रानी दीमक वर्षा ऋतु में उड़ने वाली पंखियों के ही परिवर्तित और बड़े रूप होते हैं।

दीमक के प्रत्येक बिल में जहाँ ६-१० लाख दीमक रहते हैं एक ऐसा स्थान होता है जिसे राज्य-गृह कहते हैं। इसी राज्य-गृह में राजा और रानी दीमक रहते हैं। रानी दीमक के नये अण्डों को मजदूर दीमक राज्य-गृह से सटे हुए एक उपवन में रखते जाते हैं। यह उपवन अण्डों के वृद्धि का स्थान होता है। इसमें फफूँदी अथवा भुकुड़ी उगी होती है जिसे अण्डों से बाहर निकलने वाले नये दीमक खाते हैं। राज्य गृह तथा उपवन में भी कुछ रक्षक दीमक होते हैं जिनका कार्य केवल रक्षा करना ही होता है।



चित्र ६
पंख झाड़ने के बाद वह दीमक जो नर या मादा दीमक में परिवर्तित हो सकता है।

दीमक के अण्डे बहुत छोटे छोटे और मुड़े होते हैं। गर्मी के दिनों में अण्डे ७-८ दिन में फूट जाते हैं। अण्डों से निकलने के पश्चात छोटे छोटे दीमक इधर उधर चलने फिरने लगते हैं। ये वस्तुओं को काट काट कर अपना पेट भरते हैं। ये छोटे दीमक बड़े होकर कुछ तो मज़दूर-दीमक, कुछ रक्षक-दीमक तथा कुछ पंखधारी, पंखी (पांखी या परवाना) के रूप में परिवर्त्तित हो जाते हैं और अपने कार्य में लग जाते हैं।

अपने इस आपसी समझौते के बल पर ये दीमक हमें कितनी हानि पहुँचाते हैं इसका अन्दाजा आप स्वयं लगायें। इनकी इस हानि को रोकने के लिए हमें निम्न उपायों का प्रयोग करना चाहिये :—

(१) खेत सींचते समय प्रत्येक बीघे खेत में जाने वाले पानी में १६-१७ सेर क्रूड आइल (चक्की का तेल) मिला देना चाहिये।

(२) दीमक के बिल अथवा घरों को ढूँढ़कर नष्ट कर देना चाहिये और उन पर मिट्टी का तेल छिड़क देना चाहिये। मिट्टी में मिट्टी का तेल मिलाकर उनके नष्ट किये हुए घरों में मिला देना भी अच्छा होगा।

(३) खेत में एक किनारे एक गड्ढा खोदकर उसमें कुछ गोबर और पत्ती मिला कर कुछ समय के लिये छोड़ दीजिये। इस गड्ढे में हर तरफ से दीमक दौड़ेंगे। यह जाल का कार्य करेगा। इसे अब किसी प्रकार से भी नष्ट कर दीजिये। इस पर आग लगा दें तो और अच्छा होगा।

(४) वर्षा ऋतु की पांखियों (पंखिओं) को नष्ट करने में कोई कसर न उठा रक्खें; क्योंकि ये ही पांखियाँ आगे चल कर राजा रानी दीमक का रूप धारण करके दीमकों की वंश-वृद्धि में योग देते हैं।

(५) खेत के छोटे बेहनों को तम्बाखू के काढ़े से सींचिये।

(६) खाद के रूप में खेतों में नीम की खली डालिये।

(७) गन्ने के टुकड़ों को बोने के पहिले फिनाइल, कोलतार (अलकतरा) अथवा चूने के पानी में रखिये।

टिड्डी पतंग

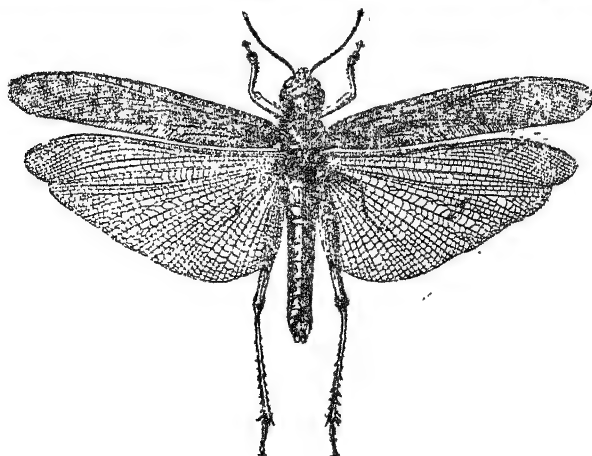
भारतीय कृषि को हानि पहुँचाने वाले कीट-पतंगों में टिड्डियों का एक विशेष स्थान है। लगभग प्रत्येक वर्ष भारत का कोई न कोई भाग इन टिड्डियों के आक्रमण से ग्रसित होता है। भूचाल, आँधी, तूफान तथा बज्रपात जैसे उपद्रवों में इसकी गणना की जाती है। इन पतंगों का उल्लेख वेदों और बाइबिल में भी मिलता है। अतः इससे अनुमान लगाना कितना सरल है कि मानव जाति के ये पतंग कितने पुराने शत्रु हैं। देखने में वे बहुत ही साधारण प्रतीत होते हैं, लेकिन इनके द्वारा किये जाने वाले विनाश किसी बाहरी आक्रमणकारी से कम नहीं होते। यहां उल्लेख करना उचित होगा कि ये पतंग भारत के बाहर विश्व के अन्य भागों में भी अपना आतंक जमाये रहते हैं। आज से २०-२५ वर्ष पूर्व हमारे देश की यह धारणा थी कि इन पतंगों के दल दूसरे देशों में विजय प्राप्त कर भारत पर आक्रमण करते हैं और साथ ही साथ इनके रोक थाम का कोई उपाय नहीं है। केवल ढोल बजाना अथवा थाली पीटना आदि ही सरल उपाय हैं। यही कारण था कि उनके आक्रमण से बचने के लिये कोई ठोस उपाय नहीं ढूंढ़ निकाले गये। परन्तु आज हमें वैज्ञानिकों का कृतज्ञ होना चाहिए जिनके अटूट प्रयत्न के फलस्वरूप हम यह ज्ञान प्राप्त कर सके कि ये पतंग भारत में किस प्रकार प्रकट होते हैं तथा इनके आक्रमण से बचने के हेतु कौन से उपाय प्रयोग में लाये जा सकते हैं। इस विषय पर विश्व के अन्य देशों के साथ हमारे देश में भी अधिक अनुसंधान कार्य चल रहा है। चूंकि इन पतंगों का आक्रमण एक अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्न है, इसलिये इस विषय पर विश्व के कोने कोने के वैज्ञानिक अधिक सतर्कता से कार्य कर रहे हैं। जहाँ कहीं भी इन पतंगों के भयभीत आक्रमण का डर रहता है वैज्ञानिक उसकी सूचना निकटवर्ती देशों को शीघ्रातिशीघ्र दे देते हैं।

पिछले कुछ वर्षों से भारत टिड्डियों के आक्रमण से मुक्त रहा। परन्तु सन् १९५० में सितम्बर से नवम्बर तक टिड्डियों के जत्थे बाहर से आये और भारत में अण्डे देना प्रारम्भ कर दिये। इसके अतिरिक्त सन् १९५१ में फरवरी से अप्रैल में भी बिलोचिस्तान और पाकिस्तान से दो तीनदल भारत में आ पहुँचे। ये दल लगातार

मध्यभारत और पूर्वी बंगाल तक पहुँच गये। वैसे तो इनपर पूरा नियन्त्रण रखा गया परन्तु अपने देश के कुछ अनभिज्ञ एवं धर्मान्ध व्यक्तियों की गलती के कारण इन पतंगों का एक दल बम्बई प्रांत में घुस पड़ा जिसके फलस्वरूप भारत को अधिक क्षति उठानी पड़ी। ईरान तथा पाकिस्तान में इनकी भारी संख्या में अण्डे पैदा हो जाने के कारण भारत को बराबर खतरा बना रहता है। भविष्य में भी इनके विनाशकारी आक्रमण की अधिक सम्भवना है। इसके लिये हमारी सरकार हर प्रकार से तैयार है।

यह इतना बड़ा कार्य है जिसे सरकार को छोड़कर अन्य कोई संस्था नहीं सम्हाल सकती। आज भी हमारी सरकार ने टिड्डियों के आक्रमण की रोक थाम के लिये अधिक उपाय कर रक्खा है। परन्तु यह भी बता देना आवश्यक है कि बिना जनता की सहायता से इस कार्य में सफलता मिलना असम्भव है। अतः टिड्डियों के इन आक्रमणों की रोक थाम के लिये अति आवश्यक है कि जनता का प्रत्येक सदस्य इन पतंग के जीवन इतिहास, इनके रूप रंग, अण्डे, बच्चे तथा इनके बढ़ने के सम्बन्ध में अधिक ज्ञान प्राप्त कर ले। बिना इनके जीवन इतिहास के ज्ञान के इन हानिकारक पतंगों पर विजय प्राप्त करना अथवा इनके आक्रमणों की रोक थाम करना एक समस्या बनी रह जायगी।

विश्व में अब तक केवल सात प्रकार की टिड्डियों का पता लगा है। जिनमें अकेले भारतवर्ष में तीन प्रकार की टिड्डियां पाई जाती हैं। ये टिड्डियां भारत में ही नही वरन् मध्यपूर्व तथा केन्द्रीय अफ्रीका में भी अधिक होती है। इन तीन प्रकार की टिड्डियों में सबसे अधिक विनाशकारी टिड्डी वह है जिसे मरुस्थली टिड्डी (डेजर्ट लोकस्ट)



चित्र ७— टिड्डी पतंग
मरुस्थली टिड्डी (शिस्टोसरका ग्रिगेरिया)

कहा जाता है। अंग्रजी भाषा में इस पतंग को शिस्टोसरका-ग्रिगेरिया कहते हैं। भारतवर्ष के अन्दर ये टिड्डियां सिंध तथा राजस्थान के मरुस्थलों में पाईजाती है। भारत के बाहर बिलोचिस्तान इत्यादि में भी ये उत्पन्न होती और बढ़ती रहती हैं।

प्रत्येक मरुस्थली टिड्डी लम्बाई में लगभग तीन इंच की होती है। यों तो इन टिड्डियों की शरीर रचना वर्षा ऋतु में पाये जाने वाले लम्बे हरे टिड्डों (फिनगों) के समान होती है। परन्तु इनका रंग तथा उड़ने की शक्ति साधरण टिड्डों से भिन्न होती है। छोटी अवस्था में ये टिड्डियाँ गुलाबी रंग की होती हैं। परन्तु प्रौढ़ावस्था को प्राप्त कर लेने पर नर तथा मादा-टिड्डी के रंग में भिन्नता आजाती है। नर-टिड्डियाँ विशेष पीले रंग की तथा मादा-टिड्डी कुछ भूरा-पीला मिश्रित होती है।

टिड्डियों के अण्डे देने की क्रिया भी बड़ी विचित्र है। साधारणतः टिड्डी इधर-उधर कड़ी भूमि में अण्डे नहीं देती, वरन् अण्डे देने के लिये वह पहले उचित स्थान चुनती है। नरम तथा कुछ बलुही मिट्टी में अण्डे देना मादा-टिड्डी अधिक पसंद करती है। पूर्ण परिपक्व अवस्था प्राप्त करने पर मैथुन के पश्चात मादा-टिड्डी कई बार में एक सप्ताह के भीतर लगभग ८०० अण्डे देती है। इनमें से परिस्थितियों के अधार पर केवल ५०० के लगभग अण्डे बच्चे के रूप में परिवर्त्तित हो पाते हैं और शेष तो नष्ट हो जाते हैं। अण्डे देने के लिए मादा टिड्डी अपने शरीर के अन्तिम नोकीले भाग से भूमि में ५-६ इंच गहिरे गड्ढे बनाती है। इन गड्ढों में वह ५० से १२० तक अण्डे एक झुण्ड में देकर अपनी राल से ढक देती है। राल सूखकर कड़ी हो जाती है। इसके फलस्वरूप बाहरी पानी अण्डों के गड्ढों में नहीं जा पाता। इस तरह से एक ही मादा टिड्डी कई बार गड्ढे बनाकर अण्डे देती है। खेत के मेंड़ों पर टिड्डी अधिक अण्डे देती है। यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो मालूम होगा कि कुछ दूर की जमीन सूजे (बोरा सिलने वाली बड़ी सुई) से चोंक दी गई है। बिना गड्ढे बनाए हुए टिड्डी अण्डे नहीं देती है। यदि ऐसा हुआ भी तो वे अण्डे बेकार होते हैं। सन् १६४३ में उत्तर प्रदेश में एक स्थान पर टिड्डियों ने पेड़ पर बैठ कर अण्डे गिराये परन्तु वे सब बेकार हो गये।

टिड्डियों के अण्डे बहुत छोटे छोटे, पीले तथा कुछ भूरे रंग के, चावल के समान होते हैं। गर्मी में ये अण्डे १२-१४ दिन में ही फूट जाते हैं। परन्तु जाड़े के दिनों में इनके फूटने में कम से कम २५-२६ दिन लग जाते हैं।

अण्डों के फूटने पर जो छोटे छोटे बच्चे बाहर निकलते हैं उन्हें (चित्र ८ के द–की भाँति) हापर्स कहा जाता है। हापर्स का अर्थ है कूदने अथवा फुदकने वाले। अण्डे से बाहर निकलने पर हापर्स दो तीन दिन तक इधर उधर फुद-कते हैं और फिर बहुत से एक साथ इकट्ठे होकर एक राय से एक ओर बढ़ते हैं। प्रत्येक हापर पंखहीन तथा गुलाबी रंग का होता है। इस समय इनमें मैथुन की शक्ति नहीं होती। ये हापर्स खाने में बड़े तेज होते हैं। जिधर बढ़ते हैं उस ओर सारी भूमि को तृणहीन कर देते हैं। हरी पत्तियाँ तो देखने को ही नहीं मिलतीं। इनका यह रूप केवल ५-६ सप्ताह का ही होता है। इसके बाद ही इनको पंख जम आते हैं और ये परिपक्व हो जाते हैं। इस अवस्था को प्राप्त कर लेने पर ही ये झुण्डों में इधर से उधर उड़ने लगते हैं। जैसा कि पहिले ही बताया जा चुका है प्रत्येक प्रौढ़-टिड्डी पतंग पंखधारी होता है और इसी अवस्था में ही मैथुन के योग्य होता है।

मरुस्थली टिड्डियाँ साधारणत: दिन में ही उड़ती हैं। वे रात्रि, एक जगह एकत्रित होकर, झाड़ियों में छिपकर अथवा पेड़ों पर बैठकर, बिताती हैं। अरुणोदय के पहले तथा सूर्यास्त के पश्चात् इनकी गति मंद पड़ जाती है। अण्डे देने के समय भी इनकी यही दशा होती है। उस समय ये अधिक कूद फांद नहीं कर पातीं। दिन में अधिक तेज हवा के साथ ही टिड्डियाँ उड़ा करती हैं।

ये मरुस्थली टिड्डियां प्याज, नीम, कैनातथा मदार इत्यादि की पत्तियों को छोड़कर रास्ते में जो कुछ भी हरा समान मिलता है सब पर हमला करती तथा उन्हें खाती हुई आगे बढ़ती हैं। इनके आक्रमण के फलस्वरूप बेला, चमेली, मिर्च, तरबूज, खरबूजा, गोभी, रूई, ज्वार, बाजरा, धान, मकाई तथा भिन्डी इत्यादि की पत्तियाँ देखने को नहीं मिलतीं। जिस समय इनका आक्रमण होता है आकाश इनसे बादलों की भाँति ढक जाता है। इनके भूमि पर उतरते ही लहलहाते खेत कुछ ही मिनटों में उजाड़ हो जाते हैं।

इनके इन हानियों से बचने के लिये हमें सामूहिकरूप से आवश्यक उपाय करने चाहिये। बहुधा हम अपनी अनभिज्ञता के कारण अधिक सफल नहीं हो पाते। उसका प्रधान कारण यह है कि आक्रमण वाले क्षेत्र में जिनका खेत होता है वे ही लोग कुछ इधर उधर करते हैं, परन्तु गाँवके अन्य लोग खड़े तमाशा देखते रहते हैं। इनके आक्रमण होने पर गांव के सभी स्त्री, पुरुष, बूढ़े बच्चों का यह राष्ट्रीय कर्त्तव्य है कि जो भी उपाय काम में लाये जाँय वह सामूहिकरूप में हों क्योंकि ये पतंग संख्या में इतने अधिक होते हैं कि किसी गांव अथवा तहसील के इने गिने लोगों द्वारा यह कार्य पूर्ण रूप से सफल नहीं हो सकता। इसमें तो उस क्षेत्र के सभी सदस्यों के सहकार्य की आवश्यकता होती है।

टिड्डियों के आक्रमण से बचने के लिए निम्न उपायों से अधिक सफलता प्राप्त की जा सकती है :—

(१) टिड्डियों को आकाश में देखते ही घर का सब काम काज छोड़ कर आप सपरिवार चैतन्य हो जाइये तथा गांव के सभी लोगों को सचेतकर दीजिये। भूमि पर उतरते ही उन्हें खपच्चियों से पीटना प्रारम्भ कर दीजिये। बड़े बड़े बांसों के किनारों पर आग लगा कर टिड्डियों को जला दीजिये।

(२) सायंकाल सूर्यास्त के समय अथवा सूर्योदय के पहले जब उनमें कुछ गति नहीं होती यदि आप उन पर हमला करें तो अधिक सफलता मिलेगी। इसके अतिरिक्त दिन में भी अण्डे देते समय अथवा मैथुन करते समय जब ये टिड्डियाँ भूमिपर टिकी हों खपच्चियों से नष्ट करें।

(३) जैसा की ऊपर बताया गया है हापर्स (फुदकने वाली टिड्डियां) सायंकाल झाड़ियों के पास झुन्डों में एकत्रित होते हैं। उन्हें भी बांसों में आग लगाकर भस्म कर डालिये। उनके ऊपर खड़ कतवार एकत्रित कर जलादें। यदि गन्ने की पत्ती मिलें तो उसे ही उनपर फेंककर आग लगा दीजिये।

(४) हापर्स को खदेड़कर एक गड्ढे में गिरा दें और उन्हें वहीं पाट दें अथवा पत्तियाँ बटोर कर उनपर आग लगा दें।

आक्रमण के साथ ही साथ टिड्डियाँ मैथुन करके खेतों के मेड़ों पर अण्डे देती जाती हैं। अतः—

(५) मेड़ों का ध्यानपूर्वक निरीक्षण करके छोटे छोटे छेदों को ढूँढ़ निकालिये। अण्डों को ढूँढ़ने के लिये प्रत्येक ढूँढ़े हुये छेद को ७-८ इञ्च से कम न खोदिये।

(६) यदि हो सके तो जहाँ अण्डे वाले गड्ढों की सम्भावना हो उस स्थान को पानी से डुबो दीजिये। १-२ दिन पानी टिके रह जाने पर सभी अण्डे मर जायेंगे।

ऊपर की क्रियाओं के करने से भविष्य में टिड्डियों का भय कम हो जायगा।

टिड्डियों के आक्रमण को राष्ट्रीय कठिनाई समझते हुए हमारी सरकार ने अधिक प्रबन्ध कर रक्खा है। प्रत्येक जिले में एक अधिकारी की देख रेख में एक संस्था खोली गई है जिसके अधिकारी लोग टिड्डियों के आक्रमण की पूरी जानकारी रखते हैं। अतः इनके हमले की सूचना आपको अपने निकटवर्ती सरकारी अधिकारी को देनी चाहिये। आपकी सूचना मिलते ही शीघ्रातिशीघ्र कार्यवाही प्रारम्भ कर दी जायगी। ये अधिकारी उन्हीं उपायों को अपनायेंगे जिन्हें मैंने आपको पहले बताया है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि सभी कार्य सरकारी अधिकारी ही करेंगे। आपको उनके द्वारा उपाय प्रयोग किये जाने के लिये सभी प्रकार की सहायता करनी चाहिये। हम मानते हैं कि टिड्डियों के आक्रमण की रोक थाम एक सरकारी मामला है, लेकिन गांव के सभी लोगों को इस कार्य में तन, मन, धन से सहायता करनी चाहिये। पूरे तहसील में गड्ढे खोदने, टिड्डियों को मारने तथा अण्डों को ढूंढ़ने के लिये किसी दूसरे जिले से तो काम करने वालों को नहीं बुलाया जा सकता। घर में आग लगने पर मकान मालिक, टोला पड़ोसी तथा सरकारी कार्यकर्त्ता सभी काम पर जुटते हैं। टिड्डियों का अक्रमण भी हमारे लिये उसी प्रकार की एक समस्या है।

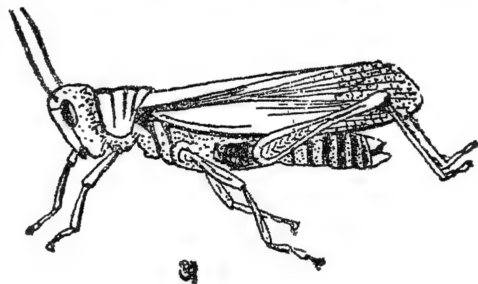
पौधों का महान शत्रु टिड्डा या फिनगा

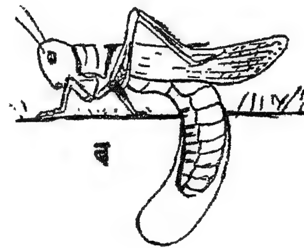
इस पतंग से प्रायः सभी परिचित होंगे। इसके और भी कई नाम हैं, जिनमें फुदुका, फांगी, बोट, बोटी तथा कटुआ मुख्य हैं। वर्षा प्रारम्भ होते ही ये हमारे प्रकाश के समीप तथा खेतों में उछल कूद आरम्भ कर देते हैं। बच्चों के लिये तो ये खिलौना होते हैं। परन्तु खिलवाड़ ही इनके जीवन की मुख्य विशेषता नहीं होती। ये तो कृषि के महान विनाशकारी पतंगों में से हैं। खरीफ़ फ़सल में ज्वार, बाजरा और अरहर इत्यादि के पौधों की प्रथम बाढ़ पर इनका हानिकारक आक्रमण प्रारम्भ हो जाता है। ज्योंही बीजों से पत्तियां फूटकर कुछ बड़ी हुई कि इनकी कटाई हम अपनी आंखों देख सकते हैं। इन्हीं के आक्रमण के फलस्वरूप यह कहा जाता है कि अमुक खेत में "कटुआ लग गये हैं।" इनके आक्रमण के कारण कभी कभी खेत के आधे से अधिक पौधे समाप्त हो जाते हैं।

प्रत्येक टिड्डा (चित्र ८ अ) अपनी पूर्ण अवस्था प्राप्त कर लेने पर १॥ से २ इञ्च लम्बा, हल्का पीला-हरा मिश्रित होता है। इसकी गर्दन पर दायें से बायें तीन

काली पट्टियां होती हैं। दोनों नेत्र अधिक चमकीले और बड़े होते हैं। इनमें एक विशेषता और है कि साधारण टिड्डियों की अपेक्षा इनकी मूछें छोटी होती हैं। जैसा कि पहले ही वर्णन किया जा चुका है ये टिड्डे क्वार-कार्तिक (सितम्बर-अक्टूबर) तक बराबर खाते चले जाते हैं। इसी समय ये पतंग अधिक शक्तिवान होने के कारण वंश वृद्धि में योग देना आरम्भ कर देते हैं। मैथुन के पश्चात् मादा पतंग भूमि में स्थान बनाकर उसके भीतर अण्डे देती है। एक स्थान में ३५-४० अण्डे के लगभग होते हैं। मादा पतंग अण्डे देने के पहले अपने शरीर के पिछले भाग से भूमि में गड्ढा खोदती है। गड्ढा खोदने की क्रिया बड़ी ही विचित्र होती है। गड्ढा खोदते समय यह अपने शरीर के पिछले भाग को बर्मे की तरह दायें बायें घूमाती है। इस रीति से उसे गड्ढा खोदने में (चित्र-८ ब) आसानी होती है। गड्ढा खोद लेने के पश्चात् मादा पतंग उस गड्ढे में अपने शरीर के बाहर एक राल पदार्थ निकालती है जिसके कारण गड्ढे की दीवाल चिकनी और पालिशदार हो जाती है।

अण्डे (चित्र-८ स) जाड़े तथा पूरी गर्मी की ऋतु तक भूमि में पड़े रहते हैं। वर्षा ऋतु के प्रारम्भ में अथवा इसके पहले ही अण्डे फूटते हैं और उनके बाहर फुदकने वाले छोटे छोटे बिना पंखवाले पतंग (चित्र-८ द) निकलते है। इन्हें "कीट-शिशु" "हापर्स" या "निम्फ" कहा जाता है। हापर्स माने फुदकने वाले फुदक्के जो प्रौढ़ पतंगों से अधिक उछलते कूदते हैं। जिस समय ये कीट-शिशु उत्पन्न होते हैं अपना आक्रमण निकम्मी घासों अथवा यदि वर्षा ऋतु हुई तो ज्वार, बाजरा, धान, अरहर, मूंग तथा उर्द इत्यादि के छोटे छोटे कोमल तनों पर, करते हैं। ये कीट-शिशु अपने प्रौढ़ पतंगों के साथ ही साथ आक्रमण करते हैं। प्रौढ़ रूप धारण करने के पश्चात् २०-२५ दिन के भीतर ही ये पतंग वंश वृद्धि में योग देना आरम्भ कर देते हैं। नये दिये गये अण्डे फिर जून (जेष्ठ) तक पृथ्वी के भीतर घुसे रहते हैं और वर्षा की पहली झड़ी के पश्चात् ही ये फिर दिखाई पड़ते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रत्येक वर्ष में अन्य पतंगों की अपेक्षा इस पतंग की केवल एक ही पीढ़ी बढ़ती है।









चित्र ८

अ—टिड्डा, ब—मादा टिड्डा अण्डे देती हुई स—एक छेद में कई अण्डे, द–टिड्डे का बच्चा

इस पतंग के जीवन-इतिहास से आपको ज्ञात हो गया होगा कि बीच में यह पतंग सुण्डे का रूप नहीं धारण करता। इतना परिवर्त्तन आपको अवश्य मिलेगा कि जो कीट-शिशु पहले अण्डे से बाहर निकलते हैं उनको पंख नहीं होते। वे ज्यों ज्यों बढ़ते हैं उनके पंख भी बढ़ते जाते हैं।

उनके इस आक्रमण से बचने के लिये हम निम्न उपायों का प्रयोग कर सकते हैं—

(१) इनको पकड़ कर तेल और जल के मिश्रण में नष्ट कर देना चाहिये। इस काम में चक्की या मोटर का तेल या मिट्टी का तेल प्रयोग किया जा सकता है।

(२) जाड़ा आरम्भ होने के पहले टिड्डे खेत में अण्डे देते हैं। अतः जाड़े से बरसात होने के पहिले तक खेत में कई बार खूब गहरी जुताई कर दीजिये। इससे सभी अण्डे मर जायेंगे।

(३) ये टिड्डे चालाक भी अधिक होते हैं। अतः ये खेतों की मेंड़ अथवा पानी आने वाली खेत की नालियों के अगल बगल की दीवालों में अण्डे देते हैं। यदि प्रति वर्ष मेड़ तोड़ कर नये बनाये जायं और नालियां नष्ट कर के फिर बनाई जांय तो इस क्रिया द्वारा अधिकांश टिड्डों के अण्डे नष्ट हो जायेंगे।

(४) खेतों के आस पास और अगल बगल की पूरी सफ़ाई रखिये। किसी प्रकार की घास न उगने पावे। इससे इन पतंगों को विकास का अवसर न मिलेगा।

(५) यदि आपको इन पतंगों का विनाश किसी रसायनिक पदार्थ से करना है निम्न उपाय काम में लाइये:—

१० सेर पानी, २५ सेर धान की भूसी, १ सेर सोडियम फ्लाउसिलिकेट तथा ३ सेर गुड़ का प्रबन्ध कीजिये। अब थोड़ा सा जल लेकर उसमें पूरा गुड़ घोल दीजिये। बने हुए गुड़ के रस से ही पूरी भूसी सान लीजिये। इस सने हुए पदार्थ में "सोडियम फ्लाउसिलिकेट" मिला दीजिये। इस प्रकार तैयार किया हुआ मिश्रण न तो बहुत सूखा और न तो कठिन हो और न अधिक ढीला ही हो। इसको भुरभुरा बनाइये। फिर इस मिश्रण को सवेरे, बड़े तड़के, खेत में डाल दीजिये। इस प्रयोग से अधिकांश पतंग समाप्त हो जायँगे। एक बीघे के लिये १२-१४-सेर मिश्रण पर्याप्त होगा। सोडियम फ्लाउसिलिकेट चांदमार्का खाद बेचने वाली शहर की दुकानों से मिल सकती है। सोडियम फ़लाउसिलिकेट विष है। अतः इसका प्रयोग बड़ी सावधानी से कीजिये।

खरीफ़ फ़सल के अधिकांश पौधों का शत्रु "भालू सुण्डा"

यों तो अलग अलग पौधों को अलग अलग कीट पतंग हानि पहुँचाते हैं, लेकिन भालू नाम का सुण्डा जिसके शरीर पर असंख्य बाल होते हैं तथा जो भूरा-हल्का मट-मैले रंग का होता है खरीफ़ फसल में ज्वार, बाजरा, मकाई, उर्द, मूंग, मूँगफली, कपास, ज्वार, सनइ, तिल, कुम्हड़ा, लौकी, ककड़ी और खीरा इत्यादि के पौधों पर आक्रमण करके उनके कोमल और नये निकलते हुए पौधों को काटकर गिरा देता है। इसे भालू सुण्डा इसलिये कहा जाता है क्योंकि भालू की भाँति इसकी देह पर भी

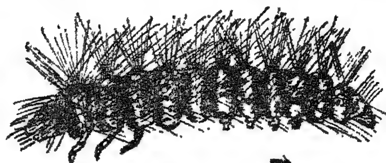
बाल होते हैं। इसके कई और नाम हैं। उत्तरी भारत में इन्हें कमरी, कुतरा, कन्तरा और किमिल्ला तथा दक्षिणी भारत में कुम्बलीपूची नाम से पुकारा जाता है। इन सुण्डों का आक्रमण केवल उत्तर प्रदेश में नहीं बल्कि पंजाब, दिल्ली, बिहार और मध्य भारत में भी होता है। दक्षिणी भारत में इसकी एक दूसरी जाति पाई जाती है। जिससे मद्रास और मैसूर की फ़सलों को अधिक हानि उठानी पड़ती है।

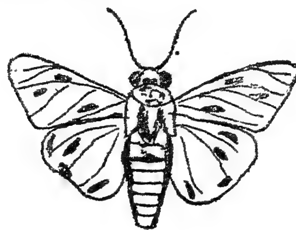
असाढ़ (जून-जुलाई) महीने में, वर्षा की एक दो झड़ी के बाद, भालू सुण्डे के पतंग अपना कार्य प्रारम्भ कर देते हैं। इस सुण्डे का प्रौढ़ पतंग मटमैले पीले रंग का होता है जिसके पंखों के ऊपरी सतह पर काले काले धब्बे होते हैं। इसके शरीर का निचला भाग कुछ लाल होता है। लम्बाई इसकी ३/४ इंच से १ इंच तक तथा पंखों सहित चौड़ाई १½ इंच तक होती है। दिन में ये पतंग सूखी पत्तियों के नीचे अथवा टहनियों से चिपके रहते हैं, परन्तु रात के प्रकाश के आकर्षण से बाहर निकलते हैं। ये पतंग बहुत शीघ्र परिपक्व हो जाते हैं। ये रात्रि के समय ही मैथुन करते हैं जिसके फलस्वरूप मादा-पतंग पत्तियों की निचली सतह पर (रात्रि में ही) झुण्डों में कई सौ अण्डे देती है। कहीं कहीं तो यह भी देखा गया है कि इनके अण्डे एक हजार से ऊपर हो जाते हैं। मैथुन के पश्चात मादा पतंग का उदर भाग अण्डों के कारण बहुत ही भारी मालूम पड़ता है। उन्हें अण्डों को अपने शरीर के बाहर निकालने की बड़ी चिंता सी लगी रहती है। अतः यही कारण है कि वे भूमि पर भी अण्डे दे देती हैं। चूंकि यह मादा पतंग पत्ती के भीतर नहीं वरन् पत्ती पर ही अण्डे देती है इसलिये इसके अण्डे दूरसे ही पोस्ते के दाने के समान चमकते रहते हैं।

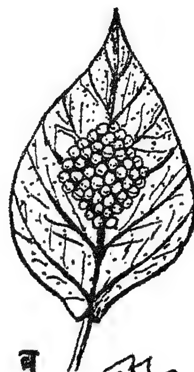
इसके अण्डे एक हफ्ते के भीतर (४-५ दिन में) फूट जाते हैं। अण्डों के फूटने पर उनसे सुण्डे बाहर निकलते हैं। इस समय इनकी देह पर बहुत कम बाल होते हैं। अण्डों से बाहर निकलने पर बहुत से छोटे छोटे सुण्डे पत्तियों की निचली सतह पर एक साथ एकत्रित होकर अपना पेट भरते हैं, परन्तु शरीर में शक्ति आते ही वे अलग होकर भोजन की ताक में इधर से उधर दौड़ने लगते हैं। वे जैसे जैसे बढ़ते हैं उनकी देह पर अधिक बाल होने लगते हैं। इस समय यह भी जान लेना बहुत ही आवश्यक है कि छोटी अवस्था में तो ये सुण्डे पौधों की कोमल पत्तियाँ ही काटते हैं लेकिन जैसे जैसे बड़े होते हैं तनों को काटना आरम्भ कर देते हैं। बड़े हो जाने पर इनमें रेंगने की भी शक्ति आ जाती है। इसी अवस्था में ये सुण्डे घरों और चौपालों में घुसने लगते हैं। इस समय इनका रूप बड़ा ही घृणास्पद होता है। लकड़ी से भागने पर सुण्डा गिर कर अँगूठी की तरह गोल हो जाता है और मालूम ऐसा होता है कि वह मर गया। आपको धोखा हो जाता है। अधिक बड़े हो जाने पर ही किसान इन सुण्डों को पहचान और देख पाते हैं।

सुण्डे १४-१५ दिन में बहुत बड़े हो जाते हैं और इसी समय प्युपा बनते हैं। प्युपा बनने के २०-२२ घण्टे पहिले इनका रङ्ग हल्का हो जाता है और बाल कुछ कम हो जाते हैं। प्युपा बनने के पहिले प्रत्येक सुण्डा अपने चारों ओर सिल्क की, जो उसके मुँह से निकलता है, एक जाल बनाता है। फिर इसी जाल में प्रवेश करके सुण्डा प्युपा बनना प्रारम्भ करता है। प्युपा का रङ्ग गाढ़ा कत्थई तथा वह एक ओर

गाल और दूसरी ओर नोकीला होता है। लेकिन यह भी जान लेना चाहिये कि सुण्डे पौधे से भूमि पर गिरकर मिट्टी में या पत्तियों में छिपकर प्युपा रूप धारण करते हैं।







चित्र ९—भालू सुण्डा

अ—पतंग, ब—पत्ती पर अण्डे, और स—भालू सुण्डा

७ से ९ दिन के भीतर प्युपा की खोल फटती है और उनमें से पतंग बाहर निकलते हैं जो अपने जन्मदाता पुर्वजों के रंग रूप के ही होते हैं। अधिक सर्दी के दिनों में सुण्डे भूमि पर गिर कर सुप्तावस्था धारण करते हैं और पत्तियों, घास-कूड़ा अथवा मिट्टी में घुस कर सर्दी के दिन काटते हैं। इसके वाद मानसून की दूसरी ऋतु आते ही ये सुण्डे शीघ्र ही प्युपा बनते हैं। वर्षा की दो तीन झड़ी के बाद जब वायुमण्डल में काफी नमी आ जाती है, भूमि में छिपे प्युपों से प्रौढ़ पतंग बाहर निकलते हैं। वे कुछ ही दिनों में मैथुन के पश्चात अण्डे देने लगते हैं। इस प्रकार इनकी जीवन वृत्त चलती रहती है। इनकी इस हानि से बचने के लिए निम्न कई सरल उपाय हैं:—

(१) रबी फसल काट लेने के बाद ही खेत की जुताई कर देनी चाहिये। इससे भूमि में छिपे प्युपा ऊपर आकर तेज गर्मी में मर जायँगे।

(२) भालू (बालदार सुण्डे) को पकड़कर तेल और पानी से भरे बर्त्तन में डाल कर नष्ट कर दीजिये।

(३) खेत के चारों ओर ८ इंच गहरी और १० इंच चौड़ी नाली बना देने से खेत के बाहर या खेत के अन्दर आने वाले सुण्डे उसमें गिर कर फँस जायँगे। उनमें इतनी शक्ति नहीं होती कि वे फिर बाहर निकल पावें।

(४) इनके अण्डे पत्तियों की निचली सतह पर से सरलतापूर्वक पकड़ कर नष्ट किये जा सकते हैं।

(५) मानसून प्रारम्भ होते ही भालू-सूण्डे के पतंग रात्रि में उड़ने लगते हैं। अतः इनके पकड़ने के लिये प्रकाश-जाल ❀ का प्रबन्ध कीजिये।

(६) सुण्डों के विनाश के लिये प्रति बीघा ४ से ७ सेर गैमेक्सेन डी.०२५ छोड़िकिये।

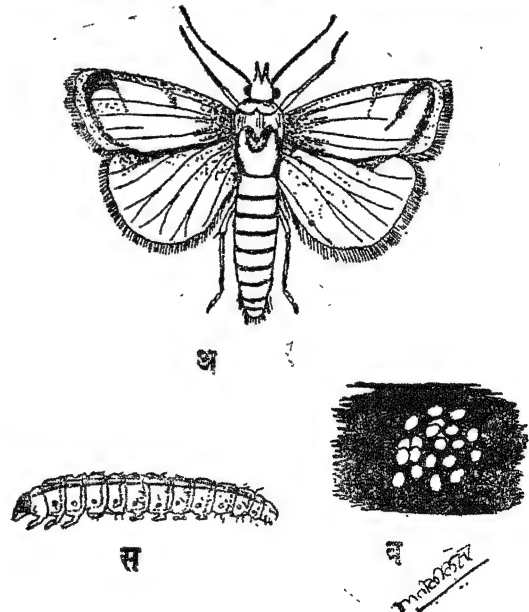
❀ प्रकाश-जाल का वर्णन अध्याय ३ में देखिये।

मकाई, ज्वार तथा बाजरे का सुन्डा

गन्ने के सुण्डों की भाँति ज्वार, बाजरा और मकाई पर एक दूसरा सुण्डा आक्रमण करता है। इसे कंसुआ भी कहते हैं। भारतवर्ष में मकाई, ज्वार तथा बाजरा जहाँ कहीं बोया जाता है यह सुण्डा सर्वत्र हानि पहुँचाता है। भारत के बाहर, कोरिया, जापान तथा श्याम और ब्रह्मा में भी इनकी कमी नहीं है। पौधों पर पहुँचने पर ये सुण्डे पहिले तो पत्तियाँ खाते हैं और इसके पश्चात्, जब इनमें कुछ शक्ति आ जाती है, वे तने में छेद बना कर उसके भीतर प्रवेश कर जाते हैं। इनके इस विनाशकारी आक्रमण से पृथ्वी से पौधों में पोषक तत्वों का ऊपर की ओर पहुँचना और फिर सब अंगों में वितरित होना बन्द हो जाता है। फलस्वरूप पौधों की बाढ़ रुक जाती है। यदि इन सुण्डों का आक्रमण नये निकले हुए पौधे पर होता है तो वे सूख कर धराशायी हो जाते हैं। परन्तु पुराने बढ़े हुए पौधे गिरते तो नहीं निकम्मे अवश्य हो जाते हैं। पौधों के बीच का भाग सड़ जाता है। इस सड़े हुए भाग को मृतक-केन्द्र कहते हैं।

यों तो इस सुण्डे के प्रौढ़ पतंग वर्ष भर इधर उधर विचरण करते और अण्डे देते रहते हैं परन्तु मकाई, ज्वार, बाजरा के पौधों पर ये पतंग श्रावण के प्रारम्भ (जुलाई-अगस्त) में ही अण्डे देते हैं। फिर भी यह कोई निश्चित समय नहीं है। इनके अण्डे देने का समय घट बढ़कर इन पौधों की उपस्थित पर निर्भर होता है। जिस स्थान पर असाढ़-श्रावण (जुलाई-अगस्त) के पहले ही ये पौधे मिलते हैं वहाँ उसी समय आक्रमण प्रारम्भ हो जाता है।

इस सुण्डे का प्रौढ़ पतंग फैले पंखों सहित एक इंच या इससे कुछ कम चौड़ा और भूसे के रङ्ग का होता है। पतंग दिनमें तो सूखी पत्तियों और पत्थर के नीचे छिपे रहते हैं लेकिन रात्रि को बाहर निकलते हैं। मादा पतंग मैथुन के पश्चात् पत्तियों की निचली सतह पर पीले रङ्ग के अण्डे (ब) देती है। ये अण्डे एक समूह में एक दूसरे के नीचे दिखाई पड़ते हैं। एक एक समूह में १५ से ४० अण्डे तक होते हैं। अण्डे कुछ लम्बे और कुछ हल्का मखनियां रंग लिए हुए होते हैं। फटने के समय तक इनका



चित्र १०—मकाई, ज्वार और बाजरे का पतंग शत्रु
अ—पतंग ब—अण्डे स—सुण्डा

रंग सांवला हो जाता है। प्रत्येक अण्डा ४-६ दिन के अन्दर फूटता है। अण्डों के फूटने पर जो सुण्डे बाहर निकलते हैं वे पहिले कोमल पत्तियों को खाते हैं। कभी कभी एक साथ ही बहुत से सुण्डे पौधे के सर्वनाश में जुटे हुए दिखाई पड़ते हैं। कुछ शक्ति प्राप्त करने के पश्चात् सुण्डे तने में छेद बनाकर प्रवेश कर जाते हैं और वहीं नीचे से ऊपर चल कर तनों के मध्य भाग के तत्व को खाते रहते हैं। इसके कारण तनों में मृतक-केन्द्र उत्पन्न हो जाते हैं।

सम्पूर्ण भोजन प्राप्त करके सुण्डे १५-२५ दिन में अधिक शक्तिशाली हो जाते हैं। वे लगभग एक इंच लम्बे कुछ भूरा मिश्रित पीले रंग के दिखाई पड़ते हैं। इनका शिर काला तथा शरीर पर आगे से पीछे चार धारियां दिखाई पड़ती हैं। इस रूप में सुण्डा पूरी अवस्था का होता है। इस प्रकार पूरा भोजन प्राप्त करने के पश्चात् सुण्डे उसी मृतक केन्द्र के भीतर प्युपा बन जाते हैं।

इस पतंग का प्युपा रूप लगभग ६-७ दिन का होता है। लेकिन नर और मादा प्युपा में भिन्नता होती है। नर प्युपा मादा प्युपा से छोटा होता है। प्युपा की खोल फटने पर अपने पूर्वजों के रूप रङ्ग का एक पतंग उसके बाहर निकलता है। यह है इस पतंग का पूरा जीवन-इतिहास। जलवायु और नमी के आधार पर पतंगों का जीवित रहना निर्भर होता है। फिर भी ये पतंग एक सप्ताह तक जीवित रहते हैं। लेकिन नर पतंग से मादा पतंग अधिक समय तक जीवित रहती है। प्रत्येक वंश लगभग एक माह में उत्पन्न होता है। इस प्रकार वर्ष में कई पीढ़ियां उत्पन्न हो जाती हैं।

इनकी इस हानि से बचने के लिए निम्न उपाय हैं:—

(१) फसल की कटाई हो जाने के पश्चात् ही खेत का कूड़ा करकट बटोर कर जला दीजिये। इसमें छिपे हुए सुण्डे नष्ट हो जायेंगे और इनकी अगली पीढ़ी समाप्त हो जायगी।

(२) फसल काटने तथा कूड़ा करकट जलाने के बाद खेत की गहरी जुताई कर दीजिये। इससे भूमि में छिपे हुए सुण्डे बाहर निकल कर नष्ट हो जायेंगे इन्हें प्रायः पक्षीगण समाप्त कर देते हैं।

(३) उन पौधों को भी समूल नष्ट कीजिये। जिनपर इन पतंगों का आक्रमण हुआ हो।

(४) खेत में पानी न लगने दीजिये।

(५) ये पतंग रात्रि में प्रकाश की ओर आकर्षित होते हैं। अतः रात्रि के समय उन्हें प्रकाश-जाल से नष्ट कीजिये। प्रकाश-जाल का वर्णन अध्याय तीन में पढ़िये।

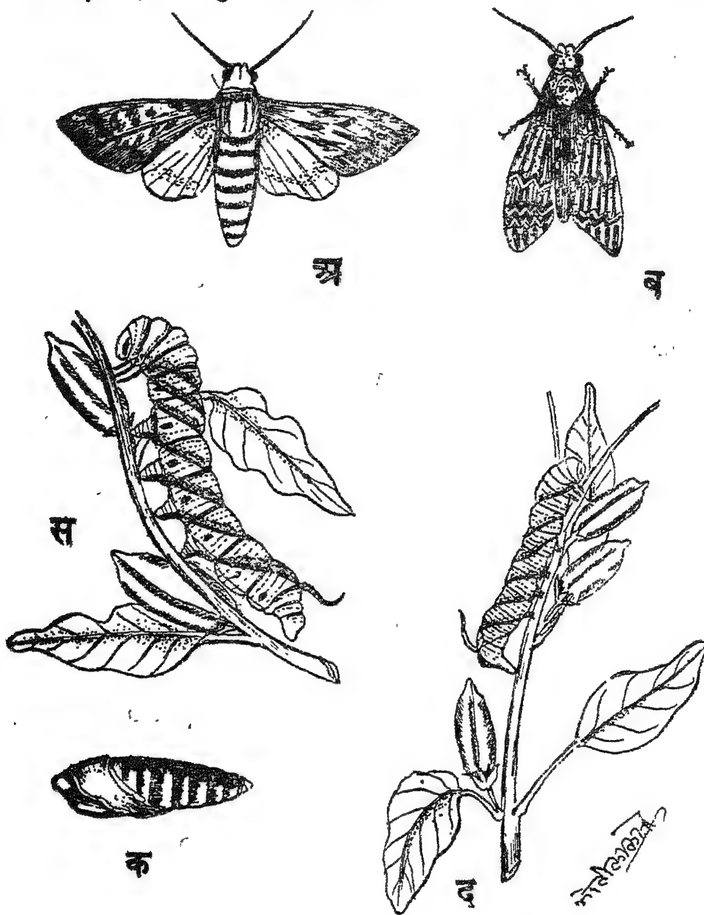
(६) सुण्डों के विनाश के लिए प्रति बीघे में ४ से ७ सेर गैमेक्सन डी.०२५ छिड़किये।

तिल का सींगधारी सुण्डा

साधारण सुण्डों की अपेक्षा सींगधारी सुण्डा अधिक बड़ा तथा मांसयुक्त होता है। इसकी लम्बाई लगभग ३॥ इंच, चौड़ाई ३/४ इंच तथा रङ्ग हरा होता है। इसकी शरीर रचना में सबसे बड़ी विशेषता है कि इसके शरीर के अन्तिम भाग पर एक पतली सी सींग होती है जो ऊपर की ओर उठकर मुड़ी रहती है। सुण्डे के शरीर

के दोनों ओर ऊपर से नीचे संख्या में सात चमकती हुई पीली धारियां होती हैं। शरीर के ऊपरी भाग पर गाढ़े नीले छोटे-छोटे धब्बे होते हैं। कभी-कभी यह सुण्डा अपने अगले पांव पर खड़ा होकर अपनी गर्दन ऊपर उठा लेता है।

इस सुण्डे का आक्रमण तिल के अतिरिक्त सेम, बोड़ा (बरबट्टा) तथा भांटे (बैंगन) पर भी होता है। यह सुण्डा पत्तियों पर आक्रमण करके उन्हें कुतर डालता है।



चित्र ११—तिल का सींगधारी सुण्डा
अ—सींगधारी सुण्डे का पतंग ब—बैठा हुआ पतंग
स, द—तिल की पत्ती और ढोंढ़ को खाते हुये सुण्डे, क—प्युपा

पत्तियां मुरझा जाती हैं। अतः पौधे की वृद्धि रुक जाती है और पैदावार कम होती है। इस सुण्डे का प्रौढ़ पतंग बहुत बड़ा और मोटा होता है। फैले पंखों सहित उसकी चौड़ाई ४ से ५ इञ्च की होती है। इसका रंग भूरा-कत्थई होता है। पिछले पंखों के जोड़े कम कत्थई और भूरे तथा कुछ पीलापन लिए हुये होते हैं। इन पंखों पर काली गाढ़ी धारियाँ भी दिखाई पड़ती हैं। अनुकूल परिस्थित में मादा-पतंग मैथुन के पश्चात् पत्तियों पर अलग अलग कुछ गोल अण्डे देती है। ये अण्डे ६-७

दिन में फूटते हैं और उनसे जो सुण्डे बाहर निकलते हैं वे १५-२० दिन तक भोजन करने के पश्चात् अधिक शक्तिशाली हो जाते हैं। इसी समय ये भूमि पर गिरकर ५-७ इंच नीचे गड्ढा बनाकर प्युपारूप धारण करके पड़े रहते हैं। इस रूप में ये सुण्डे जलवायु के अनुसार आधे माह से सात माह तक योंही समय काटते हैं। यदि गर्मी रही तो २-४ सप्ताह में ही प्युपा की खोल फट जाती है। अधिक सर्दी में, जैसा कि पहले बताया गया है, प्युपा ६-७ मास तक इसी ही अवस्था में पड़ा रहता है। कुछ भी हो खोल फटते ही प्रौढ़ पतंग अपने जन्मदाता पूर्वजों के रंग-रूप का बाहर निकलता है।

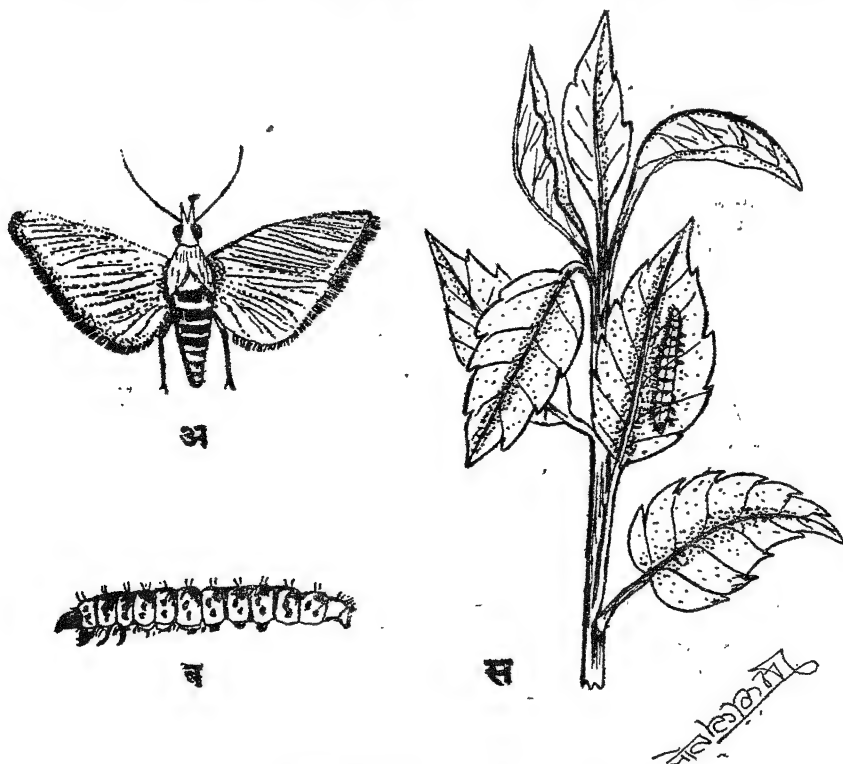
इसके इस हानि से बचने के लिये निम्न उपाय हैं:—

(१) पत्तियों पर से अण्डे बीन बटोर कर एक स्थान पर जला दीजिये।

(२) सुण्डों को भी पकड़ कर अग्नि द्वारा ही नष्ट कीजिये।

तिल का पतंग शत्रु

तिल पौधे का पतंग शत्रु जो सुण्डे के रूप में होता है तिल की पत्तियों, फलों



चित्र १२—तिल का पतंग शत्रु
अ—प्रौढ पतंग ब—सुण्डा स—पत्तियों पर सुण्डों का आक्रमण

तथा तिल के निकलते हुए नये कल्लों पर आक्रमण करके उनको नष्ट कर देता है।

ऊपरी हरा तत्व ही खाते हैं, परन्तु बड़े होकर ये सुण्डे तनों और तिल की ढोढ़ों पर भी आक्रमण करते हैं ।पहिले तो ये सुण्डे हल्का पीलापन लिये हुए सफेद रंग के होते है, परन्तु धीरे-धीरे इनका रंग हरा हो जाता है। इनके शरीर पर इधर उधर काले धब्बे दिखाई पड़ते हैं।

इस सुण्डे का प्रौढ़ पतंग (अ) हल्के मखनियां रंग का, पंखों सहित $\frac{3}{4}$ इंच चौड़ा तथा कुछ कम लम्बा होता है। अपनी पूर्ण अवस्था को प्राप्त कर मादा-पतंग मैथुन के पश्चात् श्रावण (अगस्त) में रात्रि के समय तिल के पत्तियों पर अण्डे देती है। सभी अण्डे अलग अलग चमकदार और कुछ हल्के रंग के होते हैं। ये अण्डे ४-६ दिन में फूटते हैं। अण्डों के फूटने पर जो सुण्डे (ब) बाहर निकलते हैं वे पत्तों के ऊपरी भाग के हरे तत्व को खाना आरम्भ कर देते हैं। तत्पश्चात् वे कोमल तनों तथा तिल के फलों पर भी आक्रमण करने लगते हैं। इस प्रकार १५-२० दिन में वे अपना पूरा भोजन प्राप्त कर पौधे से भूमि पर गिर जाते हैं। इस समय प्रत्येक सुण्डा $\frac{3}{4}$ इंच लम्बा होता है। भूमि पर पहुँचने के पश्चात् ये सुण्डे भूमि में स्थान बनाकर प्युपा रूप धारण करते हैं और उस रूप में वहीं लगभग ८-१० दिन तक पड़े रहते हैं। प्युपा की खोल फटने पर उनसे जो पतंग बाहर निकलता है वह रंग-रूप में अपने जन्मदाता पूर्वजों के समान होता है। प्युपा से निकलने के पश्चात् वह पतंग कुछ समय के लिये इधर उधर विचरण करता है और इसके पश्चात फिर वंश-वृद्धि में योग देने लगता है।

ये प्रौढ़ पतंग वर्षा ऋतु (श्रावण) में अधिक दिखाई देते हैं और उसके बाद ही वे अण्डे देते हैं। अगहन (दिसम्बर) के अंत तक ये दृष्टिगत होते हैं। परन्तु अधिक सर्दी पड़ते ही ये आंखों से ओझल हो जाते हैं।

इनके इस हानि से बचने के लिए साधारणतः निम्न उपाय हैं :—

(१) प्रौढ़ पतंग रात्रि के समय अधिक चंचल होते हैं। अतः उन्हें प्रकाश-जाल से नष्ट कीजिये ।

(२) मुरझाई हुई उन पत्तियों को एकत्रित कीजिये जिनपर इन पतंगों ने जाल बनाया हो। उन डंठलों और फलियों को पौधों से अलग करिये जिनमें ये सुण्डे घुस गये हों। उन्हें असावधनी से योंही कहीं इधर उधर खेत में न फेकिये वरन् एक स्थान पर रख कर जला दीजिये ।

(३) यदि इन सुण्डों का भीषण आक्रमण हुआ हो तो एक भाग सोडियम फ्लाउसिलिकेट को सात भाग राख में मिलाकर पौधों पर भुहरा दीजिये। इससे सभी सुण्डे नष्ट हो जायेंगे।

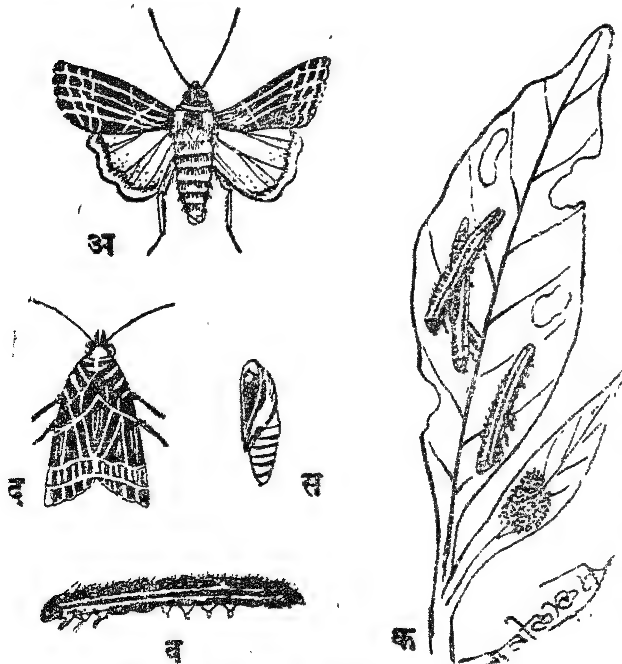
(४) खेत में ४-७ सेर डी. ०२५ गैमेक्सीन छिड़किये।

तम्बाकू का पतंग शत्रु

इस पतंग का सुण्डा तम्बाकू के लिये बड़ा ही हानिकारक जीव है। इनका आक्रमण बड़ा ही तीव्र और विनाशकारी होता है। कभी कभी देखने में ऐसा आता है कि इन सुण्डों की बड़ी संख्या पूरे पौधे को घेर लेती है। तम्बाकू के अतिरिक्त

इन सुण्डों का आक्रमण अरहर, गोभी, आलू, मकाई तथा शकरकन्द पर भी होता है। परन्तु इन सब में तम्बाकू पर इन सुण्डों का आक्रमण बहुत ही तीव्र गति से होता है। यही कारण है कि इस सुण्डे को "तम्बाकू का सुण्डा" कहा जाता है। ये ही सुण्डे अण्डी अथवा रेंड़ी के भी पौधों पर आक्रमण करते हैं। तम्बाकू का सुण्डा लगभग १½-१¾ इंच लम्बा, चिकना तथा भूरे कत्थई रंग का होता है। इसका शिर भाग काला होता है। यह रात्रि के समय ही चलता है।

तम्बाकू के सुण्डे का प्रौढ़ पतंग ⅔ इंच लम्बा तथा फैले पंखों सहित १½ से १¾ इंच चौड़ा होता है। इसका रंग भूरा, अगले पंखों का जोड़ा अधिक गाढ़ा नकाशीदार तथा पिछले पंखों का जोड़ा कुछ हल्का सफेद होता है। यह पतंग रात्रि के समय अधिक तीव्र गति से उड़ता है। मादा पतंग मैथुन के पश्चात् ही रात्रि में तम्बाकू की पत्तियों पर, समूहों में, अण्डे देती है। प्रत्येक समूह में कई सौ अण्डे होते हैं। अण्डों की सुरक्षा के लिये मादा पतंग साधारण बालों (रोयें) का प्रबन्ध करती है। ये रोयें इन अण्डों को किसी ओर खिसकने तक नहीं देते। अण्डे ५-६ दिन में फूटते हैं। यह समय, ऋतु के अनुसार, घट बढ़ सकता है। अण्डों के फूटने पर जो सुण्डे बाहर निकलते हैं वे बड़े छोटे-छोटे (१/२० इंच प्रति सुण्डे) होते हैं। इस समय इनका रंग हल्का हरा तथा शिर काले रंग का होता है। जैसे जैसे ये सुण्डे बढ़ते हैं इनका रंग भी बदलता जाता है। किसी किसी सुण्डे के शरीर पर आगे से पीछे तथा दांये से बायें भूरी-पीली मिश्रित धारियाँ होती हैं। परन्तु कुछ सुण्डों के शरीर पर छोटे-छोटे धब्बे होते हैं। उचित भोजन मिलते रहने पर ये सुण्डे २०-२१ दिन में पूर्ण विकसित और स्वस्थ्य हो जाते हैं। इस पतंग का यही रूप भयानक



चित्र १३—तम्बाकू का पतंग शत्रु
अ—उड़ता हुआ प्रौढ़ पतंग, ब—सुण्डा, स—प्युपा
द—बैठा हुआ पतंग, क—पत्तियों पर सुण्डों का आक्रमण।

होता है। तनिक सी असावधानी से ये सुण्डे एक बड़ी संख्या में पूरे पौधे पर चारों तरफ़ फैल कर पत्तियों की दयनीय दशा कर डालते हैं।

पूर्ण भोजन कर लेने पर स्वस्थ सुण्डा पौधे से खिसक कर भूमि पर गिर पड़ता है और वहीं स्थान बनाकर प्युपा रूप धारण करके २-३ सप्ताह व्यतीत करता है। जाड़े के दिनों में यह अवधि बढ़ सकती है। अतः प्युपा रूप लगभग एक माह का भी हो सकता है। प्युपा की खोल फटती है। उससे एक पतंग जो रूप रंग में अपने जन्मदाता पूर्वजों के आकार प्रकार का होता है बाहर निकलता है। थोड़े समय बाद ही वह पतंग भी वंश वृद्धि में योग देना प्रारम्भ करता है।

जैसा कि पहले ही बताया गया है यह पतंग तम्बाकू का महान शत्रु है। भारतवर्ष में ये पतंग तम्बाकू उत्पन्न करने वाले सभी क्षेत्रों में पाये जाते हैं। परन्तु यह ध्यान रखना चाहिये कि इनके अधिक भयानक होते हुए भी इनसे बचने के बहुत साधारण उपाय हैं:—

(१) अण्डों को देखकर एकत्रित कीजिये और उन्हें किसी भी रीति से नष्ट कीजिये।

(२) जिन पत्तियों पर आपको अधिक सुण्डे मिलें उन्हें तत्काल तोड़कर एकत्रित करलें और सुण्डों सहित नष्ट कर दें।

(३) सुण्डों को नष्ट करने के लिये पौधों पर प्रति बीघा ४-७ सेर गैमेक्सीन डी. ०२५ छिड़किये।

(४) यदि आक्रमण बहुत ही अधिक हुआ हो तो १०० सेर पानी में लगभग आधा सेर लेड क्रोमेट मिला कर उसे पौधों पर छिड़क दीजिये।

(५) यदि सुण्डों की भूमि में छिपे रहने की सम्भावना हो तो खेत में पानी भर दीजिये। ऐसा करने से सभी सुण्डे बाहर निकल आवेंगे और पक्षियों का आक्रमण उन्हें समाप्त कर देगा।

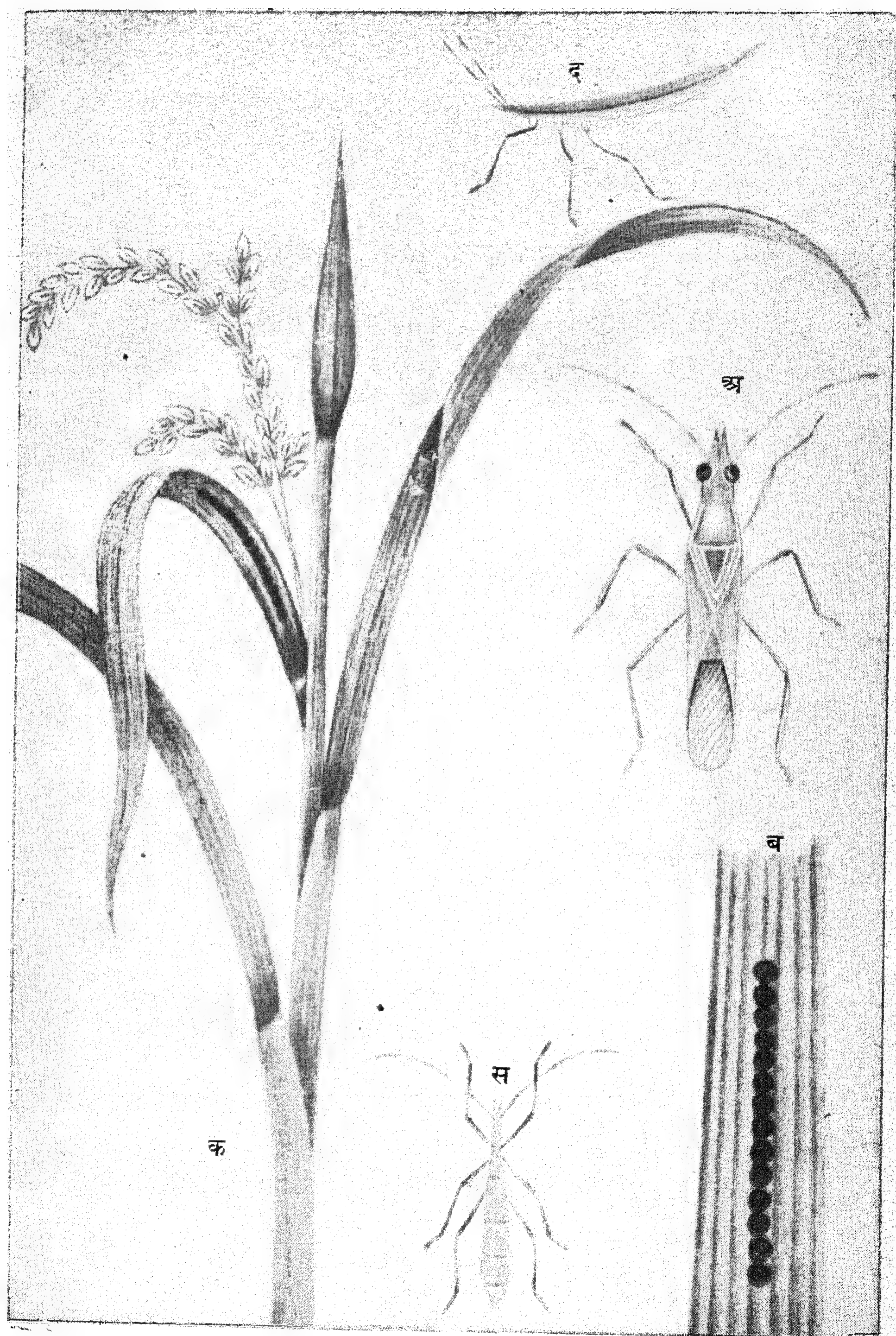
(६) ये सुण्डे एक खेत से दूसरे खेत में न जा सकें इसलिये जिस खेत में इनकी अधिकता हो उसके चारों तरफ़ (८ इंच चौड़ी १० इंच गहरी) नाली बनाकर उसमें पानी भर दीजिये। इस नाली को वे पार ही न कर पावेंगे, अतः उनका विकास समाप्त हो जायगा।

(७) प्रौढ़ पतंगों को प्रकाश-जाल द्वारा नष्ट कीजिये।

(८) सुण्डे भूमि के भीतर प्युपा रूप में पड़े रहते हैं। अतः उनके सर्वनाश के लिये खेत की गहरी जुताई कर देने से खेत में सभी सुण्डे और प्युपे समाप्त हो जायगें।

धान की बालियों का रस चूसने वाला पतङ्ग "गंधी"

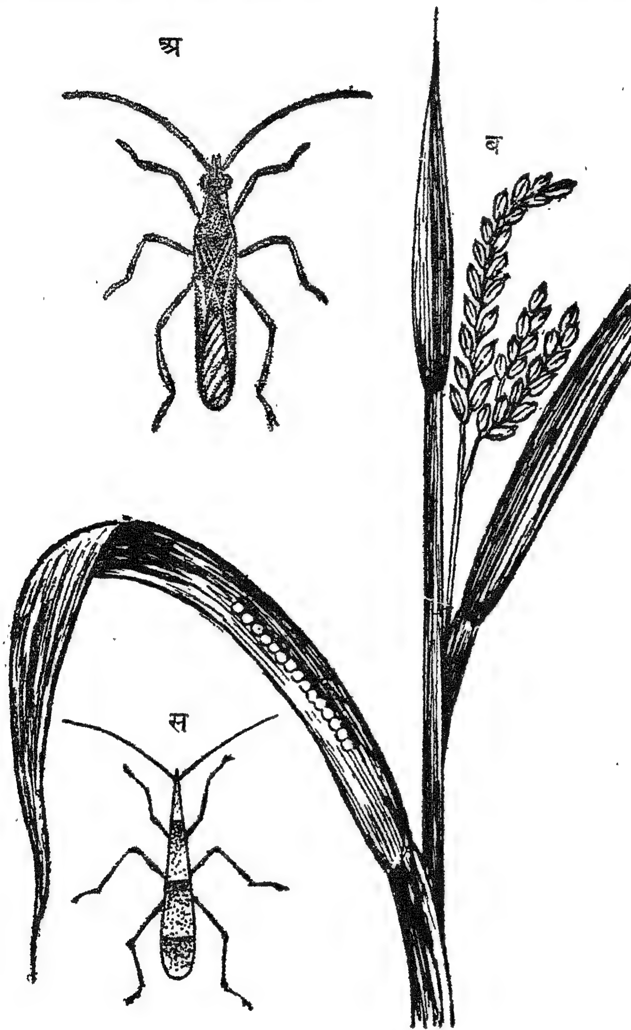
धान की फ़सल का गंधी एक विनाशकारी पतंग-शत्रु है। लहलहाते हुए सुन्दर और स्वस्थ धान के पौधों की बालियों में ज्यों ही दूध भरना प्रारम्भ होता है उन पर इन विनाशकारी गंधी पतंगों का आक्रमण प्रारम्भ हो जाता है। यों तो गंधी ज्वार, बाजरा तथा मकाई इत्यादि पर भी पाया जाता है, परन्तु धान इनका सबसे बड़ा अड्डा है। इसी कारण ये पतंग प्रसिद्ध भी हैं। अन्य पतंगों की अपेक्षा गंधी-



धान का गंधी पतंग

अ—प्रौढ़ गंधी पतंग, ब—धान की पत्ती पर अंडे, स-द—गंधी के कीट शिशु,

पतंग के मुँह की रचना कुचल कर अथवा काट कर खाने योग्य नहीं वरन् रस चूसने के लिये होती है। अपने इस विशेष प्रकार के मुँह की सहायता से ये पतंग पत्तियों, डंठलों तथा विशेषतः दूध से भरे कच्चे धान के दानों का रस चूस कर उन्हें शक्तिहीन



चित्र १४—धान का शत्रु गंधी
अ—प्रौढ़ पतंग, ब—धान की पत्ती पर अण्डे, स—गंधी का कीट-शिशु

तथा निस्तेज बना देते हैं। धान की बालियां सफेद हो जाती हैं। जिससे खेत की औसत पैदावार बहुत ही कम हो जाती है और जो अन्न उत्पन्न होते हैं वे स्वस्थ नहीं वरन् निर्बल और दुबले पतले होते हैं।

जिस समय धान के दानों में दूध भरना प्रारम्भ होता है विनाशकारी गंधी-पतंग का आक्रमण अपनी चरम सीमा को पहुँच जाता है। यही कारण है कि ये

पतंग भादों से लेकर कार्तिक माह (सितम्बर से नवम्बर) तक दिखाई पड़ते हैं। जिस खेत में ये पतंग आक्रमण करते हैं उससे एक प्रकार की दुर्गन्धि निकलने लगती है। इस विशेष प्रकार की दुर्गन्धि के कारण ही इसका गंधी पतंग नाम पड़ा।

प्रत्येक गंधी पतंग की लम्बाई ३/४-१ इंच, रंग भूरा तथा मूंछे लम्बी होती हैं। जैसा कि पहले ही लिखा जा चुका है इन पतंगों की वृद्धि भादों, क्वार और कार्त्तिक मास में अधिक होती है। परन्तु हमें यह न समझना चाहिये कि वर्ष के अन्य महीनों में ये होते ही नहीं। उस समय ये खेत के आस पास लम्बी और निकम्मी घासों में लुके-छिपे रहते हैं। मादा पतंग मैथुन के पश्चात् हरी पत्तियों पर एक सीधी रेखा में एक के बाद दूसरा तथा दूसरे के बाद तीसरा अण्डा (ब) देती हुई आगे बढ़ती चली जाती है। अधिकतर ये अण्डे रात में ही दिये जाते हैं। अण्डों की संख्या ५ से २० तक होती है। अण्डे कुछ लम्बे होते हैं जो ८-६ दिन के अन्दर फूटते हैं। अण्डों के फूटने पर हल्के हरे रंग के छोटे बच्चे बाहर निकलते हैं। वे कुछ समय तक इधर-उधर घूमने के पश्चात् अपनी सूई की भाँति मुँह से पत्तियों, डंठलों तथा विशेष कर बालियों का रस चूसना प्रारम्भ कर देते हैं। इस प्रकार भोजन प्राप्त करते रहने पर छोटे बच्चे १८-२० दिन के भीतर अपनी पूर्ण अवस्था प्राप्त करते हैं। ये ही प्रौढ़ गंधी पतंग फिर भविष्य के लिये वंश वृद्धि में लग जाते हैं। एक वर्ष में इनकी इस प्रकार कई पीढ़ियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। ये पतंग अधिक प्रकाश और गर्मी नहीं सहन कर सकते। अतः दिन में इनका कूद फांद बन्द रहता है। केवल प्रातः तथा सायंकाल ही ये पतंग अधिक वेग और शक्ति से अपना जीवन निर्वाह कार्य करने में तल्लीन रहते हैं। इसी दो विशेष बेला में इन्हें देखा और इनका निरूपण किया जा सकता है। चूँकि पूरे वर्ष धान के पौधे नहीं मिलते ये पतंग वर्ष के शेष महीनों में अन्य पौधों की शरण लेते हैं। धान का खेत कट जाने पर मैंने इन्हें गेहूँ के पौधों पर भी देखा है।

गंधी पतंगों से धान की रक्षा के कई उपाय हैं। गांवों में, धान में जब दूध आने लगता है, किसान खेत में घुसकर अपने दोनों हाथों से धान के पौधों को इधर उधर हिला देते हैं। इस क्रिया को मंगियांना कहते हैं। मंगियाना शब्द मांग से बना है। जिस प्रकार मांग निकालने के लिये बालों को अगल बगल फेरा जाता है उसी प्रकार खेत में धान के पौधे भी अगल बगल फेर दिये जाते हैं। किसानों का विश्वास है कि उनकी इस क्रिया से पतंग-शत्रु बाहर निकल जाते हैं और सचमुच होता भी ऐसा ही है। परन्तु यह सफलता थोड़े समय के लिये ही होती है। कुछ देर के लिये ये पतंग चाहे बाहर भले ही चले जाँय परन्तु फिर लौट कर खेत में आ जाते हैं। अतः "मांगियांना" एक सफल उपाय नहीं है। हां! इतना अवश्य होता है कि इस पतंग के छोटे कोमल बच्चे पौधों से भूमि पर गिर जाते हैं और यदि वहां पानीं रहा तो वे मर भी जाते हैं। इसलिए इनके विनाश के लिए तो हमें कुछ ऐसे उपाय ढूँढ़ने चाहिए जिससे इन पतंगों का सर्वनाश हो जाय। इसके लिए पृष्ठ ३१ पर बताये गये उपाय अधिक सफल हो सकते हैं।

(१) ६-७ फिट लम्बी तथा २।।-३ फिट चौड़ी चट्टी, पतले बोरे, का एक टुकड़ा लीजिये। उसके एक ओर ग्रीस या चोटा जैसी चिकनी वस्तु लगा दीजिये। इस चट्टी को दो आदमी दोनों किनारों से पकड़ कर पौधों पर इस प्रकार फेरें जैसे धोती सुखाई जाती है। ऐसा करने से खेत के गंधी तथा दूसरे पतंग उड़कर चट्टी में लगी हुई चिकनी वस्तु में चिपक जायेंगे। इस रीति को यदि किसान लगातार दो घंटे प्रयोग करें तो अधिक सफलता मिल सकती है।

(२) उन पत्तियों को जिनपर अण्डे लगे हों पेड़ से अलग करके जला दें। इससे अगली पीढ़ियां समाप्त हो जायँगी।

(३) धान के खेत में अथवा उसके अगल बगल किसी प्रकार की भी घास न उगने पावे।

(४) खेतों के मेड़ों पर धुआं करिये।

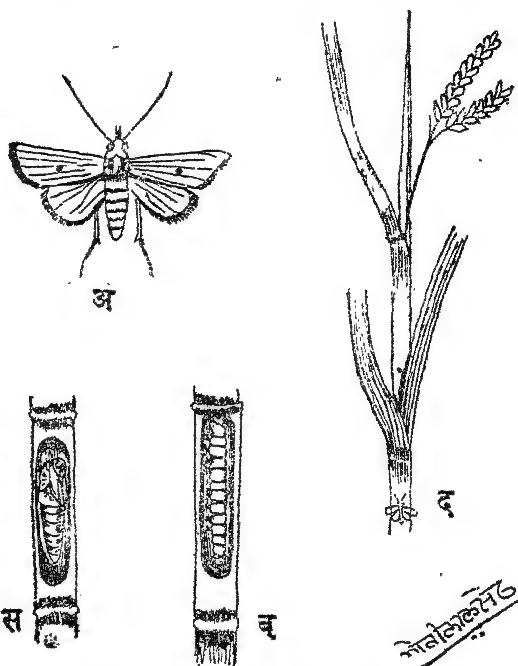
(५) प्रति बीघे में बेन्जीन हेक्साक्लोराइड (५ प्रतिशत वाला) ४-५ सेर छिड़किये। गैमेक्सीन डी. ०२५ का भी प्रयोग बहुत अधिक लाभ पहुँचाता है।

धान के तने का सुण्डा

ज्वार, बाजरा तथा गन्ने के तनों में लगने वाले सुण्डों की भांति धान के तने में भी एक प्रकार का सुण्डा लगता है जो तने के भीतर घुसकर उसका मध्य भाग खा जाता है। इस आक्रमण के परिणामस्वरूप "मृतक केन्द्र" उत्पन्न हो जाते हैं। यदि इन सुण्डों का आक्रमण साधारण नन्हें कोमल पौधों पर होता है तो वे पौधे सूख कर धराशायी हो जाते हैं परन्तु यदि आक्रमण बड़े पौधों पर होता है तो उनमें शक्तिहीन फूल और बीज निकलते हैं। बालियों का रंग सफेद हो जाता है। यह पतंग समूचे एशिया के धान उत्पन्न करने वाले क्षेत्र का एक विनाशकारी शत्रु है। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि इस पतंग के विनाशकारी आक्रमण से केवल भारत राष्ट्र को प्रतिवर्ष लगभग एक करोड़ रुपये की क्षति उठानी पड़ती है क्योंकि ये पतंग भारतवर्ष के सभी धान उगाने वाले क्षेत्रों में पाये जाते हैं। दक्षिणी भारत में तो इनकी बड़ी अधिकता है।

मार्च (चैत्र) से लेकर नवम्बर (कार्तिक) महीने तक ये पतंग भूमि के ऊपर पौधों पर उड़ते और भागते दिखाई पड़ते हैं। परन्तु जाड़ा पड़ते ही, अगहन से फाल्गुन तक (दिसम्बर से मार्च) ये पतंग प्युपा रूपमें भूमि के अन्दर सुप्तावस्था में पड़े रहते हैं। थोड़ी गर्मी पड़ते ही, चैत्र महीने में, प्युपा की खोल फाड़कर ये पतंग पुराने धान के खेत के मेड़ों तथा आस पास के पौधों की मोटी पत्तियों पर वंशवृद्धि करते हुए असाढ़ महीने में नई निकलने वाली धान की पत्तियों पर झुण्डों में अण्डे देना प्रारम्भ कर देते हैं। एक एक झुण्ड में ६० से १०० अण्डे तक होते हैं। कभी कभी एक झुंड में १५०–२०० तक अण्डे गिने जा सकते हैं। प्रौढ़ मादा पतंग अधिक धूप न सहन कर सकने के कारण रात्रि में ही विचरण करके अधिकतर पत्तियों की निचली सतह पर अण्डे देती हैं। अंडे रोंयेदार रेशों से सुरक्षित रहते हैं। ६-७ दिन में अण्डों के फूटने पर ज़ो सुण्डे बाहर निकलते हैं वे पहिले तो पत्तियों अथवा तनों के ऊपरी कोमल भाग

को खाते हैं परन्तु थोड़े समय बाद ही खिसक कर तने के निचले भाग पर पहुँच जाते हैं। निचले भाग पर पहुँचने के लिए ये सुण्डे अपने मुँह द्वारा निकाले गए सिल्क के धागे के सहारे नीचे उतरते हैं। तने के निचले भाग पर पहुँचकर ये सुण्डे तने में छेद बनाकर उसके भीतरी तत्व को खाने लगते हैं। इस क्रिया के परिणामस्वरूप सुण्डे तने के भीतर ही भीतर ऊपर की ओर चढ़ते जाते हैं और साथ ही साथ शक्तिशाली भी बन जाते हैं। ये १५-१६ दिन में ही पूर्ण भोजन प्राप्त कर चुकते हैं। इस अवस्था में ये हल्के पीले तथा लम्बाई में लगभग एक इंच के होते हैं। इस समय ये सुण्डे तने से बाहर निकलने के लिए एक छेद बनाते हैं, परन्तु वे इसी समय बाहर नहीं निकलते। इस छेद को वे सुण्डे तने के भीतरी तत्व के महीन टुकड़ों से बन्द कर देते हैं। लेकिन अधिक कस कर नहीं। इस क्रिया को करने के पश्चात् ये सुण्डे बनाये हुए खोखले स्थान के भीतर ही अपने चारों तरफ सफेद सिल्क की रेशेदार खोल बनाकर ११-१२दिन तक प्युपा रूप में पड़े रहते हैं। प्युपा की खोल फटने पर इसमें से अपने जन्मदाता के रूप रंग के पतंग बाहर निकलते हैं जो हल्के भूसे के रंग के होते हैं। वे पुनः विचरण करने के पश्चात् ही वंशवृद्धि में योग देना प्रारम्भ करते हैं। एक पीढ़ी का समूचा जीवन-वृत लगभग ३०-५० दिन में पूरा होता है।



चित्र १५—धान के तने का सुण्डा
अ—प्रौढ़ पतंग ब—तने के भीतर सुण्डा
स—तने के भीतर प्युपा, द—धान के पौधे पर पतंग

इस पतंग के विनाशकारी आक्रमण से बचने के लिये अधिक प्रयत्न किया गया है, लेकिन अभी तक कोई सफल रीति नहीं मालूम हो पाई है। फिर भी इनके आक्रमण से बचने के लिए निम्न उपाय प्रयोग किये जा सकते हैं:—

(१) फसल काटने के बाद खेत का कूड़ा करकट और सड़ा गला बटोर कर वहीं जला दीजिये। खेत को खूब गहरा जोत दीजिये। इससे खेत में लुके छिपे अण्डे, सुण्डे अथवा प्युपे गर्मी तथा पक्षियों द्वारा नष्ट हो जायंगे।

(२) एक खेत का बेहन दूसरे खेत में लगाते समय इसका ध्यान रखिये कि सूखे मुरझाये हुए पौधे खेत में न लगाये जायं। यदि इन सूखे मुरझाये पौधों को आप तोड़कर देखिये तो इनमें सुण्डे अथवा प्युपे घुसे मिलेंगे।

(३) अंडे लगी हुई पत्तियों को ढूँढ़कर नष्ट कीजिये।

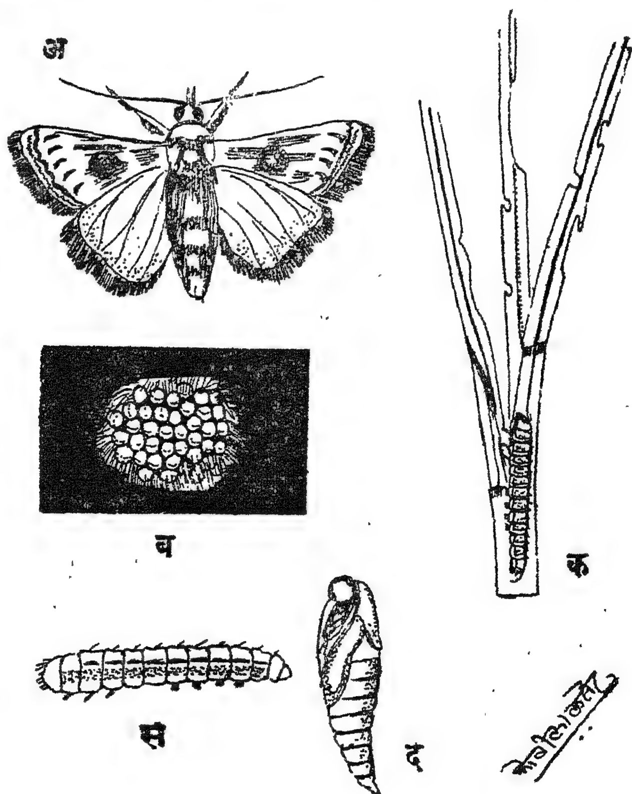
(४) प्रौढ़ पतंग प्रकाश की ओर आकर्षित होते हैं। अतः उन्हें प्रकाश-जाल की सहायता से नष्ट कीजिये।

(५) पौधों पर एक बीघे में ४-५ सेर ५ प्रति सैकड़ा शक्तिवाला बेन्जीन हेक्जा-क्लोराइड छिड़कना चाहिये। इसके लिए गमेक्सीन डी.०२५ बहुत ही गुणकारी होगा।

धान का कटुआ

धान के कटुआ सुण्डे बड़े हानिकारक होते हैं। इनका पत्तियों पर अधिक आक्रमण होता है। एक ही रात में खेत की सभी पत्तियों पर इनका आक्रमण हो जाना एक साधारण सी बात है। भारतवर्ष में धान उगाने वाले सभी क्षेत्रों में इन सुण्डों का आक्रमण होता है। क्वार और कार्तिक में ये अधिक उपद्रव मचाते हैं।

इन सुण्डों के प्रौढ़-पतंग साधारण गाढ़े भूरे काले रंग के होते हैं। इनके पंखों पर सुन्दर नक्काशी की हुई मालूम पड़ती है। पूर्ण अवस्था में मैथुन के पश्चात् मादा पतंग निकम्मी घास की पत्तियों पर एक समूह में २५०-३०० अण्डे देती है। कभी कभी अण्डों की संख्या ५००-६०० तक हो सकती है। इन अण्डों की रक्षा के लिये पतंग अण्डों के समूह



चित्र १६—धान का कटुआ
अ—प्रौढ़ पतंग ब—बालों से ढके अण्डे स—सुण्डा
द—प्युपा क—पत्तियों को काटते हुए सुंडा

के चारों ओर भूरे रोयेंदार रेशों का प्रबन्ध करती है अण्डे हल्के हरे रंग के होते हैं। ७-८ दिन में अण्डों के फूटने के बाद जो सुण्डे बाहर निकलते हैं वे पहले तो साधारणत: पौधों के निकलते हुये कोमल तनों पर और फिर पत्तियों पर आक्रमण करते हैं। ये सुण्डे रात्रि में ही आक्रमण करते हैं परन्तु दिन में छिपे रहते हैं। इस रीति द्वारा भोजन प्राप्त करते रहने पर ये सुण्डे १५-२० दिन के भीतर बहुत स्वस्थ तथा कार्यशील हो जाते हैं। इस समय इनका रंग हारा तथा ये लम्बाई में लगभग १½ के इंच होते हैं। इतना ही नहीं ये सुण्डे भूमि पर गिर कर अपने चारों ओर खोल बनाते हैं और वहीं प्युपा-रूप धारण करते हैं। प्रत्येक प्युपा गाढ़े कत्थई रंग का लगभग ½ इंच लम्बा होता है। इसका पिछला भाग कुछ अधिक नोकीला होता है। इस प्युपा-रूप में पतंग दो सप्ताह (१५ दिन) तक रहता है। तत्पश्चात् प्युपा की खोल फटती है और उसमें से एक पतंग (अ) अपने पूर्वजों के रंग रूप का बाहर निकलता है और कुछ घंटों (५०-६०) तक विचरण करने के पश्चात् फिर वंशवृद्धि में लग जाता है। इनकी पूरी जीवन-वृत्त लगभग ३०-४५ दिन में पूरी हो जाती है।

इनके इस विनाशकारी आक्रमण से बचने के लिये निम्न प्रयोगों को काम में लाया जा सकता है :—

(१) जिन खेतों में इनका आक्रमण हुआ हो फसल काट लेने के बाद उनको जोत देना चाहिये ताकि भूमि में छिपे पतंग के सुण्डे और प्युपा चिड़ियों द्वारा समाप्त हो जांय।

(२) जिस खेत में इनके आक्रमण की शंका हो उसमें पानी भर दीजिये। ऐसा करने से सभी सुंडे भूमि के बाहर निकल आवेंगे। पक्षियों को मौका मिलेगा। और वे इन्हें अधिक संख्या में खा जायेंगे।

(३) धान के खेत के समीप किसी प्रकार की घास न उगने दीजिये।

(४) यदि सम्भव हो तो "कैलशियम आरसनेट" नामक रसायन का प्रयोग निम्न रीति से कीजिये:—

बाज़ार से कैलशियम आरसनेट (जो दवाई बेचने वालों के यहाँ मिलता है) खरीद कर उसमें दूनी राख या चूना मिला कर गोधूली के पहले चलनी द्वारा धान के पौधों पर बखेर दीजिये। इस प्रयोग से रात्रि में निकलने वाले सुण्डे पत्तियों पर मुँह लगाते ही मरने लगेंगे। इस प्रयोग में यह भी ध्यान रखना चाहिये कि प्रयोग के समय या उसके पश्चात् आंधी-पानी की सम्भावना लगभग १०-१२ घन्टे तक न हो अन्यथा मिहनत और लागत दोनों बेकार जायगी।

(५) सुण्डों को मारने के लिये खेत में रात को ४ प्रति सैकड़ा तेजी का बेन्जीन हेक्साक्लोराइड को प्रति बीघा ६-७ सेर छिड़किये।

गन्ने की पत्तियों का रस चूसने वाला पतंग "पाइरिल्ला"

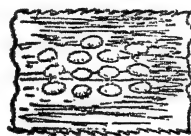
पाइरिल्ला गन्ने का पतंग शत्रु है। कहीं कहीं इसे "फुदकने वाला पतंग" भी कहते हैं। गन्ने के तने या जड़ को हानि पहुँचाने वाले अन्य पतंगों की अपेक्षा

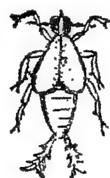
इस पतंग का आक्रमण पत्तियों पर ही होता है। ये पतंग अपने मुँह की बनावट के कारण पत्तियों का रस चूसते रहते हैं। फलस्वरूप पत्तियों के निर्बल हो जाने के कारण गन्ने के पौधे की बाढ़ मारी जाती है तथा रस में मिठास की कमी हो जाती है। ऐसे मीठे रस से जो गुड़ बनता है वह भी निम्न कोट का होता है।

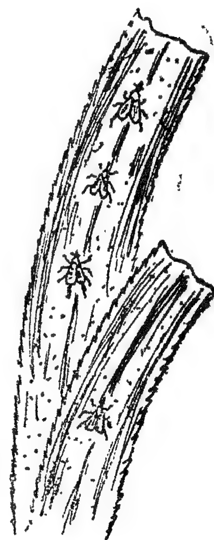
पाइरिल्ला पतंग (अ) का रंग भूसे की तरह तथा इसकी अधिक से अधिक लम्बाई ¾ इंच की होती है। इसका मुँह थूथुनदार तथा दोनों पंख शरीर के दोनों ओर छप्पर की भाँति झुके होते हैं। नवजात-पतंग (स) प्रौढ़-पतंग से कुछ भिन्न होता है क्योंकि इसके शरीर के पिछले हिस्से में दो पूँछ लगी होती है। नवजात तथा प्रौढ़ पतंग अपने सूई के समान मुँह से पत्ती का रस चूसते रहते हैं।

प्रौढ़ावस्था में ये पतंग अधिकतर चैत्र और बैसाख (मार्च-मई) महीने में अधिक संख्या में दिखाई पड़ते हैं। इसी समय मादा-पतंग मैथुन के पश्चात् पत्तियों के निचले भाग पर धानी-गंधकी (हरा-पीला तथा कत्थई रंग मिश्रित) रंग के चमकदार अंडे (ब) झुंडों में देती हैं। ये पतंग दिन में ही मैथुन करते हैं और अनुकूल परिस्थिति में अनेक पाइरिल्ला दिन में ही एक दूसरे से चिपके दिखाई देते हैं। अंडों की रक्षा के लिये पतंग मादा उनके चारों तरफ मोम जैसे पदार्थ का चिपचिपा रेसा फैला देती है। मादा पतंग एक वार बैसाख के प्रारम्भ (अप्रैल) में तथा दूसरी बार फिर २०-२५ दिन बाद अण्डे देती है। अण्डे अपने रूप में गर्मी के दिनों में ६ से ११ दिन में ही फूट जाते हैं। परन्तु अधिक सर्दी में इनके फूटने में ३५-४५ दिन तक लग जाते हैं। इस पतंग के अंडों के फूटने पर सुण्डे नहीं वरन् नवजात छोटे छोटे पतंग बाहर निकलते हैं जो अपने पूर्वजों की भाँति पत्तियों का रस चूसना आरम्भ कर देते हैं। इन छोटे-छोटे पतंगों को प्रौढ़ावस्था प्राप्त करने में लगभग ३५ से ७० दिन लग जाते हैं। इन नवजात पतंगों में एक विशेषता यह होती है कि ये अधिक कठिन होते हैं। बर्फ और पाले से बचने के लिये ये अन्य कीट-पतंगों की भांति भूमि पर पड़ी पत्तियों के नीचे नहीं छिपते,









चित्र १७—पाइरिल्ला पतंग
अ—प्रौढ़ पतंग, ब—अण्डे स—नया छोटा बच्चा क—पत्तियों पर रेंगते हुये पतंग।

वरन् सीधे पत्तियों पर ही चढ़े रहते हैं। लेकिन बैसाख और जेष्ठ महीने की लू इन्हें झुलस देती है जिससे वर्षा के मध्य में इनका वेग बहुत ही कम हो जाता है। इनमें एक विशेषता और होती है कि नर पतंग मादा पतंग की अपेक्षा अल्पायु होते हैं। नवजात पतंग प्रौढ़ावस्था को प्राप्त कर मैथुन के योग में लग जाते हैं। इस तरह वर्ष में इनकी ३-४ पीढ़ियाँ उत्पन्न हो जाती हैं।

गन्ने की फ़सल पूस से फाल्गुन (जनवरी से मार्च) तक कटती रहती है। अतः इन महीनों में अपना भोजन प्राप्त करने के लिये ये पतंग गन्ने से कूद कर समीप के गेहूँ, जौ, जई तथा अन्य निकम्मी और बेकार घासों पर बैठ जाते हैं। इन पौधों की अवधि साधारणतः मार्च अप्रैल तक होती है। जैसे ही इन घासों का सूखना प्रारम्भ होता है गन्ने की बोआई प्रारम्भ हो जाती है। नये गन्नों के कुछ बड़े होते ही ये पतंग फुदक कर नये गन्नों की पत्तियों पर पहुँच जाते हैं। इस प्रकार इनका वर्ष भर कार्य चलता रहता है। इन पतंगों का आक्रमण चौड़ी तथा रसदार पत्तियों पर होता है। अतः उस प्रकार के गन्नों पर इनका आक्रमण अधिक सफल होता है जिनकी पत्तियाँ चौड़ी तथा रसीली होती हैं।

पत्तियों की निचली सतह पर जहाँ इन पतंगों का आक्रमण होता है वहाँ छोटे छोटे धब्बे दिखाई पड़ते हैं। इन्हीं स्थानों से एक प्रकार का चिपचिपा पदार्थ तैयार हो जाता है जिसके कारण अन्य फफूँदी रोगों की सम्भावना बढ़ जाती है। यह पतंग केवल उत्तर प्रदेश का ही नहीं वरन् भारत के उन सभी क्षेत्रों का भयानक शत्रु है जहाँ गन्ना बोया जाता है। इनके इस महान् हानि से बचने के लिये निम्न उपाय किये जा सकते हैं:—

(१) उन पत्तियों को जिन पर अण्डे लगे हों एकत्रित करके जला दीजिये।

(२) भादों, क्वार तथा कार्त्तिक (सितम्बर-अक्टूबर तथा नवम्बर) महीनों में सारी सूखी पत्तियों को गन्ने से अलग खींच कर जला दीजिये ताकि उन पर लगे हुए अण्डे और पतंग समूल नष्ट हो जांय।

(३) गन्ने पर जहां कहीं भी ये पतंग दिखलाई पड़ें पकड़कर नष्ट कर दीजिये ताकि इन्हें विकास के लिये अवसर ही न मिल सके।

(४) गन्ने की कटाई के पश्चात् खेत का पूरा कूड़ा करकट बटोर कर जला दीजिये।

(५) नई फ़सल लगाने के पहले पुरानी फ़सल की कटाई तथा उस खेत की सफ़ाई पहले हो जानी चाहिये।

(६) जब पौधे कुछ बड़े (३-४ फीट के) हो जांय तो उन पर हवा की गति के विरुद्ध एक ऐसी चट्टी दांये बांये हिलाइये जिसके एक ओर ग्रीस, चोटा या कोई अन्य चिपकने वाला पदार्थ लगा हो। यह चट्टी (जूट की) ५ फीट लम्बी तथा २॥ फीट चौड़ी होनी चाहिये। अब दो आदमी इस चट्टी के दोनों शिरों को पकड़ कर पौधों पर इस प्रकार फेरिये जैसे धोती सुखाई जाती है। इस क्रिया द्वारा पत्तियों पर बैठे हुए पतंग उड़ेंगे और बोरे में लगे चिकने-पदार्थ में चिपक जायंगे। अधिकांश पतंग तो इसी क्रिया द्वारा समाप्त हो जायंगे।

(७) अधिक सफलता प्राप्त करने के लिये इनमें से एक का प्रयोग किया जा सकता है:—

(१) निकोटीन सल्फेट का मिश्रण पत्तियों पर भुहरा (बखेर) दीजिये। यह रसायन—१ पौंड निकोटीन सल्फेट, ५ सेर राख, ५ सेर बारीक गंधक तथा १० सेर चूना मिलाकर तैयार किया जाता है।

(२) पांच भाग रेंड़ी का तेल तथा आठ भाग गोंद गर्म करके मिला लीजिये। अच्छा घोल तैयार होगा। इस घोल को पतली छिछली कढ़ाई या चलनी द्वारा गन्ने के पौधों पर गिरा दीजिये। पतंग इस तरल-जाल की ओर आकर्षित होंगे और फिर इसी में चिपक कर मर जायंगे।

(३) एक बीघे में ५% से ७% शक्ति वाला बेन्जीन हेक्जाक्लोराइड १२-१४ सेर छिड़किये।

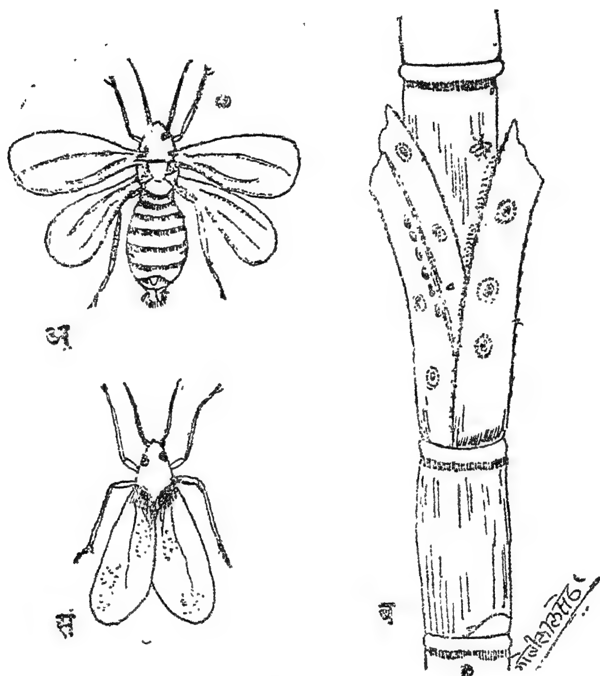
गन्ने की सफेद मक्खी

सफेद मक्खी गन्ने के महान विनाशकारी पतंगों में से एक है। पाइरिल्ला की भांति इस पतंग का भी आक्रमण गन्ने की पत्तियों पर ही होता है। इनका सूई के समान मुख होने के कारण ये पतंग गन्ने की पत्तियों का रस चूसते रहते हैं। इनके इस आक्रमण के फलस्वरूप पत्तियां निर्बल तथा निस्तेज हो जाती हैं। पत्तियों के निर्बल हो जाने से पौधे के अन्य अंग सुचारुरूप से कार्य नहीं कर पाते। अतः रस में कमी आ जाती है। जो रस बचता है वह भी फीका हो जाता है। भारतवर्ष में प्रायः गन्ना उगाने वाले सभी प्रान्तों में इसका हानिकारक आक्रमण देखा गया है। इस पतंग के अलग अलग प्रान्तों में अलग अलग नाम हैं। उत्तर प्रदेश में इसे लाही, बिहार के कुछ भाग में सफेद माछी तथा अन्य कई प्रान्तों में भी लाही कहते हैं। गुजरात प्रान्त में इसे पाप्री नाम दिया गया है। उसी के आस पास कहीं कहीं इसे बामी भी कहते हैं।

श्रावण से लेकर चैत्र मास तक सफेद मक्खी अधिक दिखाई पड़ती हैं। परन्तु वैसाख से असाढ़ मास (अप्रैल-जून) तक ये पतंग दिखाई ही नहीं पड़ते क्योंकि लू लगने के कारण ये पतंग प्रायः समाप्त हो जाते हैं। जैसा कि पहले ही बताया गया है श्रावण से चैत्र (जुलाई-मार्च) में गर्मी की मात्रा कुछ कम हो जाती है अतः इनका विकास प्रारम्भ हो जाता है।

यह पतंग रंग में सफेद और बहुत ही छोटा (अ-स) होता है। इसकी आंखें काली और अधिक चमकदार होती हैं इस पतंग का शरीर एक प्रकार के सफेद चूर्ण से ढका रहता है। अनुकूल वातावरण में इधर उधर फुदुक कर यह पतंग अपना पेट भरता है और जब कुछ ठंढक पड़ने लगती है मादा-पतंग मैथुन के पश्चात् पत्तियों की निचली सतह पर मध्यशिरा के समीप (ब) एक सीधी रेखा में हल्के भूरे रंग के लगभग १० से ४० अण्डे देती है। इन अण्डों का एक छोर कुछ गोल चपटा परन्तु दूसरा नोकीला लम्बा होता है। कुछ ही दिनों में ये अण्डे अपना रंग बदल कर कुछ कुछ काले पड़ जाते हैं। लगभग ६-७ दिन में ये अण्डे फूट जाते हैं। प्रत्येक अण्डों में से एक नवजात-

पतंग निकलता है और यह भी रस चूसना प्रारम्भ कर देता है। पहले तो इसका रंग पीला होता है परन्तु थोड़े समय में ही यह गाढ़ा भूरा तथा अंत में श्यामल होकर काला-चमकीला हो जाता है। कुछ समय के लिये ये नवजात-पतंग प्युपा का रूप धारण करते हैं। प्रत्येक प्युपा की खोल फटते ही प्रौढ़ पतंग बाहर निकल कर रस चूसना प्रारम्भ कर देता है। एक वंश के उत्पन्न होने तथा उसके विकास में लगभग एक माह लग जाता है।



चित्र १८—गन्ने की सफेद मक्खी

अ—उड़ता हुआ पतंग ब—गन्ने की पत्तियों पर अण्डे प्युपा, और पतंग स—बैठा हुआ पतंग।

इस पतंग का आक्रमण जैसा कि पहले ही बताया गया है उत्तर प्रदेश, बंगाल, बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश तथा भारत में गन्ना उगाने वाले सभी क्षेत्रों में होता है जिसके कारण हमारी एक महान् आर्थिक हानि होती है। इस राष्ट्रीय हानि से बचने के लिये हमें निम्न उपाय प्रयोग में लाने चाहियें:—

(१) गन्ने की पुरानी फसल काट लेने पर, खेत का कूड़ा करकट एकत्र कर जला देने के बाद ही नई फसल बोने का प्रबन्ध कीजिये अन्यथा पुरानी फ़सल का विष नई फसल पर भी पहुँच जायगा।

(२) खेत में पानी न एकत्रित होने दीजिये।

(३) श्रावण और भाद्रव महीनों में पौधों का निरीक्षण कर लीजिये। यदि पतंग दिखाई पड़ें तो उनका निम्न रीति से सर्वनाश कर दीजिये। इस रीति को आप हर समय प्रयोग कर सकते हैं :—

३ सेर राज़न (बजार के पंसारियों के यहाँ मिलता है जिसे चनरस भी कहते हैं), आधा सेर धोने वाला सोडा तथा ३० सेर पानी का प्रबन्ध कीजिये।

अब १० सेर पानी में धोने वाला सोडा डालकर कढ़ाई में गर्म कीजिये। जब यह गर्म होकर उबलने लगे तो इसमें राज़न का चूर्ण बनाकर डाल दीजिये। ध्यान रखिये इससे फेन उठेगा। अतः धीरे धीरे लकड़ी के पौनी से चलाते रहिये। यदि अधिक फेन उठने की सम्भावना हो तो थोड़ा पानी और डाल दीजिये (जैसे उबलते हुये गर्म दूध का उबाल कम करते हैं)। जब यह तरल पदार्थ खूब मिल जाय और कोई फेन इत्यादि न उठे तो ठीक समझिये। इस समय यह घोल काले रंग का हो जायगा। अब धीरे धीरे पीछे बचा हुआ २० सेर पानी १०-१० मिनट पर ३-४ बार में कढ़ाई में डाल दीजिये। इस क्रिया से सारा तरल पदार्थ कढ़ाई के अन्दर भूरा-लाल रंग का हो जायगा। इस तरल पदार्थ के छिड़कने से अधिकांश पतंग मर जायंगे। छिड़कने के पहिले यह छिड़काव (तरल पदार्थ) १ भाग तथा पानी ४ भाग मिला कर छिड़कने वाली मशीन से ❀ छिड़किये।

(४) जिन पत्तियों पर ये पतंग अधिक दिखाई पड़ें उन्हें धीरे से खींच कर अलग जला दीजिये।

गन्ने के अग्रिम भाग का विनाशक पतंग

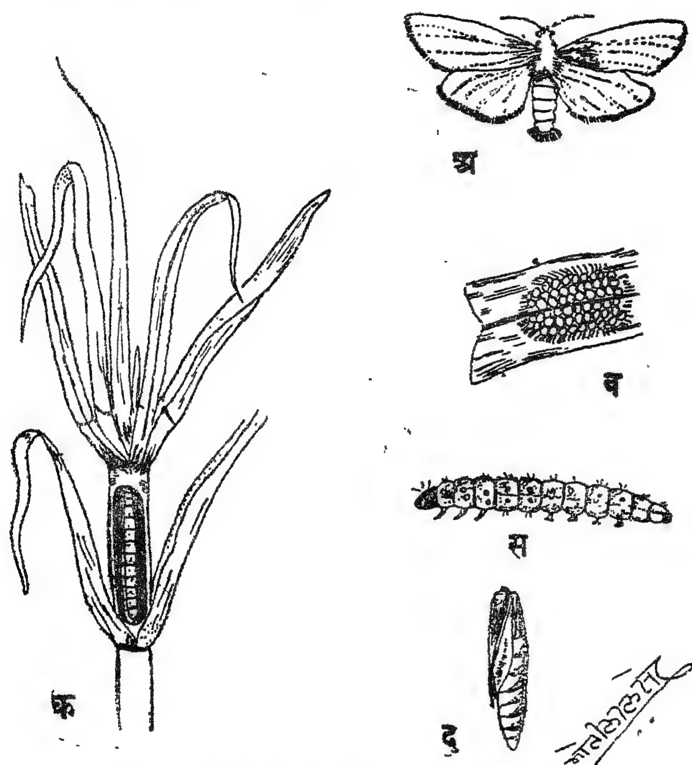
ये पतंग चैत्र से कार्तिक मास (मार्च-अक्टूबर) तक गन्ने के खेतों में अथवा उसके आस पास उड़ते हुए दिखाई पड़ते हैं। रात्रि के समय ये अधिक चैतन्य रहते हैं। ये फैले पंखों सहित डेढ़ इंच लम्बे तथा सफेद रंग के होते हैं। परन्तु नर-पतंग मादा पतंग से कुछ छोटे होते हैं। मादा-पतंग के शरीर के अंतिम भाग पर पीले, कत्थई-पीले अथवा नारंगी रंग के बालों की एक घुण्डी होती है।

पूर्ण अवस्था प्राप्त करने के पश्चात् मादा-पतंग (अ) मैथुन के बाद गन्ने की पत्तियों के निचले भाग पर समूह में अण्डे (ब) देती है। अण्डे का प्रत्येक समूह कत्थई भूरे रंग के बालों से सुरक्षित रहता है जिसमें लगभग ८०-६० अण्डे होते हैं। प्रत्येक अण्डा ६-७ दिन में फूटता है। अण्डे के फूटने पर जो सुण्डा (स) बाहर निकलता है उसकी लम्बाई $\frac{1}{10}$ इंच होती है। इसका रंग सफेद चमकीला होता है परन्तु इसके मुंह की ओर इसका अग्रिम भाग काला होता है। अण्डों से बाहर निकल कर ये सुण्डे कुछ घंटे तो सुस्त पड़े रहते हैं परन्तु उसके बाद ही पत्तियों का ऊपरी भाग खाना आरम्भ कर देते हैं। इनकी यह क्रिया बहुत देर तक नहीं चलती। कुछ घंटों के बाद ही ये पत्तियों की मध्य-शिरा में घुस जाते हैं। ये धीरे-धीरे मध्य-शिरा के भीतरी तत्वों को समाप्त कर उसे खोखला बना देते हैं। उनकी यात्रा यहीं नहीं समाप्त होती, वरन् वे आगे बढ़ते हैं। धीरे-

---

❀ छिड़कने वाली मशीन का वर्णन अध्याय ३ में किया गया है।

धीरे वे उस स्थान पर पहुँचते हैं जहां से पत्तियों का कल्ला फूटता है। इस विशेष स्थान को भी वे खाते हैं। इसके कारण कल्ला-फूटने वाला स्थान (क) ही समाप्त हो जाता है। अतः गन्ने के पौधे की वृद्धि रुक जाती है। इसके फलस्वरूप गन्ने के अग्रिम बढ़ने वाले भाग का सर्वनाश हो जाता है। इस भाग को नष्ट कर देने के पश्चात् सुण्डे नीचे, गांठों की ओर, उतर कर लगभग ४-५ गांठ तक खोखला कर देते हैं। अतः इसके कारण यह भाग रस के योग्य नहीं रह जाता। यदि इस भाग से गन्ने को तोड़ा जाय तो उसमें से एक प्रकार की दुर्गन्धि सी आती है। इतना विनाश करने में



चित्र १६—गन्ने के अग्रिम भाग का विनाशक पतंग
अ—प्रौढ़ पतंग ब—बालों से सुरक्षित अण्डे स—सुण्डा द—प्युपा
क—तने के अग्रिम भाग में घुसा हुआ सुण्डा

प्रत्येक सुण्डा ५-६ सप्ताह लगाता है और अंत में बाहर निकलने के लिये एक छेद बनाता है पर अभी उसमें से बाहर नहीं निकलता। अपने निकलने की सारी तैयारी कर लेने के पश्चात् यह सुण्डा अपने चारों ओर एक खोल सी बना लेता है। इस रूप में यह प्युपा (द) कहलाता है। १०-१२ दिन में प्युपा की यह खोल फटती है। खोल फटने पर इसमें से एक पतंग अपने पूर्वजों (अ) के रंग-रूप का सुण्डे द्वारा बनाये गये छेद से बाहर निकल कर उड़ता है। यह पतंग फिर अपना पूर्ण रूप धारण करने के पश्चात् थोड़े ही दिनों में वंश-वृद्धि में योग देने लगता है।

इस पतंग के जीवन-इतिहास से यह पता लगता है कि एक वंश के उत्पन्न होने तथा पूर्ण अवस्था प्राप्त करने में लगभग ७ सप्ताह लग जाते हैं। परन्तु इसका ध्यान रखना चाहिये कि जो सुण्डे सर्दी में उत्पन्न होते हैं वे शीघ्र ही पतंग रूप नहीं धारण करते वरन् गन्ने में बनाये गये सुरंग में सुप्तावस्था में पड़े रहते हैं और फिर कुछ गर्मी आने पर ही, चैत्र (मार्च) में ये पतंग रूप धारण करते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि वर्ष में इस पतंग की ५ पीढ़ियाँ उत्पन्न हो जाती हैं।

उपर्युक्त वर्णन से हमको इसका भी ज्ञान होता है कि स्वयं पतंग तो नहीं वरन् पतंग के सुण्डे गन्ने को हानि पहुँचाते हैं। यही कारण है कि ऐसे सुण्डों को जो छेद करते हुये आगे बढ़ते हैं छेदनकर्त्ता कहा जाता है। अतः इसे "गन्ने के अग्रिम भाग का छेदनकर्त्ता" कहना अधिक उपयुक्त होगा। अपनी पूरी अवस्था प्राप्त करने पर प्रत्येक सुण्डा $\frac{1}{2}$ इंच का होता है।

भारतवर्ष में गन्ना उगाने वाले सभी क्षेत्रों में यह पतंग पाया जाता है। परन्तु उत्तर प्रदेश में इसका अधिक महत्त्व है क्योंकि इस प्रदेश में भारतवर्ष का आधा गन्ना उत्पन्न किया जाता है। इस पतंग द्वारा उत्पन्न किये गये इस विनाशकारी हानि से बचने के निम्न उपाय हैं:—

(१) बैसाख से क्वार (मई से सितम्बर) तक गन्ने की पत्तियों को देख कर उनपर लगे हुये अण्डों को एकत्रित करके नष्ट कर दीजिये। इससे अगली पीढ़ी बढ़ने नहीं पावेगी।

(२) इस पतंग के आक्रमण के कारण जिन गन्ने के पौधों की पत्तियां सूख गई हों अथवा तनों में सुरंगें बन गई हों उन्हें उखाड़ कर जला दीजिये। इससे इस पौधे में छिपे हुये सुण्डे नष्ट हो जायंगे। इससे भी उनकी वंश वृद्धि समाप्त हो जायगी।

(३) रात्रि में प्रकाश-जाल का प्रबन्ध करके उड़ते हुये पतंगों को नष्ट कर दीजिये।

(४) गन्ने की कटाई फरवरी तक समाप्त कर दीजिये ताकि सुप्तावस्था वाले सुण्डों को बढ़ने का अवकाश न मिले। यदि गर्मी आने तक गन्ने खेत में खड़े रहेंगे तो सुप्तावस्था वाले सुण्डे पतंगों में परिवर्तित हो जायंगे। फलस्वरूप अगली फ़सल में बोये जाने वाले पौधों पर ये ही पतंग अण्डे देना आरम्भ कर देंगे। अतः पुरानी फ़सल का विष नई फ़सल में पहुँच जायगा।

(५) गन्ने की फ़सल काट लेने के बाद खेत का कूड़ा-कबाड़ बटोर कर जला दीजिये ताकि बचे खुचे अण्डे, सुण्डे तथा पतंग नष्ट हो जायं।

(६) खड़ी फसल वाले खेतों में पानी न लगने दीजिये।

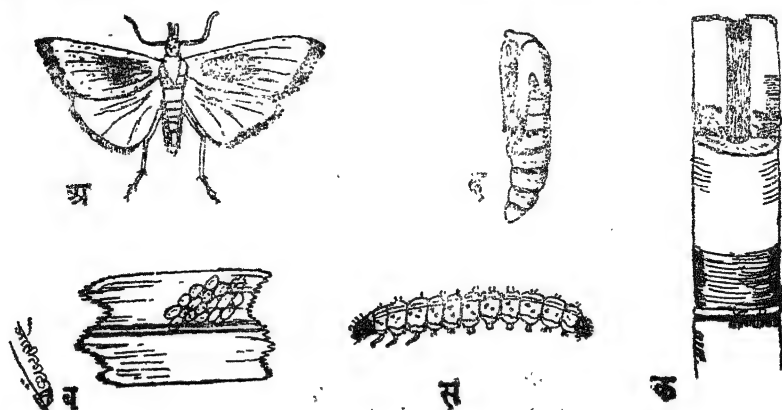
(७) ऐसी किस्म के गन्ने बोइये जिन पर पतंगों का आक्रमण कम हो सके। इस किस्म के गन्ने की जानकारी अपने क्षेत्र के जिला-कृषि अधिकारी महोदय से करें।

(८) इन सुण्डों का आक्रमण प्रारम्भ होने पर एक एक माह बाद ३ बार प्रति बीघा १२ से १८ सेर तक ५% शक्ति वाला बेन्जीन हेक्जाक्लोराइड छिड़किये।

गन्ने के तने का पतंग शत्रु

गन्ने के अग्रिम उगते हुये भाग को नष्ट करने वाले छेदनकर्त्ता की भांति कुछ ऐसे दूसरे छेदनकर्त्ता होते हैं जो तने पर आक्रमण करते हैं। तनों में छेद बनाकर ये छेदनकर्ता सुण्डे तने के भीतर का तत्त्व खाकर पूरे तने में सुरंग सी बना देते हैं (क)। इसके फलस्वरूप पूरा पौधा (गन्ना) नष्ट हो जाता है और उससे एक प्रकार की दुर्गन्ध सी आने लगती है।

इस छेदनकर्त्ता का पतंग (अ) पंखों सहित १॥ इंच चौड़ा होता है जिसके पंखों का अगला जोड़ा पिछले जोड़े से कुछ गाढ़े रंग का धब्बेदार होता है। यह पतंग भी चैत्र से कार्तिक (मार्च-अक्टूबर) तक गन्ने के खेतों में उड़ता दिखाई देता है। यह पतंग भी रात्रि में अधिक चैतन्य रहता है। परिपक्व अवस्था में ही रात्रि के समय



चित्र २०—गन्ने के तने का पतंग शत्रु

अ—पतंग ब—अण्डे स—सुण्डा द—प्युपा क—सुण्डे द्वारा तने का भीतरी भाग खाजाने के बाद तना।

मैथुन के पश्चात् मादा-पतंग गन्ने की पत्तियों के पिछले भाग पर झुण्डों में अण्डे (ब) देती है। ये अण्डे ६-७ दिन में फूटते हैं। अण्डों के फूटने पर जो सुण्डे (स) बाहर निकलते हैं वे पहले कोमल पत्तियों को खाकर कुछ शक्ति एकत्रित करने के पश्चात् कठिन तनों में छेद बना कर तने के भीतर घुस जाते हैं। पृथ्वी से कुछ ही ऊपर इन सुण्डों का छेद बनाने का कार्य प्रारम्भ होता है। बराबर रास्ता बनाते हुये ये सुण्डे ऊपर की ओर बढ़ते जाते हैं। ऊपर पहुँच कर ये उस स्थान पर भी आक्रमण करते हैं जहाँ से ऊपर का कल्ला फूटता है। अतः इस सुण्डे से तना तो खराब होता ही है, पत्तियों को जन्म देने वाला विकास-स्थान भी निकम्मा हो जाता है। भीतर ही भीतर खाते-खाते १५-२० दिन में सुण्डा अपनी पूरी अवस्था को प्राप्त कर लेता है। इस समय यह मटमैले सफेद रंग का १ इंच लम्बा होता है। इसके ऊपर आगे से पीछे की ओर पांच लम्बी धारियाँ होती हैं। इस समय भीतर से बाहर निकलने के

लिये यह सुण्डा एक छेद बनाता है परन्तु बाहर नहीं निकलता। यह सुण्डा तने के भीतर अपने चारों ओर एक खोल लपेट कर प्युपा (ब) का रूप धारण करता है। इस रूप में ८-१० दिन तक रहने के बाद खोल फटती है। खोल फटने पर प्युपा के बाहर एक पतंग निकलता है जो अपने पूर्वजों के रूप रंग का होता है। अधिक सर्दी में पूरी उम्र का सुण्डा सुरंग से बाहर निकल कर भूमि पर गिरी हुई पत्तियों तथा कूड़ा-करकट के नीचे सुप्तावस्था में प्रवेश करता है जो फिर (चैत्र-मार्च) के महीने में थोड़ी गर्मी पाने पर पतंग रूप धारण करता है।

प्युपा से निकला हुआ पतंग कुछ ही दिनों में अपनी पूर्ण अवस्था प्राप्त करने पर वंश वृद्धि में योग देना प्रारम्भ करता है। इस तरह एक वंश के उत्पन्न होने में लगभग ६ सप्ताह लगते हैं। वर्ष में पाँच पीढ़ियाँ उत्पन्न हो जाना सम्भव है।

इस पतंग के आक्रमण से जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है गन्ने के तने का मध्य भाग (क) समाप्त हो जाता है जिसके फलस्वरूप रस की कोई आशा नहीं रहती और साथ ही साथ गन्नों से दुर्गन्ध आने लगती है। फ़सल से अधिक लाभ होने की सम्भावना नहीं रहती है। इससे बचने के निम्न उपाय प्रयोग किये जा सकते हैं :—

(१) गन्ना काटने के बाद ही खेत का कूड़ा करकट साफ करके जला देना चाहिये और उसके साथ ही खेत की गहरी जुताई कर देनी चाहिये। इस उपाय से खेत में छूटे हुये अण्डे, सुण्डे और पतंग जलकर तथा पृथ्वी के बाहर आकर पक्षियों द्वारा नष्ट हो जायंगे।

(२) उन पत्तियों को देखते रहिये जिन पर अण्डे लगे हों। उन्हें एकत्रित कर नष्ट कर दीजिये।

(३) सूखी पत्तियों को पौधों से अलग खींच कर जला डालिये।

(४) ऐसे छेदों को देखते रहिये जिनमें सुण्डे हों। लोहे की बारीक़ तीली (छाते वाला तार) गरम करके उन छिद्रों में प्रवेश कर दीजिये। इस उपाय से सुण्डे भीतर ही नष्ट हो जायंगे।

(५) जिन गन्नों पर इस सुण्डे का आक्रमण हो गया हो उन्हें उखाड़कर जला दीजिये।

(६) इन सुण्डों का आक्रमण प्रारम्भ होने पर एक एक महीने बाद, प्रति बीघे में, तीन बार १२ से १८ सेर तक ५% शक्ति वाला बेन्जीन हेक्ज़ाक्लोराइड छिड़किये। गैमेक्सीन भी अधिक लाभ पहुँचाता है।

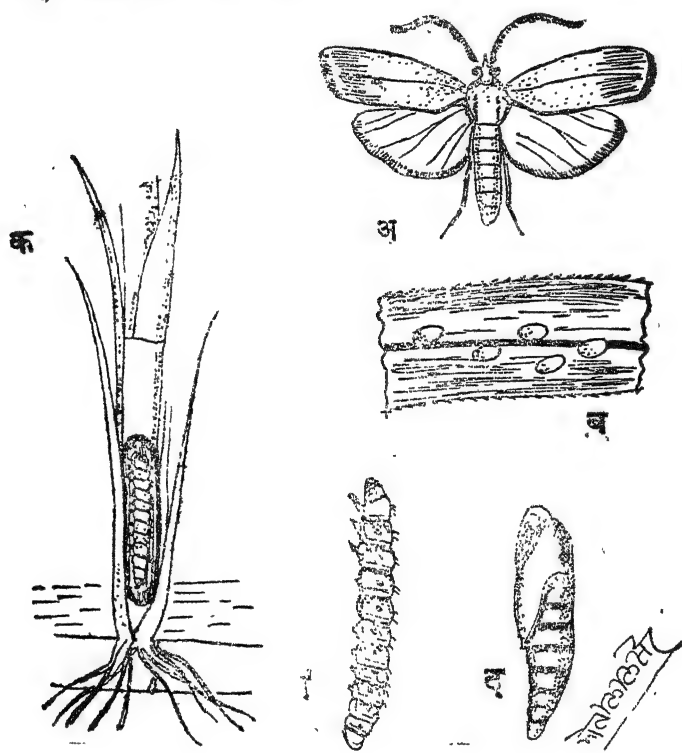
(७) अपने खेत में ऐसे गन्ने बोइये जो पुष्ट जाति के हों ताकि उनपर सुण्डों का कोई सफल आक्रमण न हो। इस सम्बन्ध में आप अपने क्षेत्र के बीज गुदाम के इंसपेक्टर या जिले के कृषि अधिकारी से उचित सलाह प्राप्त कर सकते हैं।

गन्ने की जड़ का पतंग शत्रु

गन्ने के तने और कल्ले को हानि पहुँचाने वाले पतंग की भाँति यह एक दूसरा पतंग है जिसका आक्रमण गन्ने की जड़ पर ही होता है। जड़ पर इस पतंग के आक्र-

मण से पूरे पौधे की बाढ़ मारी जाती है। अतः नये उगने वाले पौधे उग ही नहीं पाते। यदि इनका आक्रमण बढ़े हुए पौधे की जड़ पर होता है तो समूचा पौधा सूख जाता है। इनके आक्रमण को सहन करते हुये जो पौधे खड़े भी रहते हैं उनमें शक्कर (मिठास) की मात्रा ही कम हो जाती है। उत्तर प्रदेश में इस पतंग का आक्रमण अप्रैल के अंत से लेकर अक्टूबर (बैसाख से कार्तिक) तक होता है। परन्तु यह आक्रमण असाढ़-श्रावण (अगस्त) में अपनी चरम सीमा को पहुँच जाता है। गन्ने के अतिरिक्त इस पतंग का आक्रमण मकाई पर भी होता रहता है।

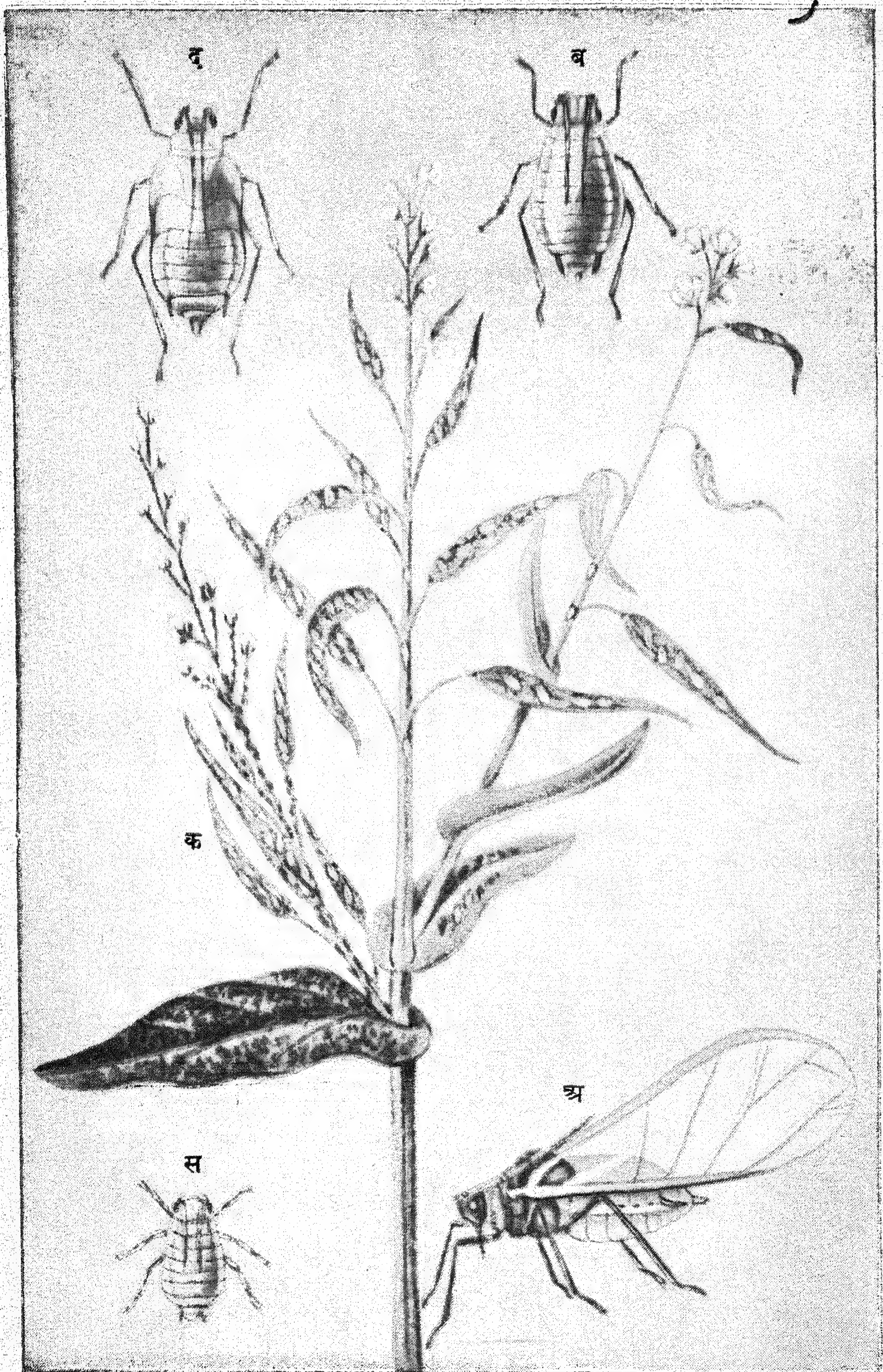
गन्ने की जड़ का पतंग (अ) मखनिया, भूसे अथवा सूखी हुई पीली घास के रंग का होता है, जिसकी फैले पंखों सहित चौड़ाई लगभग १$\frac{१}{४}$ इंच होती है। पूर्ण



चित्र २१—गन्ने की जड़ का पतंग शत्रु

अ—प्रौढ पतंग ब—पत्ती पर अण्डे स—सुण्डा द—प्युपा क—जड़ के ऊपरी भाग के भीतर घुसा हुआ सुण्डा

अवस्था प्राप्त करने के पश्चात् मादा-पतंग रात्रि के समय गन्ने की पत्तियों के निचले भाग तथा तनों पर हल्के पीले रंग के कुछ चपटे अण्डे (ब) देती है। ये अण्डे एक झुण्ड में नहीं वरन् अलग अलग बिखरे रहते हैं। ये पतंग अण्डा देने का यह कार्य अप्रैल के अन्तिम अथवा मई के प्रथम सप्ताह में प्रारम्भ कर देते हैं। अण्डे अपने रूप में ४-५ दिन तक पड़े रहते हैं। इसके पश्चात्, प्रत्येक अण्डे के फूटने पर, एक



सरसों का मांहूं पतंग

अ—प्रौढ़ पंखधारी मादा मांहं ब—पंखहीन मादा मांहं स—कीट शिशु

सुण्डा (स) निकलता है जो पत्तियों अथवा तनों से खिसक कर तने के सहारे पृथ्वी पर पहुँच जाता है। यहां से यह सुण्डा किसी प्रकार से गन्ने के अंतिम भाग पर पहुँच कर एक छेद बनाता है और उसमें घुस कर उस भाग का भीतरी तत्व खाता (क) रहता है। जैसा कि पहिले ही लिखा जा चुका है इस सुण्डे के आक्रमण से कोमल और नया बढ़ता हुआ गन्ने का पौधा समाप्त हो जाता है। अगल बगल की पत्तियाँ सूख जाती हैं। बीच का तना भीतर पोला हो जाता है। यदि तने को जोर से खींचा जाय तो कुछ भाग ऊपर निकल आता है परन्तु कुछ पीछे नीचे छूट जाता है। पतंग का यह सुण्डा, इस प्रकार की हानि, लगभग ६-७ सप्ताह में करता है। इस समय इसकी पूरी उम्र होती है। इसकी अधिक से अधिक लम्बाई १$\frac{1}{2}$ इंच तथा रंग हल्का पीला मखनियां होता है। इसके पश्चात् यह भूमि-सतह से ऊपर आकर तने के भीतर से छेद बनाता है। परन्तु इसी समय बाहर नहीं निकल पड़ता। उस बनाये गये छेद को सुण्डा अपने मुँह द्वारा निकाले गये एक लसदार पदार्थ तथा गन्ने के भीतर के बहुत छोटे-छोटे टुकड़ों से बहुत ढीलाढाला बन्द कर देता है। फिर तने के भीतर ही अपने चारों ओर एक खोल बना कर प्युपा रूप धारण कर (द) १२-१३ दिन तक पड़ा रहता है। अधिक जाड़ा प्रारम्भ होने पर प्रत्येक सुण्डे (गन्ने की जड़वाले) सुप्तावस्था धारण करते हैं और कुछ गर्मी पड़ते ही पतंग रूप में परिवर्त्तित हो जाते हैं। प्युपा की खोल फटती है। इस समय इसमें से जो पतंग बाहर निकलता है वह अपने पूर्वजों के समान (अ) होता है। यह पतंग थोड़े समय के बाद ही फिर वंशवृद्धि में लग जाता है। प्रत्येक पीढ़ी के उत्पन्न होने तथा पूर्णावस्था प्राप्त करने में ६०-७० दिन लग जाते हैं। पूरे वर्ष में इनकी २-३ पीढ़ियां उत्पन्न होती हैं।

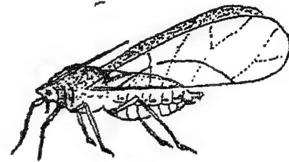
इस पतंग का आक्रमण सम्पूर्ण भारत में विख्यात है। पंजाब, उत्तर प्रदेश तथा बिहार प्रान्तों में इससे अधिक हानि होती है। इसके इस हानि से बचने के लिये उन्हीं उपायों का प्रयोग कीजिये जिन्हें गन्ने के तनों में लगने वाले पतंगों की हानि से बचने के लिये बताया गया है।

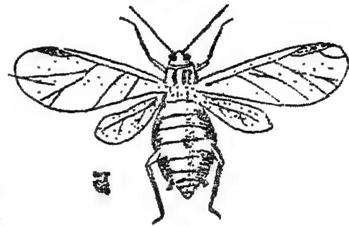
सरसों का पतंग शत्रु मांहूं

मांहूं पतंग को लाही भी कहते हैं। मांहूं सरसों के अतिरिक्त गोभी, मूली, बन्दगोभी तथा शलजम पर भी लगते हैं प्रत्येक मांहूं पतंग (अ-ब) हल्के हरे पीले रंग का लम्बाई में $\frac{1}{6}$ या $\frac{1}{10}$ इंच का होता है। इस पतंग के शरीर के पिछले भाग पर ऊपर की ओर दो छोटी छोटी (सींग के समान) नली लगी रहती है। इस पतंग की विशेष पहिचान यही है। इसका मुँह काट खाने के लिए नहीं वरन् पौधों का रस चूसने के योग्य बना रहता है। अतः इस विशेष प्रकार के मुँह के सहारे यह पौधों पर लिपटा शांति पूर्वक रस चूसता रहता है। देखने में साधारण, सीधा सादा परन्तु आक्रमण में यह पतंग विशेष भयंकर होता है। इस प्रकृति से मिलते जुलते मनुष्य को भी मांहूं की उपाधि दी जाती है। मांहूं पतंग, पंखधारी तथा पंखहीन, दोनों प्रकार के होते हैं। इनमें पंखधारी वही होते हैं जिन्हें (अ-ब) इधर उधर उड़कर विशेष भोजन का प्रबन्ध करना पड़ता है तथा जो वंशवृद्धि में योग देते हैं। मैथुन

के पश्चात् पतंग-मादा अण्डे न देकर पंखरहित पतंगों को जन्म देती है। मांहूं की एक और जाति है जो भूरी-काली होती है। इस जाति के पतंग सरसों के मांहूं पतंगों से कुछ बड़े होते हैं। ये अधिकतर गुलाब तथा बरबट्टा (बोड़ा) पर दिखाई पड़ते हैं ।









चित्र २२

अ—प्रौढ़ पतंग (बगल से) ब—फैले पंखों सहित पतंग स—छोटा पतंग (कीट-शिशु) द—सम्पूर्ण तने पर मांहूं का आक्रमण

सरसों का मांहूं पतंग, जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है, हल्का हरा-पीला रंग मिश्रित तथा १/८-१/१० इंच लम्बा होता है। थोड़ी सर्दी बढ़ते ही अगहन, पूस और माघ (नवम्बर, दिसम्बर और जनवरी) में मांहूं पतंग सरसों के पौधे के तनों पर चिपके (द) दिखाई पड़ते हैं। इन्हें आप तनिक भी हिलते हुये न देखेंगे। ये तनों पर चिपके शान्ति-पूर्वक रस चूसते रहते हैं। थोड़े समय के भीतर (८-१० दिन) एक ही डाल पर असंख्य मांहूं पतंग दिखाई पड़ने लगते हैं। ऐसा क्यों होता है? इसे ध्यान-पूर्वक पढ़ें। पतंग-मादा बिना पतंग-नर की सहायता से ही अण्डों के स्थान पर छोटे छोटे "कीट-शिशु" (स) उत्पन्न करती हैं। ये नये कीट-शिशु अपने जन्मदाता पतंग की तरह पौधों की डालों पर चिपक कर भोजन प्राप्त करते रहते हैं। इस आकार प्रकार के कीट-शिशुओं की कई पीढ़ियाँ उत्पन्न होती हैं। अतः इनके आक्रमण के कारण पौधे का पूरा भाग ढक जाता है इसे दूर से नहीं पहिचाना जा सकता। पौधे का कोई ऐसा भाग नहीं बच पाता जिसे ये पतंग छोड़ देते हों।

इनके इस आक्रमण के फलस्वरूप पौधे की बाढ़ मारी जाती है। फल फूल कम लगते हैं। जो बीज तैयार होते हैं वे निर्बल और शक्तिहीन होते हैं। इनकी इस हानि से बचने के लिये निम्न उपाय प्रयोग किये जा सकते हैं :—

(१) पौधों पर रोज़िन का मिश्रण बनाकर छिड़क दीजिये। इस छिड़काव से अधिक लाभ होगा। इसे बनाने की बिधि गन्ने की सफेद मक्खी के वर्णन में दिया गया है।

(२) प्रति बीघे में १७–१८ पौंड (लगभग ६ सेर) ५% शक्ति वाला बेन्जीन हेक्साक्लोराइड लेकर भुहराने वाली मशीन ❀ से भुहरा दीजिये। यह रसायन चांद मार्का खाद बेंचने वालों के यहां लगभग आठ आने प्रति पौंड बिकती है।

(३) लेकिन मांहू भगाने के लिये तम्बाकू का काढ़ा छिड़कना एक सरल उपाय है। इसे इस प्रकार बनाया जा सकता है :—

१ सेर तम्बाकू की अच्छी अच्छी पत्तियां लीजिये। उन्हें २० सेर पानी में खूब उबालिये। बीच बीच में पानी को किसी लकड़ी की पौनी से घोंटते रहने से अधिक सत्त निकलता है। इसी पानी में १ सेर साबुन टुकड़े टुकड़े काटकर मिला दीजिये। २-३ सेर पानी जल जाने पर इसे उतार लीजिये। काढ़े को निथार कर उसमें उसका ८ गुना पानी मिलाकर छिड़काव कीजिये। इससे लाभ होगा। इस काढ़े को और अच्छा बनाने के लिए तम्बाकू और पानी खौलाने के अधिक पहिले तम्बाकू को २४ घंटे पानी में भिगो कर रख दीजिये और फिर बाद में उबालिये। इससे बड़ा गुणकारी काढ़ा बनेगा।

चने का कटुआ सुण्डा

चने के कटुये भी एक प्रकार के पतंग के सुण्डे होते हैं जो नये निकलते हुये कोमल चने के तनों को काटकर तथा पत्तियों को खाकर खेत की पैदावार कम कर देते हैं। पर इनका आक्रमण चने के अतिरिक्त तम्बाकू और आलू पर भी होता है। जिस समय आलू के पौधे ६–१० इंच के हो जाते हैं इनका आक्रमण अधिक भीषण रूप धारण करता है। अपनी छोटी अवस्था में तो ये पत्तियाँ खाकर ही तृप्त रहते हैं परन्तु कुछ बड़े होने पर ये तनों तथा फूलों पर आक्रमण करते हैं।

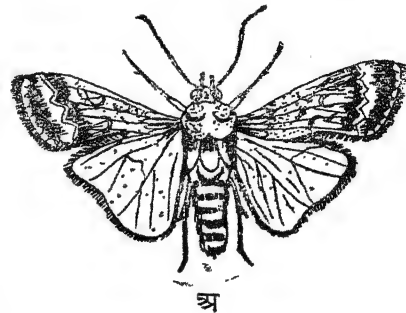
प्रत्येक कटुआ सुण्डे की लम्बाई लगभग १$\frac{3}{4}$ इंच की होती है। इसका रंग मटमैला भूरा होता है। इस सुण्डे का प्रौढ़ पतंग (अ) फैले पंखों सहित १$\frac{3}{4}$ से २$\frac{1}{4}$ इंच चौड़ा गेहुंये रंग का होता है जिसके अगले पंखों पर पिछले पंखों से अधिक लहरिया और भूरे धब्बे होते हैं।

वर्षा समाप्त होते ही थोड़े दिन बाद (कार्त्तिक में) चने की बोआई आरम्भ हो जाती है। उसी समय उत्तरी भारत के पहाड़ी ठंढे स्थानों से आकर ये पतंग सिंध गंगा के मैदानी भाग तथा इसके भी दक्षिण फैल जाते हैं। प्रौढ़ मादा-पतंग इसी समय (जाड़े के पहिले दूसरे महीने तक) चने तथा अन्य बेकार घासों की पत्तियों की निचली सतह पर केवल रात्रि के हल्के बसंती रंग के अण्डे देती है। ये अण्डे ४-७ दिन के भीतर फूट जाते हैं जिसके फलस्वरूप अण्डों के बाहर सुण्डे निकलते हैं। जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है अण्डों से निकलने पर सुण्डे सर्व-

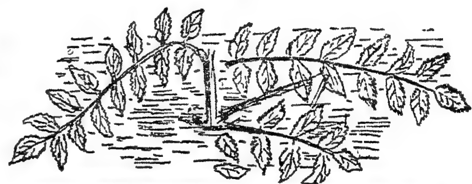
---

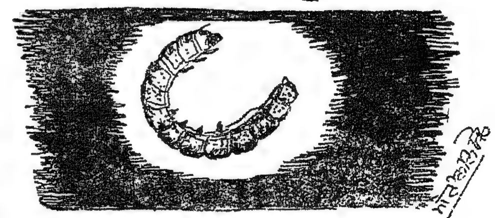
❀ भुहराने और छिड़कने वाली मशीन का वर्णन अध्याय ३ में देखिये।

प्रथम कोमल पत्तियों पर आक्रमण करते हैं और जब कुछ शक्तिशाली एवं बड़े हो जाते हैं तो ये तनों की ओर भी बढ़ते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि इन सुण्डों द्वारा एक रात में खेत के अधिकांश पौधे कटकर (स) धराशायी हो जाते हैं। पूरी फसल मारी पड़ जाती है। उस समय किसान इतना ही कहकर रह जाते हैं कि उनके खेत में कटुआ लग गये। वे इन्हें पहिचानते हैं लेकिन करें क्या ? दिन में सुण्डे (कटुये) दिखाई ही नहीं पड़ते क्योंकि उस समय वे पौधों के पास कहीं इधर उधर भूमि में छिप जाते हैं और फिर रात होते ही अपना कार्य आरम्भ कर देते हैं। अगर इधर उधर पास में आलू के पौधे मिले तो उन्हें भी काटना आरम्भ कर देते हैं। इस प्रकार २५-३० दिन पूरा भोजन प्राप्त कर लेने पर प्रत्येक सुण्डा (ब) भूमि में घुसकर (स) अपने ऊपर एक खोल चढ़ा कर प्युपा रूप धारण करता है। यह रूप तापक्रम (सर्दी-गर्मी) के आधार पर १० से ३० दिन तक का होता है। इसके पश्चात् प्युपा की खोल फटती है और उसमें से अपने पूर्वजों के रूप रंग का एक पतंग (अ) बाहर निकलता है परिपक्व अवस्था प्राप्त करने पर पतंग-मादा मैथुन के पश्चात् अण्डे देती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि एक पीढ़ी की उत्पत्ति में लगभग ४० से ६०-६५ दिन तक लग जाते हैं। यदि परिस्थितियां अनुकूल रहीं तो मैदानी क्षेत्र में, फसल तक में, दो पीढ़ियां उत्पन्न हो जाती हैं। जहां गर्मी या नमी अधिक दिनों तक रहती है वहाँ ३-४ पीढ़ियाँ तक उत्पन्न हो सकती हैं।


अ


ब




स

चित्र २३—चने का कटुआ
अ—प्रौढ़ पतंग ब—सुण्डा स—चने का कटा पौधा और भूमि में घुसा हुआ सुण्डा

इनके इस आर्थिक हानि से बचने के लिये निम्न उपायों का प्रयोग किया जा सकता है:—

(१) अण्डे देने के लिये इस सुण्डे के प्रौढ़ पतंग रात्रि में उड़ते हैं अतः उन्हें फँसाने के लिये प्रकाश-जाल का प्रबन्ध कीजिये।

(२) रात्रि में चोरबत्ती, टार्च या बैटरी की सहायता से चने के पौधों पर चढ़े सुण्डों को पकड़ कर नष्ट कर दीजिये।

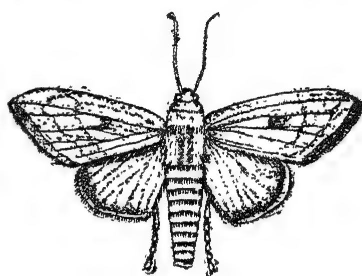
(३) दिन में सुण्डे कटे हुये चने के पौधों के समीप भूमि में छिपे रहते हैं, अतः उन्हें भी ढूंढ़ कर नष्ट कर दीजिये।

(४) चने के पौधों के नीचे की भूमि पर ८-६ सेर प्रति बीघा ५% शक्तिवाला वेन्ज़ीन हेक्ज़ाक्लोराइड छिड़क दें। भूमि में छिपे सुण्डे इस औषधि के सम्पर्क में आते ही मरने लगेगें। गैमेक्सीन डी. ०२५ भी अधिक लाभदायक कीटमार है।

चने की ठोंठी का सुण्डा

चने के तनों को काटने वाले कटुआ सुण्डों के अतिरिक्त एक ऐसा सुण्डा होता है जो चने की ठोंठियों में घुस कर हरे और बढ़ते हुए चनों पर आक्रमण करता है। इसे चने का साधारण सुण्डा कहते हैं। अपने विनाशकारी आक्रमण के लिए यह भारतवर्ष में ही नहीं वरन् सम्पूर्ण विश्व में विख्यात है। चने के अतिरिक्त अनुकूल परिस्थिति में यह टमाटर, तम्बाकू तथा मकाई इत्यादि पर भी आक्रमण करता है। अमेरिका में यह रुई का सुण्डा बन कर लगभग १२० लाख डालर की हानि पहुँचाती है। पूरी अवस्था का यह सुण्डा २ ईंच लम्बा तथा हरा-भूरा मिश्रित रंग का होता है। साथ ही साथ इसके शरीर पर आगे से पीछे कुछ अपूर्ण धारियाँ होती हैं।

इस सुण्डे का पौढ़ पतंग (अ) हल्के भूरे रंग का होता है। इसकी फैले पंखों सहित चौड़ाई लगभग १½ इंच होती है। अगले दोनों पंखों पर छोटे छोटे धब्बे होते हैं, परन्तु पिछले पंख अधिक गाढ़े न होकर हल्के रंग के होते हैं। ये पतंग दिन की अपेक्षा रात्रि में अधिक चंचल होते हैं। दिन में तो ये पेड़ों की फटान (खोह) में ही समय काटते हैं। पूर्ण अवस्था प्राप्त करने के पश्चात् पतंग-मादा गोधूली के बाद ही चने या अन्य पौधों की पत्तियों पर अण्डे देती है। अण्डे देने की यह क्रिया अगहन-पूस (नवम्बर-दिसम्बर) में आरम्भ होती है। ६-७ दिन में अण्डे फूटते हैं। जो सुण्डे (ब) अण्डों से बाहर निकलते हैं वे सर्वप्रथम पत्तियों को ही खाना प्रारम्भ करते हैं। तत्पश्चात् वे समय पाकर चने की ठोंठियों में



अ



ब



स

चित्र २४—ठोंठी का सुण्डा
अ—प्रौढ़ पतंग ब—सुण्डा
स—चने की ठोंठी को खाते हुये सुण्डे।

छेद बनाकर उसमें घुसते नहीं वरन् अपने शरीर का अग्रिम भाग प्रवेश कर (स) चने पर आक्रमण करते हैं। १५-१६ दिन के भीतर ही ये सुण्डे पूर्ण स्वस्थ और चुस्त हो जाते हैं। इनमें एक विशेषता यह है कि ये सुण्डे आपस में लड़कर एक-दूसरे को खाते रहते हैं। पूर्ण भोजन कर लेने के पश्चात् ये सुण्डे चने के पौधे से नीचे गिरकर भूमि में एक स्थान बनाकर १०-१२ दिन के लिए प्युपा रूप धारण करते हैं। अधिक सर्दी में (जनवरी-फरवरी) सुण्डा भूमिपर आकर सुप्तावस्था धारण कर समय बिताता है। थोड़ी सी गर्मी पड़ते ही (चैत्र-मार्च) सुण्डा प्युपा रूप धारण करता है और प्रौढ़ बन जाता है।

प्युपा की खोल फटते ही जो पतंग बाहर निकलता है वह अपने जन्मदाता पतंग (अ) की भांति और उन्हीं के रूप रंग का होता है। इस पतंग का पूरा जीवन इतिहास लगभग ३५-३६ दिन का होता है। वर्ष भर में अनुकूल परिस्थिति में इनकी ५ पीढ़ियों का उत्पन्न हो जाना सम्भव है।

इस पतंग के आक्रमण से रक्षा के लिये निम्न उपायों का प्रयोग किया जा सकता है :—

(१) खेत की गहरी जुताई कर देने से मिट्टी के भीतर छिपे हुए प्युपे तथा सुण्डे बाहर आ जायंगे और पक्षियों द्वारा नष्ट कर दिये जायंगे।

(२) साधारणतः छोटे बालकों को सिखाकर इन सुण्डों को हाथ से ही बीन लेने में अधिक सफलता मिलती है।

(३) खेत में फसलों का हेर-फेर करके बोना भी लाभदायक होगा।

(४) इन सुण्डों को मारने के लिए बेन्ज़ीन हेक्ज़ाक्लोराइड का प्रयोग उसी प्रकार कीजिये जैसे चने के कदुआ सुण्डों को नष्ट करने के लिये बताया गया है।

मटर की पत्ती का पतंग

मटर की पत्तियों को हानि पहुँचाने वाले पतंग (अ) साधारणतः मक्खी के रूप के होते हैं। हां इनकी लम्बाई-चौड़ाई साधारण मक्खी से कम होती है। पूस-माघ (जनवरी-फरवरी) में ये पतंग मटर के खेतों में उड़ते हुए दिखाई पड़ते हैं। मैथुन के पश्चात् इसकी पतंग-मादा पत्तियों में छोटे छोटे छेद बनाकर लगभग ३-४ सौ अण्डे देती है। ये अण्डे ७-८ दिन में फूट जाते हैं। इन अण्डों के फूटने पर जो सुण्डे बाहर निकलते हैं वे बड़े खतरनाक होते हैं क्योंकि ये ही सुण्डे अपने भोजन के लिये पत्तियों के ऊपरी भाग को खाना प्रारम्भ कर देते हैं। इनकी इस क्रिया के फलस्वरूप वे सम्पूर्ण पत्तियों पर श्वेत-भूरी मिश्रित रेखायें (ब) बना देते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि पत्तियाँ मुरझाने लगती हैं और पेड़ की वृद्धि समाप्त हो जाती है। फल-फूल कम लगते हैं जिसका प्रभाव उपज पर भी पड़ता है।

इस प्रकार भोजन प्राप्त करके पेट भर लेने पर सुण्डे अपने ऊपर एक खोल चढ़ाते हुए पत्तियों पर बनी हुई सुरंगों में घुस जाते हैं। वहाँ ७-८ दिन के पश्चात् खोल फटती है और उनमें से प्रौढ़ पतंग बाहर निकलकर उड़ने लगते हैं। नर-मादा पतंगों

में पुनः मैथुन होता है, अण्डे दिये जाते हैं और इस तरह जीवन वृत्त फिर प्रारम्भ हो जाती है। इसके फलस्वरूप केवल सर्दी के समय इन पतंगों की ४-५ पीढ़ियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। गर्मी बढ़ जाने पर ये पतंग आंखों से ओझल हो जाते हैं और पुनः सर्दी में ही दिखाई पड़ते हैं।



चित्र २५—मटर की पत्ती का पतंग
अ—प्रौढ़ पतंग ब—मटर की पत्ती पर बनाई गई सुरंगे

अब आप समझ गये होंगे कि मटर की पत्तियों का पतंग पत्तियों पर स्वयं हमला नहीं करता। पत्तियों का हरा तत्व खाने वाले तो इनके सुण्डे होते हैं। बिना पत्तियों के हरे पदार्थ को खाये सुण्डे न तो बढ़ सकते हैं और न पतंगों में परिवर्त्तित ही हो सकते हैं। इन पतंगों का आक्रमण केवल मटर तक ही सीमित नहीं रहता वरन् इनकी हानिकारक आदत से पालक, जवा, गेहूँ, गोभी, सरसों तथा चुकन्दर इत्यादि की पत्तियों को भी अधिक क्षति उठानी पड़ती है।

इनकी इस हानि से बचने के लिये निम्न उपाय प्रयोग कीजिये :—

(१) जिन पत्तियों पर सफेद धारियां और सुरंगें दिखाई पड़ें उन्हें पौधों से अलग करके इधर-उधर फेकिए नहीं वरन् जला दीजिये।

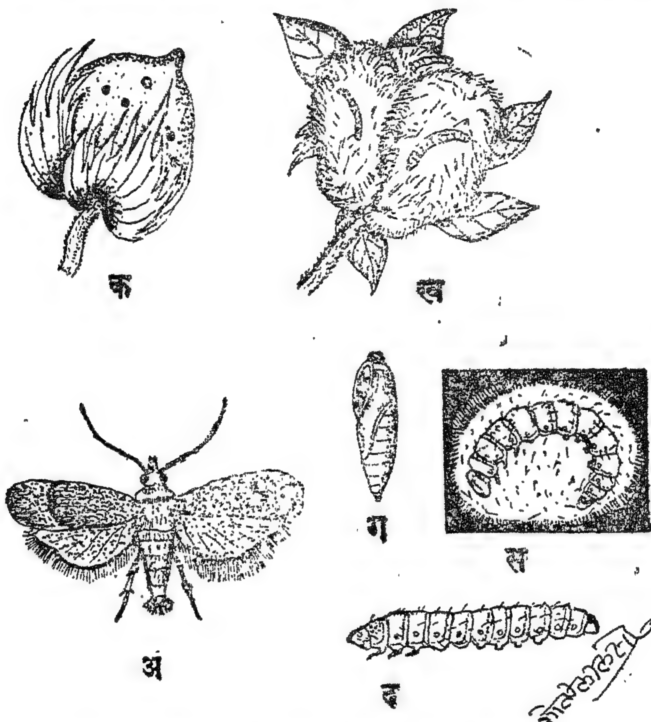
(२) तम्बाकू की पत्तियाँ १ पाव लेकर ३-४ सेर पानी में उबालिये। पत्ती उबालते समय पानी में २-३ छटांक साबुन (नहाने वाला) के टुकड़े भी डाल दीजिये। साबुन गलकर पानी में मिल जायगा। अब काढ़े को चूल्हे से उतारकर छान लीजिये। इस काढ़े में १० गुना पानी मिलाकर पौधों पर छिड़क दीजिये। अधिक सफलता प्राप्त होगी। यह छिड़काव १२-१३ दिन बाद २-३ बार फिर करिये। ऐसी दवाइयों के छिड़कने के सम्बन्ध में अध्याय ३ का अध्ययन कीजिये।

(३) ५% शक्तिवाला बेन्जीन हेक्ज़ाक्लोराइड एक बीघे में ५-६ सेर, मटर के पौधों पर, नवम्बर से जनवरी (अगहन से माघ) तक में ३-४ बार भुहरा दीजिये। गैमेक्सीन डी.०२५ भी अधिक लाभदायक होता है।

कपास का लाल सुण्डा

तितली के समान एक पतंग (अ) होता है जिसकी पंखों सहित चौड़ाई आधा इंच तथा रंग भूरा होता है। इसके पंख पर कत्थई रंग के कुछ धब्बे होते हैं जो अगले

पंख ओठों पर अधिक गाढ़े होते हैं। यह पतंग केवल रात्रि में ही बाहर निकलता है और प्रकाश की ओर आकर्षित होता है, लेकिन दिन में छिपा कहीं समय काटता है। वर्षा के पहिले भाग तथा उसके पूर्व भी, ज्येष्ठ (मई-जून) मास में, ये पतंग इधर-उधर उड़ते हुए दिखाई पड़ते हैं। इस अवस्था में ये पतंग स्वयं कृषि को हानि नहीं पहुँचाते। अनुकूल वातावरण में ये पतंग कोमल पत्तियों, नये निकलते हुए तनों, कलियों और फूलों पर अण्डे देते हैं। ये अण्डे ८-१० दिन में फूट जाते हैं। इनके फूटने पर जो सुण्डे (द) बाहर निकलते हैं वे ही बड़े विनाशकारी होते हैं। ये सुण्डे शीघ्र ही इधर उधर पौधों के भागों को खाना आरम्भ कर देते हैं। कुछ ही दिनों के अन्दर (१५-



चित्र २६—कपास का लाल सुण्डा और उसका पतंग
अ—प्रौढ़ पतंग द—सुण्डा ग—प्युपा स—ढोंढ़ के भीतर घुसा हुआ सुण्डा
क—सुण्डों द्वारा छेद किया गया कपास का ढोंढ़ ख—फूटे कपास के ढोंढ़ पर सुण्डे

२० दिन) ये लाल हो जाते हैं। इस समय ये अधिक स्वस्थ और महान विनाशकारी रूप धारण करते हैं। रंग लाल होने के कारण ही इसे कपास का लाल सुण्डा या कपास का लाल कीड़ा कहते हैं।

इस पतंग का साम्राज्य विश्व भर में फैला हुआ है। कपास का सबसे बड़ा शत्रु होने के साथ ही साथ प्रसिद्ध अमेरिकी पतंगशास्त्री, मेटकाफ और फ्लिट, के शब्दों में यह विश्व के छः महान विनाशकारी पतंगों में से एक है। इस पतंग के आक्रमण के कारण कपास के फूल कली के रूप में ही मुरझा जाते हैं और रुई पड़ने ही नहीं पाती।

हमारे देश में इस पतंग के आक्रमण से २० से ४० प्रतिशत रुई की हानि के कारण प्रतिवर्ष कई करोड़ रुपये की हानि होती है। इसके कारण ही अपने देश में रुई की पैदावार दिन प्रतिदिन घटती गई।

जैसा कि पहिले ही लिखा जा चुका है अनुकूल वातावरण में पतंग-मादा कपास की कोमल पत्तियों, डंठलों, कलियों और फूलों पर अण्डे देती है। अण्डों के फूटने पर सुण्डे बड़ी शीघ्र गति से खिसकते हुए आगे बढ़ते हैं। इस समय इनका रंग श्वेत होता है। सर्व प्रथम इन सुण्डों का आक्रमण कोमल भागों पर ही होता है जिसके फलस्वरूप ये कपास के फूल, कलियों तथा ढोंढ़ में (क-ख) छेद बनाते और उसके भीतरी तत्व को खाते हुए भीतर घुस जाते हैं। यह पहले भी बताया गया है कि १५-२० दिन में सुण्डे १/२ इंच के होकर लाल हो जाते हैं। इसी समय ये सुण्डे पौधे से खिसक कर भूमि पर गिर पड़ते हैं और पत्तियों के भीतर छिप जाते हैं। वहीं पड़े-पड़े प्रत्येक सुण्डा अपने चारों ओर अपने मुँह से निकाले गये सिल्क के धागों की सहायता से खोल बना लेता है और प्युपा (ग) रूप में परिवर्तित हो जाता है। इस दशा में ८-१० दिन तक रहने के पश्चात् खोल फटती है और उसमें से एक प्रौढ़ पतंग बाहर निकलता है जो रूप-रंग में अपने पूर्वजों के समान होता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अण्डे के रूप से लेकर पतंग के प्रौढ़ रूप का जीवनकाल केवल ३० से ३५ दिन तक का होता है। अतः वर्ष में इस पतंग की कई पीढ़ियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। परन्तु यह भी जान लेना परमावश्यक है कि अधिक जाड़े के समय अण्डों से जो सुण्डे बाहर निकलते हैं वे ठंढक के कारण भूमि पर गिरने की अपेक्षा ढोंढ़ में (स) घुसने की अधिक चेष्टा करते हैं और पूर्ण अवस्था प्राप्त कर लेने पर वे, ढोंढ़ के भीतर ही, बिनौले में अपने ऊपर सिल्क की खोली चढ़ाकर पड़े रहते हैं। इस प्रकार जहाँ कहीं भी बिनौला जाता है लाल सुण्डे प्युपा के रूप में बिनौले के भीतर साथ-साथ चले जाते हैं। नये स्थान पर पहुँचने के बाद उचित वातावरण मिलने पर प्युपा की खोल फटती है और नया पतंग फिर बाहर निकल कर अपनी नई जीवनवृत्त प्रारम्भ करता है और फिर नये विनाश के लिए अण्डे देना आरम्भ कर देता है। अतः उपर्युक्त वर्णन से आपको ज्ञात हो गया होगा कि ये पतंग किस प्रकार से खेत में तथा किस रीति से गुदाम तथा गुदाम से पुनः खेत में पहुँचते हैं।

राष्ट्रीय दृष्टिकोण से कपास तथा कपास के पौधों की इस पतंग से रक्षा होना अति आवश्यक है। इसकी रक्षा के निम्न उपाय हैं:—

(१) कपास के पौधों को हिला दीजिये इससे सुण्डे भूमि पर गिर जायँगे। इस प्रकार जो सुण्डे गिरें उन्हें पकड़ कर नष्ट कर दीजिये।

(२) कपास उतार लेने के बाद खेत में बचे हुए डंठल, पत्तियां तथा फूल और ढोंढ़ इत्यादि एकत्रित करके जला दीजिये। इसमें जो सुण्डे छिपे होंगे वे नष्ट हो जायंगे। गोदाम में रखने के पहले कपास अथवा बिनौले को बैसाख और ज्येष्ठ की कड़ी दोपहरी में फैलाकर गर्म कर लेना चाहिये। इस उपाय से रुई अथवा बिनौले में

घुसे हुए सुण्डे जलकर नष्ट हो जायंगे। कपास फैलाने के लिए जमीन पक्की और सीमेंट की हो तो और अच्छा होता है। इससे कपास नीचे से भी गर्म हो जायगी।

(३) गर्मी में फैलाकर अथवा भाप द्वारा गर्म किये हुये बिनौले को ही कपास के लिए बोइये। अन्यथा अंकुर निकलने के स्थान पर पृथ्वी के बाहर पतंग ही निकलेंगे जो अगली फ़सल को रोगी बना देंगे।

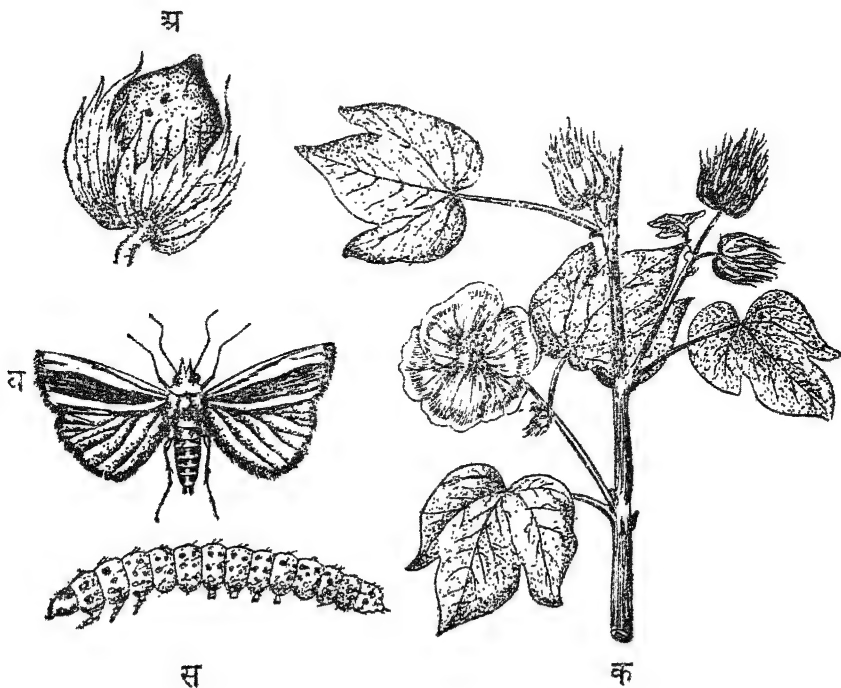
(४) पौधों पर ५% शक्तिवाला बेन्ज़ीन हेक्ज़ाक्लोराइड भुहराइये ताकि इस रसायन के सम्पर्क से सुण्डे नष्ट हो जायं। एक बीघे के लिये यह औषधि ७-८ सेर पर्याप्त होगी।

कपास का धब्बेदार सुण्डा

कपास की ढोंढ़ तथा रुई के रेशों को हानि पहुँचाने वाले दूसरे पतंग के सुण्डे को धब्बेदार सुण्डा या केवल कपास का सुण्डा कहते हैं। यह सुण्डा कपास का एक महान विनाशकारी शत्रु है। इसका आक्रमण पहले सुण्डे की भांति नन्हें कोमल तनों, पत्तियों तथा पकते हुए कपास के ढोंढ़ों पर होता है। भारत में इससे प्रति वर्ष २५ से ४५ प्रतिशत कपास की हानि होती है। इससे भारत राष्ट्र का कई करोड़ रुपया बेकार चला जाता है। इस पतंग का आक्रमण कपास पर ही नहीं वरन् कपास के जाति के अन्य पौधों (भिण्डी इत्यादि) पर भी होता है। इस सुण्डे का आक्रमण मध्य भारत, दक्षिण भारत तथा उत्तर प्रदेश में अधिक होता है।

जिस पतंग (अ) से धब्बेदार सुण्डे उत्पन्न होते हैं वह तितली के समान फैले पंखों सहित लगभग एक इंच का होता है। उसके पंखों का रंग मटमैला पीला तथा हरा मिश्रित होता है। अगले पंखों पर हरी रंगीन धारियां होती हैं। इन धारियों की अधिक संख्या के कारण अगला जोड़ा अधिक गाढ़ा हरा दिखाई पड़ता है। इस रूप और अवस्था में यह पतंग कपास के पौधों को तनिक भी हानि नहीं पहुँचाता। रात्रि के समय मादा-पतंग मैथुन के पश्चात् कोमल पत्तियों, डंठलों, फूलों और ढोंढ़ों पर अण्डे देती है। प्रत्येक अण्डा पहलदार तथा कुछ नीले रंग का होता है। सर्दी की अधिकता के कारण ये अण्डे १५-१६ दिन में फूटते हैं। परन्तु गर्मी में इन अंडों के फूटने में केवल ५-६ दिन ही लगते हैं। अंडों के फूटने पर सुण्डे (स) उसी स्थान को खाना प्रारम्भ कर देते हैं जहां अण्डे रखे होते हैं। परन्तु यह उनका कोई विशेष नियम नहीं है। समयानुकूल शक्ति के अनुसार वे इधर-उधर विचरण करके अपने भोजन का प्रबन्ध करते हैं। एक डाल के सभी ढोंढ़ों पर (क) आक्रमण हो जाना एक साधारण सी बात है। पूरी उम्र के प्रत्येक सुण्डे की लम्बाई लगभग एक इंच की होती है। इस समय यह सुण्डा महान विनाशकारी होता है। इस सुण्डे का रंग हरा तथा इसके शरीर पर काले धब्बे होते हैं। इन धब्बों की उपस्थिति के कारण ही यह धब्बेदार सुण्डे के नाम से प्रसिद्ध है। इन धब्बों के साथ ही साथ सुण्डों के शरीर पर तेज बाल अथवा रोयें होते हैं। लगातार ११-१२ दिन भोजन करते रहने पर ही ये सुण्डे अपनी पूरी खुराक पा सकते हैं। सर्दी के दिनों में वे लगातार २॥-२॥ महीने तक खाते रहते हैं। इन सुण्डों के विनाशकारी आक्रमण के कारण अधिकांश पौधे

निर्जीव होकर धराशायी हो जाते हैं। उनकी बाढ़ भी रुक जाती है। फल और फूलों का लगना कम हो जाता है। भरपेट भोजन कर लेने पर सुण्डे पेड़ से भूमि पर गिर कर पत्तियों में छिप जाते हैं और वहीं पड़े पड़े वे अपने ऊपर एक खोल चढ़ाकर प्युपा



चित्र २७—कपास का धब्बेदार सुण्डा

अ—सुण्डों द्वारा ग्रसित ढोंढ़ ब—प्रौढ़ पतंग स—कपास का धब्बेदार सुण्डा
क—कपास के पौधे का एक भाग

रूप धारण करते हैं। १० दिन में वह खोल फटती है। खोल फटने पर जो पतंग बाहर निकलता है वह अपने पूर्वजों के समान रूप रंग का होता है। कभी-कभी अधिक सर्दी के कारण प्युपा की खोल ७-८ सप्ताह तक खुलती ही नहीं। वर्ष में इस पतंग की भी आठ पीढ़ियां उत्पन्न हो जाती हैं। एक वंश उत्पन्न होने तथा उसके बढ़ने इत्यादि में लगभग १ माह लग जाता है।

इस पतंग द्वारा उत्पन्न किये गये हानि से बचने के निम्न उपाय प्रयोग किये जा सकते हैं :—

(१) कपास उतार लेने के बाद खेत में बचे हुये डंठल, पत्तियां, फूल तथा ढोंढ़ इत्यादि एकत्रित करके जला देना चाहिये। इसके साथ ही साथ खेत में बचे हुये अन्य पौधों को भी आग से नष्ट कर देना चाहिये।

(२) कपास के खेत के आस पास भिण्डी की खेती नहीं करनी चाहिये क्योंकि इन पौधों के कारण पतंग समूल नष्ट नहीं किये जा सकते। उनके स्थान में हेर-फेर होता ही रहेगा। भिण्डी से कूद कर कपास पर तथा कपास से उड़ कर ये भिण्डी पर पहुँच जायंगे। अतः इनसे रक्षा करना असम्भव हो जायगा।

(३) कपास उतार लेने के बाद अन्य कूड़ा करकट जला कर खेत की गहरी जोताई कर देनी चाहिये। इससे भूमि में गड़े प्युपा इत्यादि समूल नष्ट हो जायेंगे।

(४) सुण्डों का आक्रमण हो जाने पर एक बीघा खेत में ५% शक्तिवाला प्रतिबीघे लगभग ८ सेर बेन्ज़ीन हेक्ज़ाक्लोराइड पौधों पर भुहराना चाहिये। गैमेक्सीन डी.०२५ का भी प्रयोग कर सकते हैं।

कपास का पत्तीमोड़ सुण्डा

कपास का तीसरा शत्रु वह सुण्डा है जो पत्तियों पर आक्रमण करके उनका हरा तत्व खा जाता है और उन्हें मोड़ देता है। पत्तियों पर (स) इनके आक्रमण से पौधे की बाढ़ मारी जाती है। अतः पैदावार कम हो जाती है। इस सुण्डे को पत्ती-तोड़ सुण्डा भी कहते हैं। यह सुण्डा सवा इंच लम्बा तथा मटमैला हरा होता है।

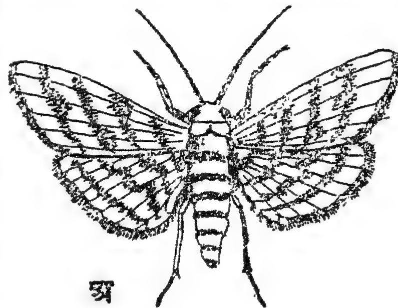
इस सुण्डे का प्रौढ़ पतंग (अ) छोटी तितली के रूप में फाल्गुन और चैत्र के मध्य (मार्च) से ही दिखाई पड़ने लगता है। थोड़ी सर्दी पड़ने पर, कार्तिक (अक्टूबर) में इनकी संख्या घट जाती है और ज्यों ज्यों सर्दी बढ़ती है वे घटते जाते हैं। कठिन जाड़े के दिनों में ये पतंग दिखाई ही नहीं पड़ते। प्रत्येक पतंग की लम्बाई आधा इंच तथा रंग कुछ पीला होता है। पंखों पर काली धारी की लहरिया होती है। मैथुन के पश्चात् पतंग-मादा पत्तियोंकी निचली सतह पर कुछ चपटे, हलके मखनियां रंग के २५० से ३०० तक अण्डे (ब) देती है। ७-८ दिन में अण्डों के फूटने पर जो सुण्डे बाहर निकलते हैं वे कुछ पीले-हरे मिश्रित रंग के होते हैं। इनका आक्रमण पत्तियों पर ही होता है। छोटे सुण्डे तो पत्ती की निचली सतह का हरा तत्व खाते हैं, परन्तु बड़े सुण्डे पत्ती को नीचे से ऊपर की ओर मोड़ देते हैं और इसी मोड़ में घुस कर इसके भीतर का हरा तत्व खाजाते हैं। कभी-कभी ये सुण्डे पत्तियों के बीच बीच में छेद करके वहां का तत्व समाप्त कर देते हैं। मुड़ी हुई पत्तियों को आप खोल कर देखें तो आप उनके भीतर सिल्क के समान धागे पावेंगे। सम्भवतः इन्हीं के सहारे पत्ती मुड़ी रहती है। १५-१६ दिन में पेट भर भोजन कर लेने के पश्चात् ये सुण्डे मुड़ी पत्ती के भीतर ही प्युपा रूप धारण कर लेते हैं। कभी कभी ऐसा भी होता है कि पौधे से गिर कर सुण्डे भूमि पर पड़ी हुई पत्तियों में छिप कर प्युपा रूप धारण करते हैं। प्युपा (द) का रंग कत्थई होता है। इस रूप में पतंग ८-१० दिन तक रहता है। खोल फटते ही जो पतंग बाहर निकलता है वह रंग-रूप में अपने पूर्वजों (अ) के समान होता है। यह पतंग कुछ समय बाद ही फिर पौधों के विनाश की तैयारी में लग जाता है। यहां पर यह भी बता देना परमावश्यक है कि अधिक जाड़े के दिनों में सुण्डे सुप्तावस्था धारण कर लेते हैं और फिर गर्मी आने पर प्रौढ़

पतंग बन जाते हैं। सच पूछिये तो ये ही सुण्डे (सुप्तावस्थाधारी) विष-प्रसारक होते हैं। यदि गर्मी के दिनों में कपास पर किसी भी सुण्डे का आक्रमण न हो तो हानि होने का प्रश्न ही नहीं उठता। क्योंकि प्रारम्भिक प्रहार इनके द्वारा ही होता है। एक पीढ़ी के उत्पन्न होने तथा बढ़ने में लगभग एक माह लग जाता है।

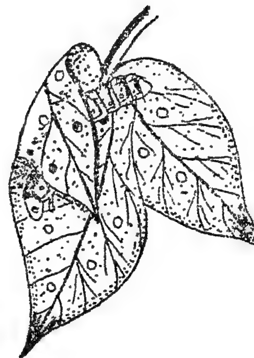
इनके इस हानि से बचने के लिये निम्न उपायों का व्यवहार किया जा सकता है :—

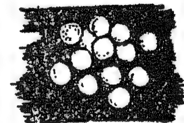
(१) मुड़ी हुई पत्तियों को ढूंढ़ कर पौधे से अलग कर लीजिये। तत्पश्चात उन्हें जला दीजिये। इस उपाय से पत्तियों में छिपे हुये सुण्डे नष्ट हो जायंगे जिसके फलस्वरूप आगे की सन्तान के विकास के लिये कोई सम्भावना न रहेगी।

(२) कपास के खेत के आस पास तथा कपास बोने के पहले और बाद में भिण्डी या इसकी जाति के अन्य किसी फ़सल को नहीं बोना चाहिये। इसका यह परिणाम होगा कि यदि कपास के पौधों से ये पतंग भगाये जायं तो उन्हें और कही ठौर न मिलेगा अन्यथा एक स्थान से दूसरे स्थान को ये पतंग फुदकते रहेंगे और इस प्रकार भोजन बराबर पाते रहने से उनकी वंशवृद्धि होती रहेगी।









चित्र २८—कपास का पत्ती मोड़ सुण्डा
अ—पतंग ब—अण्डे स—पत्ती को मोड़कर घुसा हुआ सुण्डा द—प्युपा

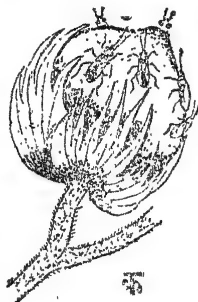
(३) इस पतंग के सुण्डे जाड़े में भूमि पर गिर कर पत्तियों अथवा कूड़ा-करकट में छिपे रहते हैं। इन छिपे हुये सुण्डों को नष्ट करने के लिये जाड़े के दिनों में ही खूब गहरी जुताई या गुड़ाई कर देनी चाहिये।

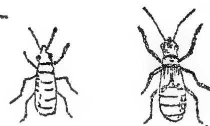
(४) यदि इस पतंग का आक्रमण अधिक भयंकर हुआ तो कपास के पौधों पर फ्लाउसिलिकेट नामक पदार्थ का भुहराव करा दीजिये। सोडियम फ्लाउसिलिकेट १ भाग तथा साधारण राख ७ भाग खूब मिलाइये और कपास के पौधों पर भुहरा दीजिये।

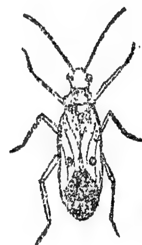
(५) सुण्डों को समाप्त करने के लिये एक बीघा खेत में ५% शक्ति वाला बेन्जीन हेक्ज़ाक्लोराइड, लगभग १० सेर, पौधों पर भुहराइये।

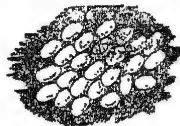
कपास का लाल पतंग

कपास का यह पतंग नये कोमल बीजों का रस चूसकर उन्हें निस्तेज औ: निकम्मा बना देता है। भारतवर्ष में कपास उगाने वाले क्षेत्रों में यह हर जगह दिखाई पड़ता है। भारत के बाहर, इसी जाति के पतंग, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, लंका तथा अन्य देशों में भी पाये जाते हैं। इनका रंग लाल होता है तथा ये रूई को रंगीन कर देते हैं। यही कारण है कि इन्हें कपास का लाल पतंग कहते हैं।









चित्र २६

अ—बैठा हुआ प्रौढ़ लाल ब—अण्डे पतंग सुण्डे स—छोटे बच्चे द—कपास की ढोंढ़ पर लाल पतंग आक्रमण के लिये चढ़े हुए हैं।

प्रत्येक लाल पतंग (अ) पौन इंच (३।४) लम्बा होता है। इसकी टाँगें लम्बी लाल तथा मुँह लम्बा, रस चूसने वाला ही होता है। यह लम्बा मुँह पतंग के आराम करते समय उसके पेट पर चिपका रहता है। इस पतंग का शिर भाग तथा उसके पीछे का कुछ भाग गाढ़ा खूनी रंग का होता है। पंखे अधिक लाल न होकर कुछ नारंगी पीले रंग के होते हैं। पंखों के अगले जोड़े का पिछला भाग कुछ काला होता है। इन्हीं अगले पंखों पर एक-एक काला धब्बा भी होता है। पतंग-नर, पतंग-मादा से छोटे, लगभग आधा इंच के होते हैं। नेत्र इनके बहुत चमकीले उभरे हुये तथा शिर भाग से जुड़ी दो मूछें (प्रत्येक चार जोड़ की) होती हैं। कपास के पौधे पर ये पतंग श्रावण से अगहन तक दिखाई पड़ते हैं। अधिक जाड़ा पड़ने पर ये पतंग कपास का पौधा छोड़कर गिरी पत्तियों अथवा कूड़ा करकट में छिप जाते हैं। ऐसी अवस्था में ये फाल्गुन तक पड़े रहते हैं। तत्पश्चात् कुछ गर्मी बढ़ जाने पर ये पतंग अपने भोजन के प्रबन्ध में विचरण प्रारम्भ करते हैं। इस समय इन्हें भिंडी, पेटुआ अथवा सेमल की शरण लेनी पड़ती है। परन्तु यह निश्चित है कि गर्मी के दिनों में इनकी वृद्धि होती है और भोजन कम होते ही ये शिथिल पड़ जाते हैं।

जेष्ठ के प्रारम्भ में (मई-जून) पतंग-मादा कपास या किसी दूसरे पौधे के नीचे भूमि के दरारों के अन्दर ७०-८० अंडे एक समूह (ब) में देती है। सभी अंडे

एक दूसरे से चिपके नहीं वरन् अलग-अलग रहते हैं। प्रत्येक अंडा कुछ पीलापन लिये हुये लम्बाकार होता है। अंडे ७ से १० दिन के अंदर ही फूट जाते हैं। अंडों के फूटने पर जो नवजात-पतंग (स-द) बाहर निकलते हैं वे भी लाल ही रंग के परन्तु पंखहीन होते हैं। इसी अवस्था में नेत्र अधिक चमकीले होते हैं। इस समय यदि निरूपण किया जाय तो अभी से नर, मादों से छोटे ही मिलेंगे। ये छोटे पतंग धीरे-धीरे पौधों के कोमल अंगों का रस चूसते हुए ऊपर की ओर बढ़ते हैं और समय आते ही कपास की ढोंढ़ के चारों ओर (क) फैलकर उसे ढक लेते हैं। वे वहीं चिपके चिपके कपास की ढोंढ़ का रस चूस-चूस कर बीजों पर भी आक्रमण करते रहते हैं। इस प्रकार भोजन पाते रहने पर ये छोटे पतंग ४० से ७५ दिन में पूर्ण अवस्था प्राप्त कर लेते हैं। यह समय गर्मी में कम हो जाता है। अतः एक वंश लगभग ५०-६० दिन में ही उत्पन्न होकर बढ़ जाता है। भोजन मिलने में कठिनाई तथा गर्मी की कमी के कारण एक वंश ८० दिन में भी उत्पन्न होता है।

यह पहिले ही लिखा जा चुका है कि इनके आक्रमण से कपास के बीज की अंकुरण शक्ति मारी पड़ जाती है। कपास उतारते समय इनके (हाथ से) दब जाने से जो रंग इनके शरीर से बाहर निकलता है उसके कारण कपास लाल हो जाता है।

इनकी इस हानि से बचने के लिए हम निम्न उपाय प्रयोग कर सकते हैं:—

(१) इन पतंगों को हाथ से पकड़ कर एकत्रित कीजिए और तेल में डाल कर नष्ट कर दीजिये।

(२) कपास के पौधे के नीचे एक कड़ाही में पानी रखकर उसमें थोड़ा सा मिट्टी का तेल या क्रूड़ आयल (चक्की का तेल) डालकर फिर कपास के पौधे को हिलाइये। जो पतंग पौधे से गिरकर कड़ाही में आवेंगे शीघ्र ही मर जायंगे।

(३) कपास के आस पास भिंडी के पौधे लगाइये। इससे कुछ पतंग उधर भी आकर्षित हो जायंगे।

(४) बीज बोने के पहिले उन्हें गोबर मिट्टी में सान डालिये। फिर उन्हें कहीं धूप से अलग सुखा कर एक नांद में पानी भर कर उसमें इन बीजों को डाल दीजिये। स्वस्थ बीज नीचे बैठ जायंगे। शक्तिहीन, निकम्मे तथा खोखले बीज पानी में तैरने लगेंगे। इन्हें छोड़ दीजिये। कड़ाही में बैठे स्वस्थ्य बीजों को ही बोइये।

(५) इन्हें समूल नष्ट करने के लिये पौधों पर प्रति बीघा १० सेर ५% शक्ति वाला बेन्जीन हेक्ज़ाक्लोराइड का प्रयोग कीजिये। यह उपाय लाभदायक और सर्वोत्तम है। इसके लिये आप गैमेक्सीन डी.०२५ का भी प्रयोग कर सकते हैं।

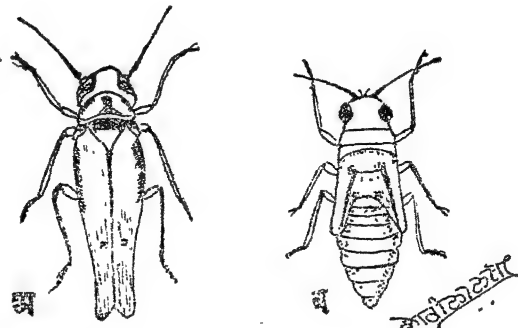
कपास का जेसिड पतंग

जेसिड पतंगों से प्रायः आप अधिक परिचित होंगे। इनकी एक जाति के पतंग आम के पेड़ों पर उस समय भनभनाते हुये अधिक मिलते हैं जब उनमें बौर लगता है। ये बरसात के दिनों में आपकी लालटेन के सामने अधिक दिखाई पड़ते हैं। प्रत्येक

जेसिड पतंग हरे रंग के, ⅛ इंच लम्बे होते हैं। जाड़े में ये जेसिड पतंग कुछ पीले हो जाते हैं। इनमें एक विशेषता यह होती है कि ये सदैव चंचल रहते हैं। मुँह इनका रस चूसने वाला होता है। अपने मुँह की विशेष बनावट के कारण ये पतंग जिस पत्ती पर बैठते हैं उसका रस चूस कर उसे निस्तेज, निर्बल तथा अंत में पीला बना देते हैं।

कपास के हानिकारक पतंगों में जेसिड पतंग (अ) भी मुख्य है। वर्षा ऋतु में ये हरे परन्तु जाड़े में कुछ लाल पीले हो जाते हैं। दोनों पंखे शरीर के दोनों ओर छप्पर की तरह लटके होते हैं। प्रत्येक (आगे वाले) पंखे पर एक काला धब्बा होता है। प्रौढ़ जेसिड पतंगों के साथ साथ कपास की पत्तियों की नीचली सतह पर उनके पंख रहित नवजात-पतंग भी रस चूसते पड़े रहते हैं। इन नवजात-पतंगों का रंग सदैव हरा अथवा धानी चमकदार होता है। कपास के अतिरिक्त इन पतंगों का आक्रमण भिन्डी तथा आलू और भांटे के पौधों पर भी होता है। उनके आक्रमण से पत्तियां मुरझा जाती हैं, अतः पौधे निर्बल हो जाते हैं। यही कारण है कि वे पौधे अधिक फूल फल नहीं उत्पन्न कर पाते।

अधिक जाड़े में तो नहीं परन्तु वर्ष के शेष सभी महीनों में जेसिड पतंगों की उत्पत्ति और उनका विकास बहुत शीघ्र गति से होता है। प्रौढ़ावस्था प्राप्त कर मैथुन के पश्चात् पतंग-मादा पत्तियों की निचली सतह पर शिराओं में अण्डे देती है जो ६ से १० दिन के भीतर फूट जाते हैं। अण्डों से बाहर निकलकर छोटे बच्चे (ब) पत्तियों की निचली सतह का रस चूसकर २०-२५ दिन में बहुत बड़े हो जाते हैं। इस प्रकार इनके वंश की वृद्धि ३०-३५ दिन में होती है। फलस्वरूप वर्ष में लगभग १०-११ पीढ़ियों में उत्पन्न होकर ये पतंग बार-बार पत्तियों पर ही आक्रमण करते हैं।



चित्र ३०—कपास का जेसिड पतंग
अ—प्रौढ़ जेसिड पतंग ब—जेसिड पतंग छोटा बच्चा

जेसिड पतंगों के आक्रमण द्वारा जो हानि होती है उससे बचने के लिये निम्न उपाय प्रयोग में लाये जा सकते हैं:—

(१) यदि इनका आक्रमण अधिक हुआ हो और ये पतंग पौधे पर दिखाई पड़ते हों तो इन पर राजन के घोल का छिड़काव करिये। राजन की घोल बनाने की रीति का वर्णन गन्ने की सफेद मक्खी को दूर करने के सम्बन्ध में किया गया है।

(२) जिन पौधों पर जेसिड पतंग अधिक दिखाई पड़ें उन्हें उखाड़ कर जला दें। उनका खेत में जीवित रहना किसी बड़े खतरे से खाली नहीं है।

(३) कपास के अतिरिक्त अन्य पौधों को भी (भिण्डी-आलू) कभी-कभी देखते रहिये। यदि उन पर जेसिड पतंग हों तो शीघ्र ही नष्ट कीजिये।

कुम्हड़ा, लौकी, नेनुआ तथा तरोई आदि के पतंग-शत्रु

स्वास्थ्य के लिये अन्न तथा घी दूध के अतिरिक्त हमारे दैनिक आहार में हरी तरकारियों की भी विशेष आवश्यकता होती है। अतः कीट-पतंगों के आक्रमण से हमें इन्हें भी बचाना चाहिये। वर्ष के अधिकांश समय तक हम कुम्हड़ा, लौकी ननुआं तथा तरोई आदि अधिक प्रयोग करते हैं। ग्रामीण क्षेत्र में बसने वाले अधिकांश व्यक्ति अपने घर की दीवाल तथा छप्परों पर इन तरकारियों के पौधों को फैलाकर लगाते हैं। परन्तु अधिक परिश्रम करने पर भी वे अधिक तरकारी नहीं प्राप्त कर पाते। इसका प्रधान कारण यह है कि इन तरकारी के पौधों पर भी कई प्रकार के कीट-पतंगों का आक्रमण होता है। इनसे रक्षा के उपाय जानने के पहले हमें इनके रूप रंग से परिचित हो जाना चाहिये और तभी हम इनसे सामना भी कर सकेंगे।

उपर्युक्त पौधों पर चार पांच प्रकार के कीट-पतंग लगते हैं। इनमें से एक तो ऐसा होता है जो सभी पत्तियों के ऊपरी भाग के हरे तत्व को खाता है। दूसरे वे हैं जो निकलते हुये कोमल तनों पर झुण्ड बनाकर रहते हैं। पूरी पत्तियों को खा जाने वाले दूसरे ही कीड़े होते हैं। कहने का अर्थ यह कि इन सभी पौधों को एक ही बार में कई कीट-पतंगों के आक्रमण का सामना करना पड़ता है।

पत्तियों को काटने वाला हरा सुण्डा

इस हानि से सम्बन्धित एक पतंग होता है जिसके पंखे सफेद होते हैं। पंखों के दोनों किनारों पर बड़े-बड़े काले धब्बे होते हैं। इस पतंग की लम्बाई लगभग एक इंच होती है। पतंग-मादा के पीछे धड़ के पिछले किनारे पर नारंगी रंग के बालों का एक झुण्ड होता है। वर्षा के आरम्भ में ही मैथुन के पश्चात् पतंग-मादा पत्तियों पर अंडे देती है। अण्डों के फूटने पर जो सुण्डे बाहर निकलते हैं वे हरे रंग के होते हैं। इन पर आगे से पीछे कई सफेद धारियाँ होती हैं। ये सुण्डे बड़ी तीव्र गति से पत्तियों को काट-काटकर खाने लगते हैं। फलस्वरूप पत्तियों का अधिकांश भाग नष्ट हो जाता है, अतः पौधों की बाढ़ रुक जाती है और फल भी बहुत कम लगते हैं। अधिक भोजन कर लेने के पश्चात् ये सुण्डे (कीड़े) पत्ती को मोड़कर उसके भीतर एक सिल्क की खोल बनाकर उसमें घुस जाते हैं। आप अपने कुम्हड़े के पौधों की मुड़ी हुई पत्तियों को खोलकर देखें। आपको सुण्डे अवश्य मिलेंगे। १० से १२ दिन के भीतर यह खोल फटती है। खोल फटने पर जो पतंग बाहर निकलते हैं वे फिर वंशवृद्धि में योग देते हैं। इस तरह कुम्हड़ा, लौकी, नेनुआं आदि की पत्तियां इन सुण्डों के कारण नष्ट हो जाती हैं। इनसे बचने के कई उपाय प्रयोग किये जा सकते हैं। जिनका वर्णन अगले पृष्ठ पर किया गया है।

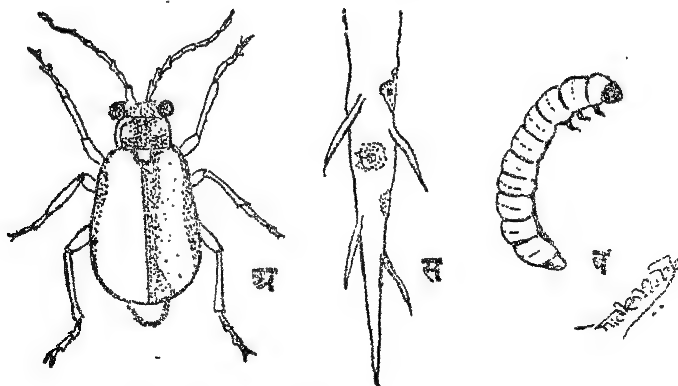
(१) मुड़ी तथा कटी हुई पत्तियों को पौधों से अलग करके जला दीजिये।

(२) छोटी अवस्था में इन पौधों पर गैमेक्सीन डी·०२५ तथा उसी के बराबर मिट्टी मिलाकर मशीन द्वारा भुहराव कर दीजिये। इससे प्रौढ़ पतंग पौधों पर न बैठ सकेंगे। यदि बैठ कर अण्डे भी दें तो अण्डों के फूटने पर निकले हुए सुण्डे शीघ्र ही समाप्त हो जायंगे या पेड़ से उतर कर भाग जायेंगे।

पत्तियों पर आक्रमण करने वाला लाल-पतंग

यह लाल पतंग जिसे अंग्रेजी भाषा में "आल्युकोफोरा" कहते हैं, लौकी, नेनुआं तथा कुम्हड़े इत्यादि की पूरी पत्तियों को खा जाता है। भारत में इस पतंग की कई जातियां मिलती हैं जो रंग में भिन्न होती हैं। दक्षिणी भारत में इनकी लाल, नीली तथा भूरी तीनों जातियां पाई जाती हैं। पर उत्तरी भारत में लाल और जोगिया मिश्रित रंग वाला यह पतंग अधिक दिखाई पड़ता है। इसके शरीर का बाहरी आवरण, जिसमें पंख भी शामिल है, कुछ कठिन होता है। कुम्हड़ा और नेनुआं के अतिरिक्त यह पतंग खीरा तथा ककड़ी इत्यादि के पौधों पर भी विचरण कर उन्हें नष्ट करता रहता है।

वर्षा की ४-५झड़ियों के बाद ही इनकी खेतों में प्रधानता हो जाती है। ये पतंग (अ) एक स्थान से दूसरे स्थान को तीव्र गति से उड़ते हुए दीखाई पड़ते हैं। ये लाल पतंग $\frac{1}{4}$ इंच लम्बे होते हैं। इनकी आंखें कुछ उभरी हुई दीखती हैं। पूर्ण



चित्र ३१—लाल-पतंग, आल्युकोफोरा
अ—लाल पतंग ब—सुण्डा स—जड़ पर लगे अण्डे

अवस्था में मैथुन के पश्चात् पतंग-मादा ८० से ३०० तक इधर-उधर भूमि के पास पौधे के अंतिम भाग पर झुंडों में अथवा अलग अलग अण्डे देती है। अधिक नमी में ये अण्डे ७ दिन में फूटते हैं। कम नमी पर अण्डों के फूटने में १५ दिन तक लग जाते हैं। अण्डों के फूटने पर जो सुण्डे निकलते हैं वे पौधे के ऊपरी भाग (छलके) को खाते और भूमि में घुसते चले जाते हैं इस अवस्था में वे १५ से २५ दिन तक

रहते हैं। लगभग ५ से ८-१० इंच तक भूमि में घुसने के पश्चात् वे अपने ऊपर खोल चढ़ा लेते हैं। इस दशा में वे १ से २ सप्ताह तक रहते हैं। खोल फटने पर उनसे जो लाल-पतंग बाहर निकलते हैं वे फिर पत्तियों पर टूटते हैं और उन्हें खाना आरम्भ कर देते हैं। पूर्ण अवस्था प्राप्त करने पर पतंग-मादा, मैथुन के पश्चात्, फिर अण्डे देती है। इस प्रकार इनकी वंशवृद्धि होती रहती है।

इनकी इस हानि से बचने के लिये निम्न प्रयोग किये जा सकते हैं:—

(१) एक कड़ाही या कटोरे की तरह एक बर्त्तन लेकर उसमें पानी के साथ थोड़ा मिट्टी का तेल मिला लीजिये। लाल-पतंगों को पौधे पर से झटक कर इसमें छोड़ दीजिये। वे मर जायंगे।

(२) इन्हें हाथ से भी पकड़ कर नष्ट कीजिये।

(३) यदि नं० १ और २ का प्रयोग न किया जाय तो लकड़ी की राख लेकर उसमें थोड़ा मिट्टी का तेल मिलाकर पौधों पर बखेर दीजिये। इससे पत्तियों का स्वाद बदल जायगा। इसके फलस्वरूप ये लाल पतंग पौधों से दूर भाग जायंगे। हमारे किसान भाई राख फेंकते हैं पर बिना मिट्टी का तेल मिलाये हुये।

(४) यदि नं० ३ से कुछ कम लाभ हो तो १ भाग सौडियम फ्लाउसिलिकेट और पाँच भाग घर के चूल्हे की राख मिला कर भुहरा दीजिये।

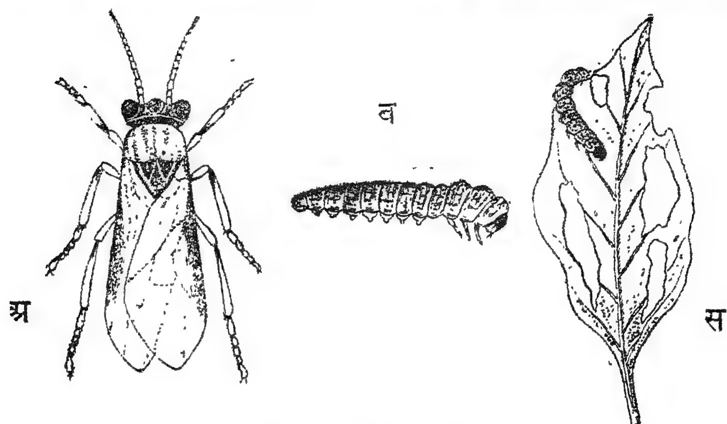
(५) गैमेक्सीन डी.०२५ में बराबर भाग धूल का मिलाकर पौधों पर भुहराइये।

मूली, फूलगोभी, बन्दगोभी तथा सरसों के दो महान शत्रु काला-कीड़ा और झाँझा

काले कीड़े के प्रौढ़-पतंग असाढ़ से अगहन (जुलाई-नवम्बर) में अधिक दिखाई पड़ते हैं। प्रत्येक प्रौढ़ पतंग घर की साधारण मक्खी से कुछ बड़ा होता है। चौड़ाई की अपेक्षा काले कीड़े का पतंग औसतन अधिक लम्बा होता है। इसका सिर भूरे काले रंग का, पंख भूरे तथा शरीर के अन्य भाग (पीठ इत्यादि) सुनहरे पीले रंग के होते हैं।

असाढ़ मास में मूली अधिक होती है। अतः सर्वप्रथम ये पतंग (अ) मूली की पत्तियों में छेद बनाकर अण्डे देते हैं। ये अण्डे ७-८ दिन में फूट जाते हैं। अण्डों के फूटने पर इनसे जो सुण्डे (स) बाहर निकलते हैं वे पहले तो मटमैले होते हैं परन्तु १०-१२ दिन में काले हो जाते हैं। यही कारण है कि इन्हें काले कीड़े के नाम से पुकारा जाता है। ये ही काले कीड़े अधिक विनाशकारी होते हैं क्योंकि बढ़ने के लिये ये काले कीड़े पत्तियों को खाना (ब) आरम्भ कर देते हैं। इनके खाने के कारण पत्तियों में गोल गोल छेद हो जाते हैं। कभी कभी इनका आक्रमण इतना अधिक होता है कि पत्तियों का सम्पूर्ण शरीर इधर उधर कट जाने के कारण वे भूमि पर गिर जाती हैं। पत्तियों के नष्ट हो जाने के कारण पेड़ की बाढ़ मारी पड़ जाती है। २५-३० दिन के अन्दर ये काले कीड़े अपना पूरा भोजन प्राप्त कर लेते हैं। अपनी पूरी अवस्था

में प्रत्येक काला-कीड़ा १ इंच लम्बा, रंग में कुछ भूरा काला मिश्रित (सिलेटी रंग का) होता है। इसका शरीर आगे से पीछे की ओर सिकुड़नयुक्त होता है और साथ ही साथ टूटी हुई ५ धारियां आगे से पीछे दौड़ती मालूम पड़ती हैं। अब इस अवस्था में ये सुण्डे (काले-कीड़े) नीचे भूमि पर गिर कर अपने चारों तरफ एक खोल सी चढ़ा लेते हैं। इस अवस्था में प्रत्येक कीड़ा ५-६ दिन तक रहता है। खोल फटते ही जो पतंग (अ) बाहर निकलता है वह अपने पूर्वज पतंगों की भांति इधर उधर उड़कर मैथुन करने के पश्चात् फिर वंशवृद्धि में लग जाता है। अब जैसे जैसे समय बढ़ता है



चित्र ३२—काला कीड़ा
अ—प्रौढ़ पतंग ब—सुण्डा स—पत्ती को काटता हुआ सुण्डा

पतंगों को गोभी, मूली और सरसों इत्यादि की फसलें मिलती जाती हैं। इस प्रकार अगली मई (जेष्ठ) आते कई पीढ़ियां उत्पन्न करके इनका कठिन आक्रमण कई प्रकार के पौधों पर होता है। जेष्ठ (मई-जून) के पश्चात् काले सुण्डे भूमि में घुस जाते हैं और वर्षा ऋतु प्रारम्भ होते ही पतंग रूप धारण कर पुनः शाक भाजियों (मूली-गोभी, शलजम और सरसों इत्यादि) को नष्ट करना प्रारम्भ कर देते हैं।

इनकी इस हानि से बचने के लिये आप निम्न उपायों को प्रयोग कर सकते हैं :—

जब पौधे बेहन के रूप में हों तभी अधिक चौकन्ने हो जाइये। वहाँ इन उड़ते हुए पतंगों तथा सुंडों को पकड़कर नष्ट कर दीजिये।

(२) गोभी, मूली तथा सरसों की फ़सल को काट लेने के बाद ही खेत की गहरी जुताई कर दीजिये ताकि खेत में छिपे हुये काले कीड़े अधिक सूर्य के प्रकाश से जल जायँ अथवा उन्हें अन्य जीव जन्तु (पक्षी इत्यादि) नष्ट कर दें।

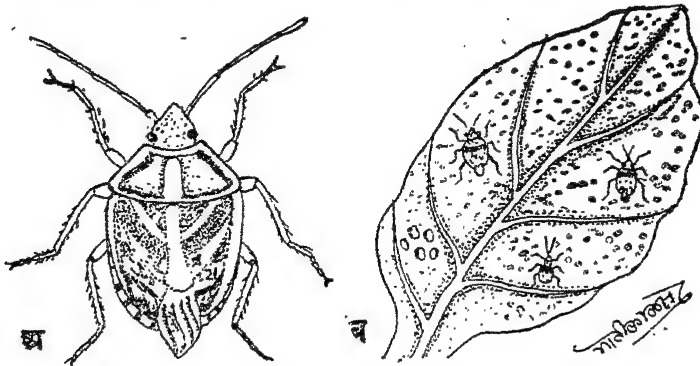
(३) मटर की पत्ती के पतंगों से बचने वाले दूसरे उपायों को प्रयोग कीजिये।

(४) पौधों पर हर पन्द्रहवें दिन गैमेक्सीन डी.०२५ का भुहराव कराइये।

झांगा पतंग

इस पतंग को झांझा भी कहते हैं। उत्तरी भारत में यह पतंग बहुत दिखाई पड़ता है। काले कीड़े की भाँति झांझा पतंग भी मूली, पातगोभी, फूलगोभी तथा सरसों आदि के पौधों को अधिक हानि पहुँचाता है। इस पतंग के मुंह की बनावट विचित्र होती है। यह पतंग किसी पत्तो को काटकर नहीं खाता वरन् अपने चूसने वाले तेज मुँह से पत्तियों का हरा पदार्थ चूस लेता है। हरे पदार्थ के निकल जाने से पत्तियों में स्वयं भोजन बनाने की शक्ति नहीं रह जाती जिसके फलस्वरूप पत्तियाँ मुरझाकर पीली हो जाती हैं। अतः पौधों की बाढ़ रुक जाती है।

प्रत्येक झांझा पतंग (अ) लगभग $\frac{1}{8}$ इंच लम्बा होता है। इसका ऊपरी आवरण अधिक कठिन होता है। छोटी अवस्था में इसका रंग हरा और लाल मिश्रित होता है परन्तु अवस्था के साथ इसका रंग बदलता है। पूर्ण अवस्था में इसका रंग बहुत ही काला होता है। परन्तु इधर-उधर शरीर पर लाल-पीले और श्वेत धब्बे होते



चित्र ३३—झांगा पतंग
अ—प्रौढ़ पतंग ब—पत्ती पर अण्डे और पतंग

हैं। सारे शरीर पर एक विचित्र रंगीन नक्कासी सी होती है। इस आधार पर ही इसे कभी-कभी बहुरंगी पतंग भी कहते हैं। ये पतंग कुछ समय तक बिना खाये भी जीवित रह सकते हैं।

कार्तिक से चैत्र (अक्टूबर से मार्च) तक ये झांझा पतंग बहुत अधिक दिखाई पड़ते हैं। अनुकूल परिस्थितियों में मैथुन के पश्चात् झाँझा पतंग-मादा उपर्युक्त पौधों की पत्तियों पर अलग-अलग अण्डे देती है। अण्डे देने के पश्चात् पतंग-मादा मर जाती है। अण्डे ६-८ दिन में फूटते हैं। अण्डों के फूटने पर अपने पूर्वजों के रूप के नवजात-झांझा उत्पन्न होते हैं। ये झांझा-बच्चे पत्तियों पर आक्रमण करके उनका रस चूसते (ब) रहते हैं। कभी कभी ये एक डाल अथवा पत्तियों पर झुण्डों में सटे दिखाई पड़ते हैं। छोटे झांझा बच्चे २० से २५ या ३० दिन में पूर्ण अवस्था प्राप्त करके मैथुन क्रिया द्वारा फिर वंशवृद्धि में लग जाते हैं। फलस्वरूप वर्ष भर में चार पांच पीढ़ियां उत्पन्न हो जाती हैं।

इनसे बचने के लिये निम्न उपायों का प्रयोग कीजिये :—

(१) आधा सेर साबुन १५-१६ सेर पानी में घोलकर पौधों पर छिड़कने से अण्डे और छोटे झांगा पतंग मर जाते हैं।

(२) रोज़िन मिश्रण के छिड़काव द्वारा भी ये पतंग नष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार के छिड़काव की रीति पृष्ठ ३६ पर बताई गई है।

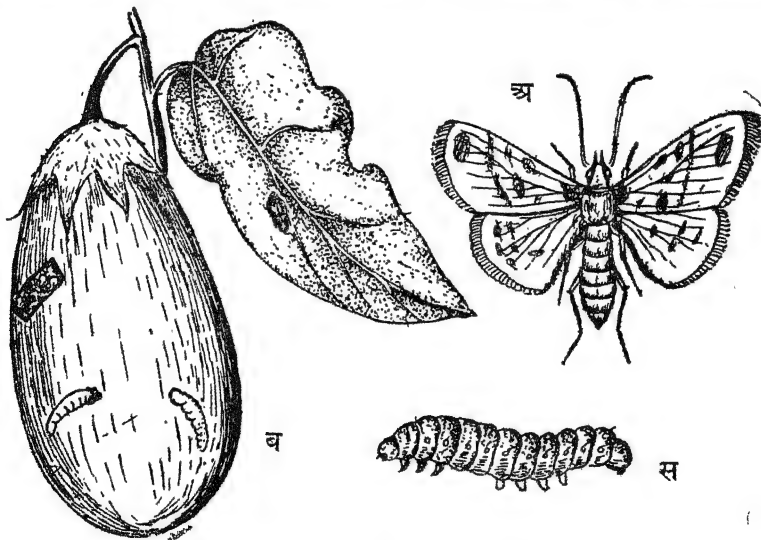
(३) बड़े झांझा पतंगों को हाथ से अथवा अन्य किसी उपाय से पकड़-पकड़ कर मिट्टी के तेल और पानी के मिश्रण में डालकर नष्ट कर दीजिये।

(४) उपर्युक्त पौधों को खेत से काट लेने के पश्चात जो कूड़ा करकट हो सब जलाकर नष्ट कर दीजिये।

(५) एक बीघे में ६ सेर गैमेक्सीन डी०.०२५ के साथ बराबर धूल मिलाकर भुहराव करने से भी अधिक लाभ होता।

भांटे के पतंग शत्रु

मौसम के अनुसार भांटा (बैगन) हमारे देश में अधिकतर अक्टूबर से फरवरी (कार्त्तिक से फाल्गुन) तक अधिक मात्रा में उगाया जाता है। इसे प्रयोग करने वालों के स्वाद के अतिरिक्त इसे बोने वाले किसान को आर्थिक लाभ भी होता है। सच पूछिये तो किसान को इच्छानुसार लाभ नहीं हो पाता क्योंकि भांटे के पौधे पर भी कई प्रकार के कीड़े लगकर उसे बरबाद करते हैं। इन कीड़ों में कुछ तो ऐसे होते हैं जो



चित्र ३४—भांटे के फल का सुण्डा

अ—प्रौढ़ पतंग ब—भांटे के भीतर घुसे सुण्डे स—सुण्डा

भांटे के फलों पर, कुछ भांटे के तनों पर तथा कुछ भांटे की पत्तियों पर आक्रमण करते हैं।

भांटे के फल पर आक्रमण करने वाला कीड़ा

इस कीड़े की लम्बाई $\frac{3}{4}$ (पौन) इञ्च के लगभग तथा रंग कुछ हल्का गुलाबी होता है। इस कीड़े का प्रौढ़ पतंग गाढ़े भूरे रंग का होता है। इसके पंखे सफेद रंग के होते हैं। सफेद रंग के साथ-साथ पंखों पर इधर उधर गुलाबी धब्बे होते हैं। पूर्ण अवस्था प्राप्त कर लेने के पश्चात् प्रौढ़ पतंग-मादा मैथुन के बाद, फसल उठते ही, भांटे की पत्तियों पर अण्डे देती है। ये अण्डे तीन-चार दिन बाद ही फूट जाते हैं। अण्डों के फूटने पर जो सुण्डे (स) बाहर निकलते हैं वे ही बड़े हानिकारक होते हैं क्योंकि ये सुण्डे (कीड़े) अपने भोजन के लिये भाँटे के फूलों में सूराख बनाकर भीतर घुस जाते हैं और वहीं पड़े-पड़े (व) भांटे का भीतरी भाग खाते रहते हैं। परिणाम यह होता है कि ये भांटे किसी काम के नहीं होते। ऐसे प्रत्येक कीड़े की लम्बाई $\frac{3}{4}$ इञ्च होती है। लगभग १५ दिन तक पूर्ण भोजन कर लेने के पश्चात् ये सुण्डे (कीड़े) पत्ती पर ही या भूमि पर गिरकर अपने चारों ओर एक मटमैले रंग की सिल्क की खोल बना लेते हैं। इस रूप में ये कीड़े लगभग एक सप्ताह तक रहते हैं। इस खोल के फटते ही एक प्रौढ़ पतंग बाहर निकलता है जिसका रूप-रंग अपने पूर्वज पतंग की भांति होता है। पूरी अवस्था प्राप्त कर पतंग-मादा मैथुन के पश्चात् फिर अण्डे देना प्रारम्भ करती है। इसके फलस्वरूप आक्रमण दिन पर दिन बढ़ता ही जाता है। कभी कभी इनका प्रकोप इतना बढ़ जाता है कि खेत के एक भी भांटे खाने योग्य नहीं रह जाते।

भांटे का कल्ला मुरझाता क्यों है ?

भांटे के फलों को नष्ट करने वाले कीड़े ही पौधे के अग्रिम भाग में घुस जाते हैं और तने के भीतरी भाग को खाकर निकम्मा कर देते हैं। फलस्वरूप आगे का भाग झूल जाता है। यदि आप उसे देखें तो आप को उस भाग के किसी स्थान पर एक छेद तथा उसके साथ कीड़े का मल पदार्थ मिलेगा। यदि छेद बड़ा हो तो समझिये कि कीड़ा खाकर निकल भागा है।

इसके लिये आप उस छेद से ४-५ अंगुल नीचे से उस भाग को काट कर के जलादें। यदि आप ऐसा नहीं करते तो कुछ दिनमें खेत के लगभग सभी पौधों का कोई न कोई भाग सूखकर झूल जायगा और फसल मारी पड़ जायगी।

भांटे के तनों पर आक्रमण करने वाला कीड़ा

भांटे के तनों पर आक्रमण करने वाले कीड़े से तो समूचा पेड़ ही नष्ट हो जाता है। इस प्रकार का कीड़ा भी मटमैले-सफेद रंग का होता है। इस कीड़े का प्रभाव तने तक ही सीमित रहता है। यह कीड़ा तने का भीतरी भाग खाकर तने को खोखला कर देता है। इसका परिणाम यह होता है कि भूमि से तरल भोजन पदार्थ पेड़ में नहीं पहुँचने पाते। इच्छानुसार भोजन कर लेने के बाद ये अपने चारों तरफ खोल चढ़ा कर

उसके भीतर पड़े रहते हैं। थोड़े दिन बाद प्रत्येक खोल फटने पर उसमें से एक पतंग बाहर निकलता है जो भूरे रंग का होता है। यह पतंग भांटे के फल वाले पतंग से कुछ बड़ा होता है।

भांटे की खेती भारत के लगभग प्रत्येक भाग में होती है। इसके खाने वालों को थोड़ा स्वाद और बोने वाले गरीब किसानों को कुछ अर्थ लाभ हो जाता है। परन्तु इन पतंगों के महान उपद्रव से किसानों को कभी कभी अधिक क्षति और कष्ट उठाना पड़ता है।

इनके इस आक्रमण की कठिनाइयों से बचने के लिये किसी विशेष औषधि की आवश्यकता नहीं है। तनिक परिश्रम अवश्य करनी पड़ेगी। बहुधा यह देखा जाता है कि जिन भांटों में कीड़े पड़ जाते हैं अथवा तनों के कीड़ों के कारण जो पौधे भूमि पर गिर जाते हैं उन्हें किसान भाई खेत से उठाकर एक कोने से दूसरे कोने में, अथवा अपने खेत के बाहर पगडंडी या दूसरे खेत में फेंककर निश्चिन्त हो जाते हैं। यही विष है। क्या आप समझते हैं कि अब वे कीड़े बेकार हो जायंगे और आपके भांटे के पौधे पर कोई हमला न करेंगे ? यह आपका भ्रम है। वे किसी न किसी प्रकार से अपनी जीवनवृत्त पूरी करते ही पतंग रूप धारण करके फिर आपके खेत में मड़राने लगेंगे और आपके भांटे के पेड़ की पत्तियों पर अण्डे दे देकर विनाश प्रारम्भ कर देंगे।

अत: यह आवश्यक है कि उन भांटों को जिनमें कीड़े पड़ गये हों, अथवा उन पौधों को जो सूखकर गिर गये हों या उन तनों को जिन पर लाही के समान छोटे-छोटे हरे कीड़े लगे हों खेत के एक कोने में एकत्रित करके जला दें। इस क्रिया से आप उनकी वंशवृद्धि रोक सकेंगे और भविष्य में आपको उनके आक्रमण से कम हानि उठानी पड़ेगी। यदि यही क्रिया सब प्रारम्भ करदें और प्रत्येक वर्ष दुहराते जायं तो निकट भविष्य में आप एक बड़ी हानि से बच सकते हैं।

आलू का सुण्डा

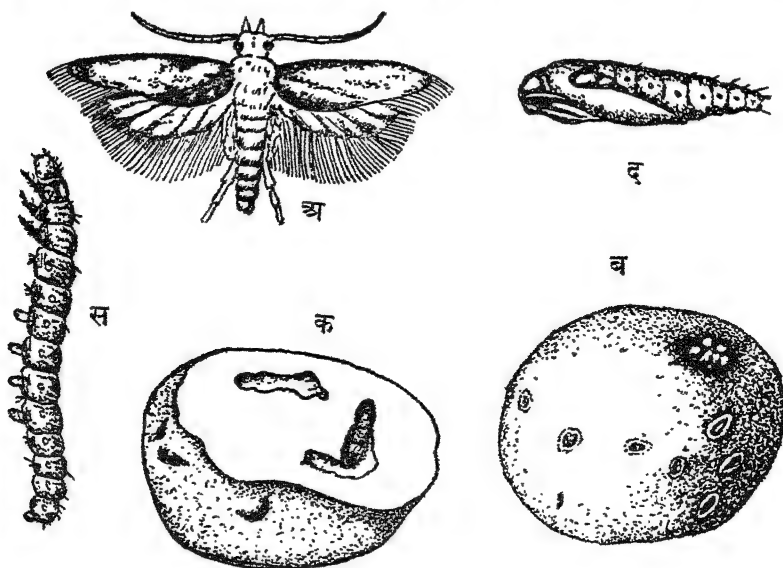
तरकारियों में आलू प्रधान है। गेहूँ और जौ की भांति आलू में भी श्वेतसार (मांड़) अधिक होता है। यही कारण है कि अन्य खाद्य सामग्रियों के साथ साथ आलू ने हमारे प्रतिदिन के भोजन में एक विशेष स्थान ले रक्खा है। इसके व्यवहार से प्रतिदिन अधिक अन्न की बचत होती है। अत: अन्न के इस संकट काल में आलू जैसी आवश्यक खाद्य वस्तु को बाहरी रोगों तथा कीट-पतंगों के आक्रमण से बचाना चाहिये। भारतवर्ष में ही नहीं वरन् सारे विश्व में प्रति वर्ष अधिक मात्रा में आलू सड़ जाती है। जिसके कारण मानव जाति को एक बड़े आर्थिक और भोजन सम्बन्धी हानि का सामना करना पड़ता है।

आलू का भी विनाश एक पतंग-शत्रु द्वारा होता है। इस पतंग को "थोरीमिया-आपरकुलेला" कहते हैं। यह एक विश्वव्यापी पतंग है। जिस आलू पर इसका आक्रमण होता है उसे फाड़ कर देखने से आपको कई सुरंगें दिखाई देंगी। आलू के

ये विश्वविख्यात पतंग आलू रक्खे जानेवाली गोदामों में रात्रि के समय उड़ते दिखाई पड़ते हैं। परन्तु वे दिन में इधर उधर दीवाल की दरारों में छिपे रहते हैं।

आलू का यह विनाशक पतंग पतला परन्तु लम्बाई में आधा इंच से लेकर पौन इंच तक, कुछ सफेद-पीला मिश्रित, भूरे रंग का होता है। इसके पंखों का अगला जोड़ा पिछले पंखों से भिन्न होता है। अगले पंख गाढ़े तथा पिछले पंख रंग में फीके होते हैं। पिछले पंखों के किनारों पर रोयें होते हैं। परिपक्व अवस्था प्राप्त कर पतंग-मादा मैथुन के पश्चात् गोदाम और घरों में रक्खी हुई आलू की आँखों पर बसंती भूरे रंग के, कुछ लम्बे आकार के, ७०-८० अण्डे देती है। अण्डे अलग अलग फैले रहते हैं। अण्डों के फूटने पर जो सुण्डे बाहर निकलते हैं वे आलू का विनाश करने के लिये इधर-उधर घूमते और आलू में छेद बनाकर अपना भोजन पूरा करते हैं। इनकी इस क्रिया से आलू में सुरंगें बन जाती हैं जिससे आलू में और दूसरी बीमारियां उत्पन्न हो जाती हैं। आलू सड़ कर नष्ट हो जाते हैं। उनमें से दुर्गन्धि आने लगती है।

अण्डों से निकले हुए सुण्डे मटमैले सफेद रंग के होते हैं। ये सुण्डे पूरा भोजन पाते रहने पर ११-१२ दिन में पूर्ण रूप धारण कर लेते हैं। ठीक इसके बाद ही ये सुण्डे आलू की सुरंगों में पड़े-पड़े अपने मुँह से निकाले गये सिल्क के धागे से



चित्र ३५—आलू का पतंग

अ—प्रौढ़ पतंग ब—आलू पर आक्रमण स—सुण्डा द—प्युपा
क—आलू के भीतर सुण्डों की सुरंग।

अपने चारों ओर खोल चढ़ाकर प्युपा रूप धारण करते हैं। यह रूप केवल १०-११ दिन का होता है। प्रत्येक प्युपा लगभग आधा इंच लम्बा मटमैले पीले-लाल रंग का होता है। इसके दोनों किनारे नोकीले होते हैं। १०-११ दिन के बाद प्युपा की खोल फटती

है और उसमें से एक पतंग अपने पूर्वजों के रूप रंग का बाहर निकलता है जो फिर प्रौढ़ रूप धारण कर वंशवृद्धि में योग देने लगता है। वर्ष भर में लगभग छः पीढ़ियां उत्पन्न हो जाती हैं। अधिक गर्मी में एक वंश केवल २६-३० दिन में ही उत्पन्न हो जाता है। अतः यदि आलू किसी गोदाम में देर तक रक्खी रही तो उसके समूची संख्या में सड़ जाने की सम्भावना रहती है।

आलू की बोआई के लिए यदि ऐसे आलू प्रयोग किए गए जिनकी सुरंगों में ये सुण्डे अथवा प्युपे घुसे हों तो खेत में भी पतंग उत्पन्न हो जाते हैं। ये पतंग आलू की पत्तियों की निचली सतह पर अण्डे देते हैं। इन अण्डों के फूटने पर उनसे जो सुण्डे बाहर निकलते हैं वे पहिले पत्तियों को खाते और फिर डंठलों पर आक्रमण करते हैं। यदि आलू पड़ गये हैं तो वे ही सुण्डे भूमि के नीचे आलू में घुस जाते हैं। वे आलू में छेद बना कर प्युपा रूप में पड़े रहते हैं। यदि इन आलुओं की खुदाई हुई और इन्हें बिना छांटे बोरे में भर कर गोदाम में पहुँचा दिया गया तो वे वहाँ (गोदाम में) फिर पतंग रूप धारण कर गोदाम में रक्खे गये आलुओं पर अण्डे देने लगेंगे। अण्डों से फिर सुण्डे उत्पन्न होंगे। इस तरह वे आलू को खा खाकर नष्ट करना प्रारम्भ कर देंगे।

उपर्युक्त वर्णन से आप समझ गये होंगे कि एक ही प्रकार का पतंग,सुण्डा रूप में, किस प्रकार गोदाम में रक्खे गये आलू तथा किस प्रकार खेत में उत्पन्न हुये नये आलू को नष्ट करता है। सच पूछिये तो दोनों तरफ इस पतंग के सुण्डे ही विनाश करते हैं। किस रूप में ? आलू में छिप कर सुण्डा अथवा प्युपा रूप में।

इस पतंग के इस महान हानि से बचने के लिये निम्न उपाय प्रयोग किये जा सकते हैं:—

(१) गोदाम की दीवालें पक्की हों। उनपर सीमेंट अथवा चूने-बालू का पलस्तर किया हो। पलस्तर कहीं टूटा-फूटा न हो। समूची गोदाम में कहीं भी तिनके रखने भर के लिये भी कोई छेद या दरार न हो।

(२) गोदाम में किसी प्रकार की सीलन न हो।

(३) आलू रखने के पहिले गोदाम में आप कुछ विशेष वस्तुओं का धुआं कर दीजिये। इन वस्तुओं में पेट्रोल तथा कार्बन बाई सल्फाइड मुख्य हैं। पेट्रोल या कार्बन बाई सल्फाइड किसी बन्द मुंह वाले बर्त्तन में लेकर गोदाम में ले जाइये और वहां बर्त्तन का मुंह खोल दीजिये। बर्त्तन का मुंह खुलते ही इन विशेष वस्तुओं की,आप से आप, गैस बनने लगेगी। वे उड़ने लगेंगे जैसे रक्खे रक्खे कपूर उड़ जाता है। इनकी इस गैस से गोदाम के सभी कीड़े मरने लगेंगे। इस क्रिया को धुआं देना या फ्युमीगेशन कहते है। १००० घनफुट स्थान में पूरा धुआँ देने के लिये १५ पन्द्रह पौण्ड कार्बन बाई सल्फाइड की आवश्यकता होती है। कार्बन बाई सल्फाइड को ३०-४० घंटे तक उड़ने देना चाहिये। परन्तु ध्यान रहे कि इस क्रिया के समय गोदाम में किसी को न जाना चाहिये। फ्युमीगेशन गोदाम की सभी खिड़की दरवाजों को बन्द करके

करनी चाहिये ताकि गैस बाहर न उड़ने पावे। फ्युमीगेशन की अधिक जानकारी के लिये तृतीय अध्याय में, कृत्रिम नियंत्रण भाग को पढ़िये।

(४) भूमि से ऊपर १।। डेढ़ फीट ऊँचे मचानों पर २-३ इंच मोटी बालू की पर्त में ही आलू रक्खी जानी चाहिये। परन्तु यह भी ध्यान रहे कि सभी आलू अलग-अलग हों, वे एक दूसरे से सटे न हों।

(५) कमरा अधिक गर्म न होना चाहिये। गर्मी कम करने के लिये गोदाम में रोशनदान का प्रबन्ध सहायक होगा।

(६) खेत से आलू खोदने के बाद शीघ्र ही गोदाम में रख देना चाहिये।

(७) गोदाम में आलू रखने के पहिले उनकी अच्छी तरह से छंटाई कर लेनी चाहिये। गोदाम में ऐसे आलुओं को नहीं ले जाना चाहिये जिनमें प्युपे या सुण्डे छिपे हों। यदि २-३ सुण्डे भी गोदाम में पहुँच जायँगे तो वहां के सब आलू नष्ट हो जायँगे।

(८) गोदाम में आलू रखने के बाद भी उनकी बराबर छंटाई करते रहना चाहिये। इससे खराब और सुरंगयुक्त आलू बराबर निकलते जायँगे।

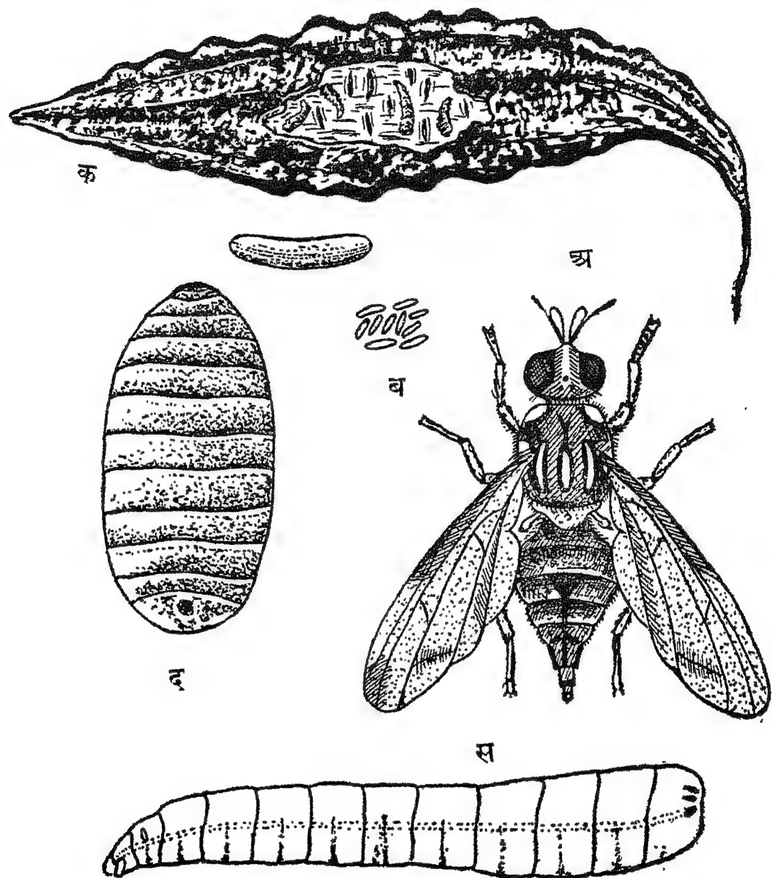
(९) सड़े और छंटे आलुओं को मनमाना न फेंकिये। उन्हें एक स्थान पर एकत्रित करके जला दीजिये। ऐसा करने से आलू के भीतर छिपे हुये सुण्डे तथा प्युपे नष्ट हो जायँगे।

फलों की मक्खी

साधारण घरेलू मक्खी की भांति फलों की मक्खी खरबूजा, तरबूज, कुम्हड़ा, खीरा, ककड़ी (फूट) तरोई तथा करैला आदि फलों पर आक्रमण करके उन्हें नष्ट कर देती है। यही कारण है कि उसे फलों की मक्खी कहा जाता है। फलों की मक्खी काले-कत्थई मिश्रित रङ्ग की होती है। इसके शरीर पर इधर-उधर काले और सफेद रङ्ग के धब्बे होते हैं। पंखों पर भी अधिक धब्बे दिखाई पड़ते हैं। इसके धड़ का पिछला भाग तिकोना और नोकीला होता है। बैठे रहने पर इसके पंख अधिक खुले हुये होते हैं।

फलों की यह मक्खी वर्ष के अधिकांश भाग में दिखाई पड़ती है। जैसे ही फल आना प्रारम्भ करते हैं मादा पतंग मैथुन के पश्चात् अपने नोकीले पिछले हिस्से से फलों पर (कुम्हड़ा, लौकी, फूट इत्यादि में छेद करके) १० से २८-२९ लम्बे-लम्बे अण्डे (ब) देती है। अण्डे देने के बाद ही मादा फल मक्खी अपने शरीर से एक चिपचिपा पदार्थ निकाल कर फलों पर बनाये गये छेदों को बन्द कर देती है। २-३ दिन के अन्दर ही ये अण्डे फूट जाते हैं और इनसे सुण्डे बाहर निकलते हैं जो एक तरफ चौड़े तथा दूसरी ओर नोकीले होते हैं। येही सुण्डे (स) फल के गूदे को (क) खाना प्रारम्भ करते हैं। परिणाम यह होता है कि समूचा गूदा नष्ट हो जाता है और फलों से एक प्रकार की दुर्गन्धि निकलने लगती है। फूट में पड़ने वाले कीड़े फल मक्खी के सुण्डे ही होते हैं।

अधिक भोजन प्राप्त कर लेने पर उनमें अधिक शक्ति आ जाती है जिसके कारण वे सुण्डे १-१ फुट तक उछल जाते हैं। इनकी उछलने की यह क्रिया इनके विकास में सहयोग देती है। एक दो सप्ताह भोजन कर लेने के पश्चात् ये सुण्डे भूमि पर पहुँच



चित्र ३६— फलों की मक्खी
अ—प्रौढ़ फल मक्खी ब—लम्बे और टेढ़े अण्डे स—सुण्डा द—प्युपा
क—सुण्डों से ग्रसित करैला फल

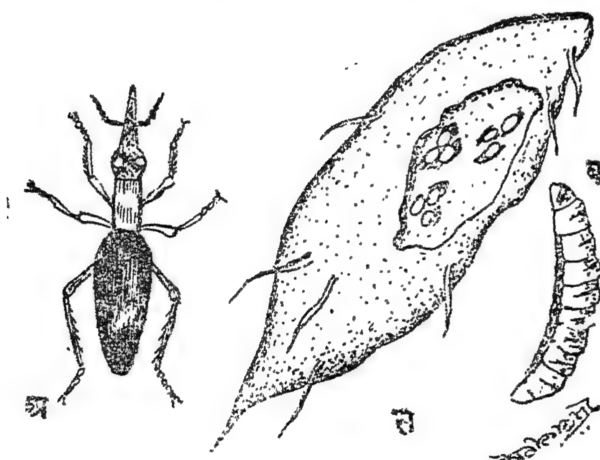
कर अपने ऊपर एक खोल चढ़ा लेते हैं। इस अवस्था यानी प्युपा रूप में (द) वे ५ से ६-१० दिन तक रहते हैं। तत्पश्चात् खोल फटती है और उसमें से एक पतंग (फल मक्खी) बाहर निकलता है। बाहर निकलने पर पतंग फिर वंशवृद्धि करके सर्वनाश में जुट जाते हैं। इस तरह कभी-कभी खेत के समूचे फलों में कीड़े पड़ जाते हैं। जाड़े के दिनों में इनकी कम वृद्धि होती है। लेकिन अनुकूल वातावरण में वर्ष भर में इनकी ७ से ८-१० पीढ़ियां उत्पन्न होती हैं। अब आप अनुमान लगा सकते हैं कि ये फल मक्खियाँ कितना विनाश करती हैं।

इनकी इस हानि से बचने के लिये सभी सड़े फलों को एकत्रित करके जला देना चाहिये। इस क्रिया को दुहराते रहने से अधिक सफलता मिल सकेगी।

शकरकंद का कीड़ा

बोरे अथवा बखार में जब चावल और गेहूँ घुन जाते हैं तो उसे आप साफ करते हैं। आप यह भी जानते हैं कि ये अन्न एक प्रकार के पतंग द्वारा ही घुनते हैं जिसे घुन या पाई कहते हैं। इसी प्रकार का एक कीड़ा शकरकंद को भी हानि पहुँचाता है। इस कीड़े का पतंग (अ) लम्बाई में $\frac{1}{3}$ इंच, रङ्ग में नीला तथा खैरा मिश्रित होता है। इस पतंग का मुख भाग लम्बा होता है जिसे थूथुन कहते हैं।

पतंग मादा शकरकंद में छोटे-छोटे छेद बनाती है और ऐसे प्रत्येक छेद में (स) अण्डा देती है। अण्डे कुछ पीलापन लिये हुये सफेद रङ्ग के कुछ लम्बे होते हैं। कभी कभी शकरकंद में अण्डे देने के बजाय शकरकन्द के पतंग, मोटी डालों अथवा शकरकन्द के तनों में अण्डे देते हैं। अण्डों के फूटने पर जो सुण्डे (ब)



चित्र ३७
अ—प्रौढ़ पतंग ब—सुण्डा स—शकरकंद में अण्डे जो शीघ्र कीड़े में बदल जायंगे।

निकलते हैं वे कुछ पीलापन लिये हुये सफेद रङ्ग के होते हैं। इनका मुंह भाग काला होता है। अन्य साधारण सुण्डों के भांति इन सुण्डों के पैर नहीं होते। ये ही सुण्डे शकरकंद में रहकर पूरी शकरकंद को चाल देते हैं। इसी समय यह कहा जाता है कि शकरकंद में कीड़े पड़ गए हैं। कभी-कभी एक शकरकंद के भीतर कई सैकड़े कीड़े पाये जाते हैं। पूर्ण भोजन कर लेने के पश्चात् ये सुण्डे दूसरे खोखले स्थान बनाकर अपने ऊपर एक खोल बना लेते हैं। कुछ समय के बाद खोल फटती है और उसमें से प्रौढ़ पतंग बाहर निकलते हैं। ये ही प्रौढ़ पतंग फिर मैथुन क्रिया के पश्चात् अपना कार्य प्रारम्भ कर देते हैं।

इस पतंग द्वारा शकरकंद का एक बड़ा भाग नष्ट हो जाता है। भोजन के इस संकट काल द्वारा हमें शकरकंद की रक्षा करके उसे अपने भोजन का एक अंग बना लेना है। अतः इसकी हर प्रकार से रक्षाकरनी चाहिये। इसकी रक्षा निम्न उपायों द्वारा की जा सकती है:—

(१) सड़े शकरकंद को, जिनमें कीड़े पड़ गये हों, इधर उधर न फेंकिये वरन् उन्हें एक स्थान पर एकत्रित करके जला दीजिये।

(२) शकरकंद की बोआई करते समय यह ध्यान रखिये कि शकरकंद बोने के बाद उनपर अधिक मात्रा में मिट्टी चढ़ा दी जाय। यदि इसका ध्यान रक्खा जायगा तो इस पतंग को अण्डे देने का समय न मिलेगा।

(३) सड़े हुये शकरकंद की बोराबन्दी न करिये। एक भी सड़ा शकरकंद किसी के हाथ न बेचिये। एक आध पाई आपको अवश्य मिल जायगी। लेकिन तनिक राष्ट्रीय दृष्टि से विचार कीजिये यह विष जहां जायगा वहाँ कितनी हानि करेगा?

तृतीय अध्याय

कृषि हानिकारक कीट पतंगों का नियंत्रण

अपने जीवन संग्राम में जीवों को सुरक्षा की आवश्यकता रहती है। विश्व का प्रत्येक जीवधारी उसी समय उन्नति करता है जब उसकी हर प्रकार से रक्षा होती रहती है। यह नियम सभी के लिये लागू है। हम हों या आप। जानवर हों या पेड़ पौधे। पेड़ पौधों पर मानव समाज की उन्नति निर्भर है। भोजन और वस्त्र के लिये हमें पेड़ पौधों की ही शरण लेनी पड़ती है। अत: उनकी रक्षा करना हमारा परम कर्तव्य है। पेड़ पौधों की उन्नति में भूचाल, बाढ़, पाला, खुराक की कमी तथा असंख्य रोग और कीट-पतंग बाधा पहुँचाते हैं। उपर्युक्त प्रथम तीन व्याधियों को छोड़ शेष सभी कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करने के लिए मनुष्य ने अनेक उपायों को ढूँढ़ निकाला है। पौधे के भोजन की कमी के समय वह अपने खेतों में विभिन्न प्रकार की खादों का प्रबन्ध करता है। रोगों की रोक थाम के लिये वह आवश्यक औषधियों का प्रयोग करता है। परन्तु कीट-पतंगों की रोक थाम उसके लिये एक समस्या बनी रह गई है। भारतवर्ष के बाहर अन्य देशों में पिछले पचास वर्षों से इन कीट-पतंगों से कृषि की रक्षा के लिये अनेक उपाय प्रयोग किये जा रहे हैं। इसके फलस्वरूप अधिक सफलता मिली है। इन सफल देशों में अमेरिका तथा योरप मुख्य हैं। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि हमारा भारतवर्ष इस विज्ञान से शून्य तथा वनस्पति रक्षा से विमुख है। साधारण किसानों द्वारा तो नहीं परन्तु राजकीय-प्रयोगशालाओं में कीट पतंगों से वनस्पति की रक्षा पर अनेक सफल प्रयोग किये गये हैं। उन प्रयोगों से क्या लाभ यदि वे प्रयोगशालाओं तक ही सीमित रह जायं। अत: हमारा परम कर्तव्य है कि हम प्रयोगों को अपने नित्यप्रति की जीवन की कठिनाइयों से सम्बन्धित कर लाम उठावें।

अनेक फसलों को हानि पहुचाने वाले कीट-पतंगों का रूप तथा उनके नियंत्रण का अलग अलग वर्णन मैंने द्वितीय अध्याय में किया है। परन्तु इन कीट-पतंगों पर विजय प्राप्त करने के लिये उस सीमित ज्ञान को ही मैं पूरा नहीं समझता। कीट-पतंग अपने जीवनयापन में अधिक चतुर होते हैं। अत: उनके नियंत्रण में सफलता प्राप्त करने के लिये हमें अधिक से अधिक ज्ञानोपार्जन करना चाहिये।

जीवन का अर्थ है मृत्यु। जो जन्म लेता है यह मरता है। कोई स्वयं अपने मृत्यु से मरता है। परन्तु किसी को मरने के लिये वाध्य किया जाता है। जो स्वयं अपनी मृत्यु से मरता है उसके मरने का कारण उसकी पुरानी अवस्था तथा अनेक प्रकार के रोग हैं। परन्तु मृत्यु आवश्यक है। क्यों? प्रकृति ऐसा चाहती है। यदि

जीवन की झाँकी मृत्यु में समाप्त न हो तो इस पृथ्वी पर इतने अधिक जीवन धारी उत्पन्न हो जायं कि थोड़े समय में एक जीव दूसरे पर पट जायं। पृथ्वी की लम्बाई चौड़ाई तो सीमित है। फिर जीवों की वृद्धि पर भी नियंत्रण आवश्यक है। यही कारण है कि प्रत्येक जीवधारी समय समय पर मरता रहता है। इसके विपरीत जैसा कि मैंने ऊपर बताया है कुछ जीवों को मरने के लिये वाध्य किया जाता है। इसका कारण स्वार्थ है। इस प्रकार से मृत्यु को भी हम एक प्रकार का नियन्त्रण कह सकते हैं। कीट-पतंगों के नियन्त्रण का अध्ययन निम्न रीति से अधिक सरलता पूर्वक किया जा सकता है।

(१) प्राकृतिक नियंत्रण (२) कृत्रिम नियंत्रण

प्राकृतिक नियंत्रण

अन्य जीवों की भाँति प्रकृति कीट-पतंगों की उत्पति और विकास पर भी नियंत्रण रखती है। यदि ऐसा न किया जाय तो सम्पूर्ण पृथ्वी पर ये कीट-पतंग फैल कर मानव-जीवन निर्वाह करना कठिन कर दें। साधारण घर की मक्खी को ही देखिये। यदि गर्मी-सर्दी के कारण उनका विकास न रोका जाय तो एक जोड़ी (नर-मादा) मक्खी से एक ही ऋतु में इतने अधिक परिवार की वृद्धि हो जाय कि सारी पृथ्वी पर इन मक्खियों द्वारा ४७ फीट मोटी एक पर्त्त बन जाय। लेकिन इस वृद्धि का नियंत्रण प्रकृति स्वयं करती है। ठीक यही नियम अन्य कीट-पतंगों पर भी लागू है। प्रकृति द्वारा यह नियंत्रण (१) जलवायु (२) प्राकृतिक दशा (३) प्राकृतिक शत्रुओं तथा (४) पतंग-रोगों के होने की सहायता से ही सफल होता है।

जलवायु—कीट-पतंगों के प्राकृतिक नियंत्रण में जलवायु को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। आप जानते हैं कि जाड़े और गर्मी में कीट-पतंगों की संख्या कम हो जाती है परन्तु ज्यों ही बरसात आई इनकी वृद्धि प्रारम्भ हो जाती है। अनेक प्रकार के रंग बिरंगे अद्भुत रूप धारी कीट-पतंग आपको दिखलाई पड़ने लगते हैं। उनकी वृद्धि के समय प्रकाश में भोजन करना, पढ़ना, लिखना, आराम करना तथा सभी प्रकार के कार्य कठिन हो जाते हैं। मक्खियों तथा मच्छरों का जोर बढ़ जाता है। खेतों में असंख्य कीट पतंग अपना आतंक जमा लेते हैं। परन्तु ज्योंही सर्दी पड़ने लगी कि वे आंखों से ओझल हो जाते हैं और ज्येष्ठ महीने तक बहुत कम दिखाई पड़ते हैं। मक्खियों का उड़ान तथा मच्छरों की भनभनाहट कम होने लगती है। "मसक दंस बीते हिम त्रासा" तुलसीदास। अब आप समझ गये होंगे कि किस प्रकार की जलवायु इनकी वृद्धि में सहायक अथवा घातक होती है। अधिक सर्दी, अधिक गर्मी, तथा गर्मी और अधिक पानी में कीट पतंगों का विकास नहीं हो पाता। इनका विकास तो उसी जगह अधिक होगा जहाँ कम गर्मी तथा कम पानी हो। यही कारण है कि बरसात में जब पानी अधिक बरसता है उस समय कीट-पतंग कम हो जाते हैं और एक दो दिन पानी निकल जाने के बाद ये फिर उपद्रव करने लगते हैं। पांखियों को देखिये पानी निकल जाने के बाद ही इनका वेग आरम्भ होता है। पानी भी बरसता हो और उस स्थान की मिट्टी भी कठिन हो तो वहाँ भी इनकी वृद्धि न हो सकेगी

यही कारण है कि विश्व के गर्म और तर देशों में कीट-पतंग अधिक पाये जाते हैं। ठंढे और अधिक गर्म स्थानों में इनके विकास का साधन ही नहीं मिल पाता। अधिक वर्षा वाले प्रान्त में अनेक कीट-रोग उत्पन्न होकर कीट-पतंगों की वृद्धि रोक देते हैं। एक स्थान से दूसरे स्थान को इनके विकास के लिये हवा भी सहायक होती है। कीट-पतंग हवा के साथ उड़ते हैं।

प्राकृतिक दशा (बनावट)

किसी स्थान की प्राकृतिक बनावट भी कीट-पतंगों के नियंत्रण पर अपना प्रभाव डालती है। यदि स्थान समतल हुआ तो कीट पतंगों का विकास अधिक होता है। कीट-पतंगों में अधिक उड़ने की शक्ति नहीं होती अतः वे पहाड़, नदियाँ तथा झीलें नहीं पार कर पाते और जो ऐसा करने का प्रयत्न करते हैं वे असफल होकर नष्ट हो जाते हैं। आज तक विश्व भर में कीट-पतंगों का हेर फेर मनुष्यों द्वारा, कुछ जानवरों से तथा यातायात के कारण हुआ। वर्तमान भारत में कुछ कीट-पतंग ऐसे हैं जो यहाँ के नहीं वरन् जहाजों की सहायता से अन्य देशों से आ पहुँचे हैं। घर का संडासी पतंग जिसे कहीं कहींच पड़ा (Cockroach) कहते हैं वह विदेशी है। इसी प्रकार भारत से भी कुछ कीट-पतंग बाहर फैल गये हैं। अमेरिका का "पीला बुखार रोग" दुनियाँ की कठिन बीमारियों में से यह एक बीमारी है। मलेरियाँ की भाँति यह रोग भी एक प्रकार के कीट-पतंग द्वारा फैलता है। सौभाग्य से इसका प्रचार उसी देश तक सीमित है। यदि पीला बुखार (yellow fever) फैलाने वाले कीट-पतंग महासागर और ऊंचे पहाड़ पार कर सकते तो सम्भव है इस रोग का प्रकोप सारे विश्व में फैल गया होता। अफ्रीका की महान बीमारी, निद्रारोग (Sleeping Sickness) जिसके कारण मनुष्य सोता ही रह जाता है एक प्रकार के कीट-पतंग,सीसी-मक्खी (Tse Tse Fly) द्वारा फैलता है। यह बीमारी भी वहीं तक सीमित है। विश्व के अनेक भागों में फैली इन अनेक बीमारियों से, जिनका विकास कीट-पतंग द्वारा होता है, हमारा देश बचा हुआ है। इसका प्रधान कारण यह है कि इसके तीन तरफ समुद्र तथा एक ओर हिमालय पहाड़ है। कहने का अर्थ यह है कि प्राकृतिक बनावट भी कीट-पतंगों के नियंत्रण में सहायक होती है। कीट-पतंगों के नियंत्रण पर मिट्टी की बनावट का भी प्रभाव पड़ता है क्योंकि प्रायः अधिकांश कीट-पतंग अपने जीवन का कुछ समय भूमि में ही बिताते हैं। पथरीली अथवा कंकरीली मिट्टी वाले स्थान में कम कीट-पतंग उत्पन्न हो सकते हैं। मुलायम और तर मिट्टी में कीट-पतंग अधिक अण्डे देते हैं। ऐसी मिट्टी में सुण्डों को छिपने में सहायता मिलती है।

कीट-पतंगों के प्राकृतिक-शत्रु

शरीर की छोटी और कोमल बनावट तथा कम शक्ति के कारण कीट पतंगों को अन्य शक्तिशाली जीवों का आहार बनना पड़ता है। "जीवहि जीव अधार, बिना

जीव जीवे नहीं।" एक जीव दूसरे जीव को खाकर अपना पेट भरता है। मनुष्य से लेकर छोटा से छोटा जीव अमीबा तक एक दूसरे पर निर्भर रहते हैं। सबल-जीव निर्बल जीव को खा जाता है। यही कारण है कि निर्बल सबल को अपना प्राकृतिक शत्रु समझकर भागता फिरता है। ठीक यही दशा कीट-पतंगों की भी है। अपने शरीर की छोटी और कोमल बनावट तथा कम शक्ति के कारण कीट-पतंगों को अन्य जन्तुओं का आहार बनना पड़ता है। छिपकली, मेढक तथा अनेक कीट-पतंगों को खाते रहते हैं। मुर्गियों को देखिये घूरे प रपंजों से खोद खोदकर पतंगों के कीड़ों को खाती हैं। तीतर और बटेर फिनगों पर ही व्रत तोड़ते हैं। फिर कौये बर्रे तथा चुन्नी (Dragon fly) को पकड़ कर खाते रहते हैं। इतना ही नहीं एक सबल पतंग दूसरे निर्बल-पतंग को खाता है। चुन्नी जिसका वर्णन ऊपर किया गया है वह अन्य छोटे कीट-पतंगों पर टूटता है। मैन्टिस्पा (Mantispa) के भी आहार कीट-पतंग ही हैं। बरसता के दिनों में घरैनी जो आलू के समान दीवालों पर मिट्टी के घर बनाती है नीम, लौकी, कोहड़े, नेनुआ, तरोई इत्यादि के हरे सुण्डों को पकड़ कर नष्ट करती रहती है। आक्रमणकारी पतंग कृषि हानिकारक कीट-पतंगों की संख्या कम करते रहते हैं।' इस तरह से आप देखते हैं कि कीट-पतंगों का नियंत्रण प्राकृतिक शत्रुओं द्वारा भी होता रहता है। सुन्दर मेवा पकवान खाने वाला मनुष्य टिड्डियों तथा बड़ी दीमकों को खाकर अपना स्वाद पूरा करता है।

बर्रे जाति के कुछ कीट-पतंग ऐसे होते हैं जो दूसरे कीट पतंगों के बढ़ते हुये सुण्डों के शरीर में अपने नोकीले अण्डे देने वाले भाग घुसेड़ कर अण्डे देते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि बढ़ते हुये उस सुण्डे के शरीर के भीतर शत्रु के अण्डे फूटते हैं और सुण्डे के रूप में परिवर्त्तित होते हैं। सुण्डे बनकर वे उसके शरीर के भीतरी तत्व को खाते हैं। उस सुण्डे को अधिक कष्ट होता है। शत्रु सुण्डे बढ़ते-बढ़ते इतने बड़े हो जाते हैं कि उस सुण्डे का शरीर फट जाता है। शत्रु सुण्डे बाहर निकल आते हैं और वह मर जाता है। इस प्रकार का आक्रमण भी पतंगों के नियंत्रण में सहायक होता है।

कृत्रिम नियंत्रण

अपनी विकसित बुद्धि के कारण मनुष्य ने संसार के सभी वस्तुओं को अपने वश में कर रक्खा है। वह सब प्रकार से अपनी उन्नति चाहता है। अपने उन्नति मार्ग में बाधक वह सभी वस्तुओं को नष्ट कर देता है। मनुष्य और कीट-पतंगों का संघर्ष बहुत पुराना है। यों तो यह लड़ाई होनी ही न चाहिये। पृथ्वी पर अधिकार का हक कीट-पतंगों को ही मिलना चाहिये। क्योंकि मनुष्य के उत्पत्ति के पहिले विश्व में कीट-पतंगों का ही अधिकार था और वे ही अनेक प्रकार के फल-फूलों के स्वामी थे। परन्तु मनुष्य की शक्ति के आगे उनको हार माननी पड़ी। जहां मनुष्य का स्वार्थ आता है वह कीट-पतंगों को अपना शत्रु समझता है। धान से निकले चावल की आवश्यकता मनुष्य को होती है परन्तु अपना पेट भरने के लिए "गन्धी-पतंग" धान की दुधार बालियों का रस चूसते हैं। इसे मनुष्य सहन नहीं कर

सकता। वह इन गन्धी-पतंगों के सर्वनाश पर जुट जाता है। कीट-पतंगों के नियंत्रण के लिये मनुष्य अनेक उपायों को सहस्त्रों वर्ष पूर्व से ढूँढ़ता और प्रयोग करता चला आया है। लेकिन वह दयालु भी है। वह जीव हत्या करने से डरता है। पहले तो वह यही प्रयत्न करता है कि वह एक ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर दे जिससे उसकी वस्तुओं को कीट-पतंग छुयें ही नहीं। परन्तु जब उसमें उसे सफलता नहीं मिलती तो वह ऐसे उपायों का प्रयोग करता है जिससे कीट-पतंग नष्ट हो जाते हैं। नियंत्रण की इन रीतियों को कृत्रिम-नियंत्रण कहते हैं जिनमें (१) रसायनिक पदार्थों (विष) का प्रयोग, (२) खेती करते समय कुछ बातों का विशेष ध्यान रखना, (३) कुछ विशेष परिस्थितियों का उत्पन्न करना (४) अन्य हिंसक जीव जन्तुओं का प्रयोग तथा (५) उनके नियंत्रण सम्बन्धी राजकीय-नियमों को बनाना इत्यादि प्रधान हैं।

रसायनिक पदार्थों द्वारा कीट-पतंगों का नियंत्रण

कीट-पतंगों के नियंत्रण के लिए जिन रसायनिक पदार्थों का प्रयोग किया जाता है वे विष होते हैं। ऐसे सभी विषों को कीटमार (Inseaticides) कहते हैं। यों तो कीटमार कीट-पतंगों को नष्ट करने के लिये होते हैं। परन्तु कुछ रसायनिक पदार्थ ऐसे भी होते हैं जिनकी उपस्थिति से ही काट-पतंग भाग जाते हैं। इस तरह हम देखते हैं कि कीट-पतंगों से रक्षा के लिये जिन वस्तुओं का प्रयोग होता है उन्हें "कीटमार" ही कहते हैं।

मैंने प्रथम अध्याय 'पृष्ठ ६ और ७' में बताया है कि पतंगों के मुंह की बनावट साधारणतया दो तरह की होती है, (१) काटकर खाने वाला मुंह, (२) रस चूस कर पीने वाला मुंह। कीटमारों के सफल प्रयोग के लिये सर्व प्रथम किसी कीट-पतंग के मुंह की बनावट का ध्यान पहले रखना चाहिये। जिन पतंगों का मुंह काटकर खाने के लिये बना होता है वे पत्तियों, फूलों और साधारण छोटे फलों को कुतर कर खा जाते हैं (टिड्डी, दीमक, भुनगे, भौंरा तथा सभी सुण्डे)। अतः ऐसे पतंगों के लिये वही विष काम करेगें जो सीधे भोजन के साथ उनके पेट में पहुँच जांय। इस प्रकार के विषों को पेट का जहर या "उदर-विष" (Stomach poison) कहते हैं। जिन पतंगों का मुंह चूस कर पीने वाला होता है वे अपने सुई के समान मुंह को पत्ती की भीतरी पर्त, दुधार फल और बालियों में डाल देते हैं और बराबर रस चूसते रहते हैं (लाही, मांहू, कपास का लाल पतंग, धान का गंधी तथा झाँगा इत्यादि)। ऐसे पतंगों को नष्ट करने के लिये "उदर विष" बेकार होगा क्योंकि वह सीधे इनके पेट में नहीं पहुँच सकेगा। इसलिये इनके लिये कई ऐसे विष प्रयोग होते हैं जो इनकी देह में लगकर इनके श्वास लेने वाले छेदों को बन्द कर देते हैं और इनकी मुलायम खाल और माँस से होते हुये सारे शरीर में फैल जाते हैं। इस प्रकार के विषों को "स्पर्श-विष" (Contact poison) कहते हैं। विष को सारे शरीर में फैलना ही जरूरी है। चाहे वह मुंह और पेट से होता हुआ रुधिर के साथ सारे शरीर में पहुँच जाय या बाहर से सीधे चमड़ी को पार करता हुआ माँस तथा अन्य भाग

में फैल जाय। काम दोनों करेंगे। इन विषों के अलावा एक प्रकार का और विष होता है जो धुयें के रूप में दिया जाता है। धुयें के रूप में विष हवा में फैलता है। पतंग के साँस लेने से यह विष भी उनके शरीर में साँस लेने वाले छेदों से भीतर चला जाता है और पतंग मर जाते हैं। इस विष को "धूप-विष" (Fumigants) कहा जाता है। सभी धूप-विष धुयें के रूप के ही नहीं होते। पेट्रोल की तरह कुछ वस्तुयें ऐसी हैं जिन्हें यदि खोलकर छोड़ दिया जाय तो वे गैस के रूप में शीघ्र ही उड़ जाती हैं। इस प्रकार की वस्तुओं के प्रयोग से भी पतंग मर जाते हैं। अतः वे सभी वस्तुयें (कीटमार) जो धुआं या गैस रूप धारण कर कीट-पतंगों को नष्ट करती हैं उन्हें धूप-विष कहते हैं। दुहराने के लिये हम फिर कह सकते हैं कि कीटमार (विष) तीन प्रकार के होते हैं—

(१) उदर विष (२) स्पर्श विष और (३) धूप विष।

कीटमार विषों की कुछ विशेषतायें

किसी भी प्रकार के विष को प्रयोग करने के पहिले आपको कुछ विशेष बातों का विचार करना बहुत ही आवश्यक है क्योंकि इनमें से एक की भी अवहेलना करने से सफलता नहीं प्राप्त हो सकेगी।

कीटमार सस्ते, प्रयोग करने में सरल, गुणकारी, पानी अथवा अन्य आवश्यक वस्तु में मिल जाने वाले, खूब चिपकने वाले, बराबर फैलने वाले, जलवायु से न प्रभावित होने वाले तथा अंत में पौधे को किसी भी रीति से न नुकसान करने वाले हों। सबसे बड़ी विशेषता यह है कि जिस कीटमार का आप प्रयोग करने जा रहे हों उसमें पतंगों के मारने की शक्ति हो। अन्यथा उसका व्यवहार ही निष्फल होगा। इन सब बातों का ज्ञान कर लेने के पश्चात् ही आपको कीटमार प्रयोग करना चाहिये।

यों तो हमारे भारती घरों में कुम्हड़ा और लौकी इत्यादि पर यों ही हाथ से राख बखेर दी जाती है लेकिन यदि ध्यान पूर्वक देखा जाय तो यह पता चलता है कि कहीं राख कम और कहीं अधिक गिर गई है। फिर कभी कभी अनजाने में पानी बरसने के पहिले राख डाल दी जाती है। पानी बरसने से राख बह जाती है। कृषि-हानिकारक अधिकांश कीट-पतंग पत्तियों की निचली सतह पर रहते हैं अतः वे उन विषों से मर ही नहीं सकते जो केवल ऊपर ही ऊपर प्रयोग किये जाते हैं। इन कठिनाइयों के कारण पिछले ३०-४० वर्षों में अनेक साधारण और उच्च कोटि के यन्त्रों का अविष्कार हुआ है जिनका कुछ वर्णन आगे मिलेगा।

कीटमार जब यों ही बखेरे जाते हैं तो उस क्रिया को भुहराना, बखेरना या "डस्टिंग" कहते हैं। परन्तु जब कीटमारों को तरल रूप में प्रयोग किया जाता है तो उस क्रिया को छिड़काव या "स्प्रेयिंग" कहते हैं। जैसा कि मैं पहिले ही लिख चुका हूँ कि वही कीटमार सफल हो सकेंगे जो एक समान बराबर छिड़के और भुहराये जांय। इस आधार पर सूखे या तरल कीटमार हाथ से नहीं प्रयोग किये जा सकते। अतः इसके लिये अनेक छोटे बड़े यंत्रों का अविष्कार किया गया है।

कीटमार

उदर-विष	स्पर्श-विष	धूप-विष
(Stomach poisons)	(Contact poisons)	(Fumigants)
(काटकर खाने वाले पतंगों के लिये)	(रस चूसने वाले पतंगों के लिए)	(बखार में पाये जाने वाले पतंगों के लिये)

प्रसिद्ध-कीटमार

संखियां वाले विष

१. सफेद संखिया (White Arsenic)
२. पेरिसग्रीन (Paris green)
३. लेड आरसीनेट (Lead arsenate)
४. कैलसियम आरसिनेट (Calcium arsenate)
५. विष के चारे (Poison baits)

गैर संखिया वाले विष

६. हाईड्रोसाइनिक एसिड गैस (Hydrocyanic Acid Gas)
७. कैलसियम साइनाइड (Calcium cyanide)
८. सल्फर डाइआक्साइड (Sulphur dioxide)
९. कार्बन बाइसल्फाइ (Carbon bisulphide)

उदर-विष

(Stomach Poisons)

उदर-विष उन्हीं पतंगों और सुण्डों को नष्ट करने में प्रयोग किए जाते हैं जो पौधों को कुतुर कर खाते हैं (जैसे टिड्डी, फिनगा, टिड्डा, कटुआ (सुण्डा), कुम्हड़ा लौकी का लाल कीड़ा गोवड़उरा और दीमक)। जिस विष का प्रयोग करना हो उनका, जैसे बताया जाय, पेड़ पौधों पर छिड़िकाव या भुहराव कर दीजिये। जब ऊपर लिखे गए पतंग या सुण्डे उस पौधे का कोई भाग खायेंगे शीघ्र ही मर जायेंगे। और इस तरह से वे बराबर कम होते जायेंगे। उदर विषों को दो श्रेणियों में बाँटा गया है। पहिली श्रेणी में वे उदर विष आते हैं जो संखिया की मिलावट से बनाये गये हैं। अतः ये संखिया-विष कहलाते हैं। दूसरे श्रेणी के वे विष हैं जिसमें संखिया बिल्कुल नहीं होती।

संखिया उदर-विष (Arsenical Stomach Poisons)

इस श्रेणी के विषों में यह विशेषता होनी चाहिये कि वे (१) पतंगों के ऊपर अपना असर दिखाने वाले तथा (२) पानी में कम घुलने वाले हों। यदि वे पानी में घुल जाते हैं तो पौधे भी झुलस जायेंगे और उनके खाने वालों पर भी संखिया का प्रभाव पड़ेगा। इसलिये संखिया विष ऐसे हों जो पौधों में न घुले लेकिन पतंग और सुण्डों

के पेट के पाचक रसों में शीघ्र घुल जांय जिससे वे जल्दी मर जांय। सस्तेपन का भी विचार अवश्य करना चाहिये। इन विशेषताओं के आधार पर नीचे लिखे गये विषों पर विचार कीजिये।

(१) सफेद संखिया—इसमें संखिया की मात्रा अधिक होती है। यह पौधे के रसों में बहुत घुलता है। इसलिये इसे उस दशा में प्रयोग कीजिये जहां यह पेड़ पौधों के सम्पर्क में न आ सके। खेत के कटुआ, टिड्डों, और सुण्डों को मरने के लिये इसका विष-चारा (Poison bait) बनाइये। पौधों पर इसका प्रयोग मत कीजिये। इस विष के आधार पर ही दूसरे संखिया विष बनाये जाते हैं।

(२) पेरिस ग्रीन (Paris green)—कोलोरेडो आलू का भुनगा नामक पतंग को नष्ट करने के लिये इसका सबसे पहिले प्रयोग अमेरिका में १८६७ ई० में किया गया था। यह चमकीले हरे रंग का पाउडर होता है। संखिया तथा तांबा वगैरह के मिश्रण के कारण यह अन्य संखिया विषों से बढ़िया होता है। लेकिन सब कुछ होते हुये के इस विष में निम्न तीन बुराइयाँ हैं:—

(१) यह पेड़ को झुलसा देता है। कभी कभी चूना मिलाकर इसका छिड़काव किया जाता है लेकिन इसकी यह बुराई दूर नहीं होती।

(२) इसमें तांबा मिला होने के कारण यह भारी होता है इसलिये बर्तन में बैठ जाता है। अतः छिड़कने में यह बराबर नहीं पड़ पाता।

(३) पत्तियों पर खूब नहीं चिपक पाता। अतः थोड़ी वर्षा से ही पत्तियों पर से धुल जाता है।

पेरिसग्रीन को यों ही सूखे भुहराया या तरल रूप में छिड़का जा सकता है। छिड़कने (स्प्रेइंग) के लिये ६० सेर पानी में १ छटांक (५ तोला) पेरिसग्रीन मिलाया जाता है। इसे आसानी से बनाने के लिये थोड़े पानी में किसी लकड़ी के सहारे पूरे पेरिसग्रीन को मिलाकर लेई की तरह गाढ़ी करके उसमें आधा सेर चूना मिला दीजिये। अब इसमें पानी बढ़ाते बढ़ते पूरा पानी मिला दीजिये। आपका छिड़काव तैयार हो जायगा। छिड़कने के पहिले इसे खूब चला दीजिये। यदि पेरिसग्रीन को यों ही सूखा प्रयोग करना है तो इसमें चार पांच गुना चूना मिलाकर मशीन से भुहराइये।

(३) लेड आरसीनेट (Lead arsenate)—इसका प्रयोग बहुत किया जाता है। "जिपसीमाथ" नामक पतंगों की रोक थाम के लिये यह सबसे पहिले १८१२ ई० में अमेरिका के मैसाचुसेट्स प्रांत में प्रयोग किया गया था। यह सूखा तथा लेई दोनों रूप में बिकता है। यह पानी में नहीं घुलता और पौधों को भी नुकसान नहीं पहुँचाता।

यह गीला तथा सूखा (पाउडर) दोनों रूप में मिलता है। भुहराव के लिये तो पाउडर ही प्रयोग किया जाता है लेकिन छिड़काव के लिये पानी के साथ गीला या पाउडर रूप का लेडआरसीनेट (दोनों में से एक) प्रयोग किया जा सकता है।

भुहराव के लिये पाउडर लेडआरसीनेट लेकर उसमें पन्द्रह गुना लकड़ी की राख, सड़क की धूल या चूना मिलाकर किसी मशीन द्वारा भुहराइये। लगभग ससांर के प्रत्येक भाग में इसका सफल प्रयोग हो रहा है क्योंकि यह पौधों को नहीं झुलसाता तथा पत्तियों पर खुब चिपकता है। यह पतंगों के पेट में पहुँच कर धीरे धीरे असर करता है।

छिड़कने (स्प्रेइङ्ग) के लिये—(१) गीला लेड आरसीनेट—५ सेर पानी में घोलिये और छिड़िकिये इस घोल को अधिक सफल बनाने के लिये इसमें चूना और चोटा मिला दीजिये। जब १ तोला गीला लेड आरसीनेट लें तो घोल में ३ तोला चूना और ६ तोला चोटा मिलायें। चोटा न मिलने पर गुड़ मिलाया जा सकता है।

(२) सूखा लेड आरसीनेट १ तोला लेकर उसे ३ सेर पानी में घोलिये। इसमें भी चूना और चोटा मिलाया जा सकता है (लेड आरसीनेट १ भाग, चूना ३ भाग और चोटा या गुड़ ६ भाग)।

(४) **कैलशियम आरसिनेट** (Calcium arsenate)— इसे लाइम आरसीनेट भी कहते हैं। यह कीटमार पौधों को झुलस देता है। परन्तु यदि ठीक तरह से बनाया जाय तो लेड आरसीनेट के बराबर पहुँच जाता है। पुराना हो जाने पर इसे नहीं प्रयोग करना चाहिये। थोड़ी तौल में यह बहुत फूला हुआ दिखाई पड़ता है। परन्तु यह कीड़ों को मारने के लिये शक्ति रखता है। इसे प्रयोग करने के लिये इसमें इसके बराबर चूना मिलाकर भुहराव करना चाहिये। यह गीला तथा सूखा दोनों रूप में मिलता है। लेकिन इसका सूखा रूप प्रयोग करने में ज्यादा अच्छा होता है।

(५) **विष चारा**—टिड्डे (फिनगे), कदुये (सुण्डे) तथा चींटी और मक्खियों इत्यादि पर जब किसी प्रकार का भुहराव या छिड़काव नहीं सफल होता उस समय उनके भोजन पर विचार करके खाने वाली कुछ वस्तुयें बना कर उनके आने जाने के स्थान पर रख दी जाती हैं। इन वस्तुओं में विष मिला रहता है। इसलिये उन्हें विष चारा (Poison baits) कहा जाता है।

टिड्डा, कदुआ (चने इत्यादि का) तथा झींगुर के लिये विषचारा:— १ सेर गेहूँ का चोकर, ४ तोला विष (पेरिस ग्रीन, सफेद संखिया, ह्वाइट आरसेनिक या सोडियम फ्लाउसिलिकेट) लेकर किसी लकड़ी की पैनी से सान लीजिये। हाथ से न छूइये यह विष है। इन्हें मिलाते समय १ सेर तक पानी भी मिला लीजिये। इस तरह विषचारे को तैयार करने से यह चारा न तो बहुत गीला होगा और न सूखा ही। जिस जगह इसकी आवश्यकता हो इसे बखेर दीजिये। पेट में जाते ही इसके खाने वाले नष्ट हो जांयगे। इस चारे को, रात में निकलने वाले पतंगों को नष्ट करने के लिये गोधूली में तथा दिन में निकलने वाले पतंगों को नष्ट करने के लिये तड़के फैलाइये।

स्पर्श-विष (Contact- Poison)

फूल, फल और पत्तियों को कुतुर कर खाजाने वाले पतंगों की अपेक्षा खेती को हानि पहुँचाने वाले कई ऐसे पतंग होते हैं जिनका मुँह सूई के समान बना हुआ

होता है। इस प्रकार के मुँह में किसी भी वस्तु में छेद करके उसका रस चूस लेने का प्रबन्ध रहता है। अतः काटकर खाने की अपेक्षा ऐसे पतंग रसीली पत्ती अथवा रस और दूध से भरे दाने के भीतर अपना मुँह डालकर रस चूसते हैं। उदाहरण के लिये तनिक धान के पतंग "गंधी" की ओर ध्यान दीजिये। इतना कस कर उनका आक्रमण होता है कि भूसी छोड़ धान में कुछ मिलता ही नहीं। "सरसों की लाही", कपास के लाल पतंग" तथा "फांफा" इत्यादि अपने सूई के समान मुँह की सहायता से ही अपना पेट भरते हैं। अब प्रश्न यह उठता है कि जब ये पतंग पौधों के किसी भाग (पत्ती, फूल या फल) के भीतर अपना मुँह डालकर रस चूसते हैं तो उनको किस प्रकार का विष दिया जाय ? काट कर खाने वाले पतंगों के लिये तो पत्तियों के ऊपर ही विष बखेर कर उन्हें नष्ट किया जाता है क्योंकि पत्ती या फूल के साथ वे विष भी खा जाते हैं। ऐसे पतंगों के लिये स्पर्श-विषों का प्रयोग ठीक होता है जो इनके शरीर की बाहरी चमड़ी पर वने सांस लेने वाले छेदों को बन्द कर देते हैं। इसके फलस्वरुप ये पतंग घुटकर मर जाते हैं। साथ ही साथ स्पर्श-विष उनके शरीर की चमड़ी को पार कर उनकी कोमल मांस पेशियों में घुसकर सारे शरीर में फैल जाते हैं। इस प्रकार के विषों का परिणाम वही हुआ जो उदर-विष का होता है।

स्पर्श-विष भी अनेक प्रकार के होते हैं। सरलतापूर्वक समझने के लिये इन्हें नीचे लिखे गये चार भागों में बांटा जा सकता है:—

१—पेड़ पौधों से बनाये जाने वाले स्पर्श-विष।

२—गंधक और चूने से बनाये जाने वाले स्पर्श-विष।

३—विभिन्न प्रकार के तेलों से बनाये जाने वाले स्पर्श-विष।

४—विभिन्न प्रकार के साबुनों से बनाये जाने वाले स्पर्श-विष।

(१) पेड़ पौधों से बनाये जाने वाले स्पर्श-विष—में निकोटीन तथा तम्बाकू और मदार (आक या अर्क) की पत्तियों के काढ़े प्रधान हैं।

नीकोटीन—यह तम्बाकू से निकाला हुआ एक प्रकार का सत्त है। यह केवल स्पर्श-विष के रूप में ही नहीं बल्कि धूप-विष और उदर-विष के रूप में भी अच्छी तरह से प्रयोग किया जासकता है। गंधक मिश्रित नीकोटीन जिसको निकोटीन सल्फेट कहते हैं बाजार की दूकानों में मिलता है। यह बहुत ही गुणकारी होता है। इसे इसकी तौल से ८०० से १००० गुना पानी में घोलने के बाद यह प्रयोग किया जाता है थोड़ा साबुनमिला देने से इसका प्रयोग और अच्छा होता है (१ गैलेन निकोटीन सल्फेट १००० गैलन पानी तथा १०० घन इञ्च साबुन)। परन्तु बाजार में बिकने वाला यह कीटमार बहुत ही कीमती पड़ता है। इसलिये अच्छा यह होता है कि तम्बाकू के इस सत्त को घर में ही तैयार करके छिड़का जाय।

घर में निकोटीन तैयार करने के लिए—१ सेर अच्छी तम्बाकू की पत्तियां लीजिये। उन्हें २० सेर पानी में खूब उबालिये। बीच बीच में पानी को किसी लकड़ी

को पैनी से घोंटते रहने से अधिक सत्त निकलता है। इसी पानी में १ सेर साबुन टुकड़े टुकड़े काटकर मिला दीजिये। २-३ सेर पानी जल जाने पर इसे उतार लीजिये। काढ़े को निथार कर उसमें उसका ८ गुना पानी मिलाकर छिड़काव कीजिये। इससे लाभ होगा। इस काढ़े को और अच्छा बनाने के लिये तम्बाकू और पानी खौलाने के अधिक पहिले तम्बाकू को २४ घंटे पानी में भिगोकर रख दीजिये और फिर बाद में उबालिये। इससे बड़ा गुणकारी काढ़ा बनता है।

मदार का काढ़ा—मदार को आक और अर्क भी कहते हैं। इसके काढ़े से भी भांटे और सरसों के लाही नष्ट हो जाते हैं। इसे बनाने के लिये ८-१० सेर पानी लेकर उसमें १०० तोले (१ सेर) मदार की पत्तियों के टुकड़े और इसी के साथ आध पाव साबुन (५०१ या सनलाइट) भी डाल दीजिये। इन तीनों को आग पर चढ़ाकर सवा घंटे तक खौलाइये। बाद में छानकर रख लीजिये। इसका छिड़काव करने से अधिक लाभ होता है।

(२) गंधक और चूने से बनाए जाने वाले स्पर्श-विष

गंधक तो स्वयं कीटमार है परन्तु चूने के साथ मिलाकर इसको प्रयोग करने से इसकी विशेषता अधिक बढ़ जाती है। चूना और गंधक बराबर मिलाकर उसमें ¹⁄₄वां भाग लेड आरसीनेट मिलाकर पौधों पर भुहराने से अधिक पतंग मर जाते हैं।

चूना और गन्धक का घोल—ईख की पत्तियों पर पतंगों की तरह एक दूसरा बहुत छोटा जन्तु आक्रमण करता है जिसके आठ पांव होते हैं। ये पत्तियों को बेकार कर देते हैं। इन्हें "माइट" कहा जाता है। इनके आक्रमण से बचने के लिये चूने और गन्धक का घोल बहुत ही सहायक होता है। इसे निम्न रीति से तैयार किया जाता है:—

१० सेर पानी लेकर उसे गरम करना शुरू कीजिये और उसमें १ सेर चूना डाल दीजिये। चूना पानी से मिलकर घुलना प्रारम्भ करेगा। अब उसी में १॥ सेर गंधक डाल दीजिये। तीनों को अब किसी लकड़ी से घोंटिये। इस प्रकार घोंटते घोंटते जब वह लाल भूरे रंग का हो जाय तो उतार लीजिये आगे न खौलाइये। इस प्रकार से आपका चूने और गंधक का घोल तैयार हो जायगा। घोल को छिड़कने के पहिले इसमें १५ से २० गुना पानी मिलाकर ढीला कर लीजिये।

(३) तेलों से बनाये जाने वाले स्पर्श-विष

कीट-पतंगों को मारने के लिये तेलों का प्रयोग सतरहवीं सदी में ही आरम्भ हो गया था। परन्तु उनका कोई वैज्ञानिक आधार नहीं था। अंधा धुन्धी छिड़कने के कारण पौधे जल जाते थे। जब उनका वैज्ञानिक ढंग से प्रयोग होना आरम्भ हुआ तो इन्हीं तेलों से अधिक सफलता मिलने लगी है।

तेल तीन प्रकार के होते हैं, १—खनिज तेल—जिनमें मिट्टी का तेल तथा मशीनों में प्रयोग किये जाने वाला लुब्रीकेटिंग आयल मुख्य हैं। २—जानवरों का तेल

इसमें मछली तथा ह्वेल मछली के तेल प्रसिद्ध हैं। ३—वनस्पति तेल अलसी इत्यादि के तेल। इन सभी तेलों में कीट-पतंगों को नष्ट करने की शक्ति होती है।

मिट्टी के तेल का घोल—यह घोल बहुत पहिले से प्रयोग होता आ रहा है। इसको बनाने के लिये १ पाव साबुन लेकर उसके खूब छोटे छोटे टुकड़े कर डालिये। फिर इसको ३ सेर पानी में डालकर इसे आग पर चढ़ा दीजिये। साबुन गल जाने पर उसे आग पर से उतार लीजिये। अब इस साबुन और पानी के घोल में ६ सेर मिट्टी का तेल डालकर किसी पिचकारी से (जैसे होली पर बाल्टी में पिचकारी से रंग मिलाते हैं) खूब मिलाइये। यदि पिचकारी न हो तो किसी लकड़ी की पैनी से खूब चलाइये और फेन उठाइये। जब इसमें खूब फेन उठ जाय तथा तेल और पानी साबुन के झाग के साथ मिल जाय तो आप उसको चलाना बन्द कर दें। यह आपका मिट्टी के तेल का घोल तैयार हो गया। अब जहाँ प्रयोग करना हो इसमें इसका १६ गुना जल मिलाकर काम में लाइये।

क्रूड आइल (चक्की के तेल) का घोल—भी मिट्टी के तेल के घोल की तरह तैयार किया जाता है। इसमें साधारण साबुन की जगह मछली के तेल का साबुन (Fish Oil Soap) तथा साधारण मिट्टी के तेल की जगह चक्की के तेल का प्रयोग किया जाता है। इस घोल के एक सेर में ५०-५५ सेर पानी मिलाकर प्रयोग किया जाता है। यह मिट्टी के तेल से बने हुये घोल से अधिक टिकाऊ और ज्यादा देर तक चिपकने वाला होता है। यह जल्दी उड़ता भी नहीं और रसों को चूसने के लिये सूई के समान मुँह वाले सभी पतंगों को नष्ट करने के लिये यह इस्तेमाल किया जा सकता है। बोने के पहिले अगर ईख के टुकड़ों को इसमें डुबो दिया जाय तो उनमें दीमक कम लगते हैं। सींचने वाले पानी में यदि इसे मिला दिया जाय तो खेत में भी दीमक नहीं लगते।

(४) साबुन से बनाये जाने वाले स्पर्श-विष

साबुन स्वयं एक कीटमार है। इसका प्रयोग १७८५-८६ से ही प्रारम्भ हो गया था। साधारणतया साबुन के घोल से मुलायम मांस वाले पतंग लाही इत्यादि नष्ट हो जाते हैं। कास्टिक सोडे से बने हुये साबुनों की अपेक्षा कास्टिक पोटास के साबुन अधिक गुणकारी होते हैं। लाही जैसे पतंगों को मारने के लिये इस साबुन को १ पाव लेकर ७-८ सेर पानी में घोलकर प्रयोग किया जाता है। अकेले साबुन के घोल की अपेक्षा उसमें चक्की अथवा मिट्टी का तेल मिलाने से इसकी उपयोगिता बढ़ जाती है। निकोटीन मदार के काढ़े तथा खनिज और जानवरों के तेलों के घोल के साथ इसकी उपयोगिता का वर्णन पहिले ही किया गया है। साबुन का प्रयोग निम्न कारणों से अधिक किया जाता है :—

(१) यह उन घोलों को अधिक फैलाता है जिसमें प्रयोग किया जाता है।

(२) तेलों में झाग भी अधिक पैदा करता है।

यों तो पतंगों को नष्ट करने के लिये सभी प्रकार के तेलों से साबुन बनाया जा सकता है लेकिन मछली का तेल अधिक मात्रा में प्रयोग किया जाता है क्योंकि यह सस्ता और गुणकारी होता है। कास्टिकपोटास और मछली के तेल से बना हुआ साबुन ठोस नहीं तरल और बहने वाला होता है। इसमें पानी मिलाकर आसानी से प्रयोग किया जा सकता है। लेकिन कास्टिकसोडा और मछली के तेल का बना हुआ साबुन ठोस और कठिन होता है। इसे पानी में घोलने में बड़ी दिक्कत होती है। इसके लिये गर्मी और समय की आवश्यकता होती है।

धूप-विष

(Fumigants)

इस प्रकार के विष भी कीट-पतंगों को नष्ट करने के लिए प्रयोग किये जाते हैं इनमें यह विशेषता होती है कि ये विष गैस के रूप में हवा में फैल जाते हैं जो कीट-पतंगों के साँस लेने से उनके शरीर के भीतर घुसकर उन्हें मार डालते हैं। उदर और स्पर्श-विषों की अपेक्षा धूप-विष बहुत सफल होते हैं क्योंकि हवा के साथ वे उन सभी छोटे बड़े सुराख और छेदों में भी आसानी से घुस जाते हैं जहाँ कीट पतंग छिपे रहते हैं। चूँकि धूप-विष हवा के साथ वायुमंडल में आसानी से फैल सकते हैं इनका प्रयोग खुले खेत के कीट-पतंगों को नष्ट करने के लिए सम्भव नहीं है। खेतों में प्रयोग करने के लिये, खेत को चारों ओर कैनवस के बोरे (बरसाती चट्टियाँ) से ढकना पड़ेगा जो व्यवहारिक रूप में सब नहीं कर सकते। अतः इसका प्रयोग उन जगहों में सफल हो सकता है जो चारों तरफ से बन्द हों, जैसे कमरे, मकान या रेल के डिब्बे। गल्ले की गुदामों, आटा की चक्कियों तथा घरों के अन्धेरे छोटे कमरों में अनेक प्रकार के कीट पतंग होते हैं जो गल्ले को बराबर खाते रहते हैं। इनमें घुन तथा पाई इत्यादि प्रधान हैं। बोरे के भीतर रक्खा हुआ चना और गेहूँ घुन जाता है। उन गोदामों में जहाँ अन्न के लाखों बोरे रक्खे रहते हैं इन कीट-पतंगों से अधिक नुकसान होता है। सैनिक गुदामों में ये कीट-पतंग आक्रमण करके एक कठिन परिस्थिति पैदा कर सकते हैं। अतः इन गोदामों को हानि पहुँचाने वाले पतंगों को नष्ट करने के लिए उदर अथवा स्पर्श-विष अधिक सफल नहीं हो सकते। यहाँ तो केवल धूप-विषों के प्रयोग से ही सफलता मिल सकती है। इस तरह की गुदामों को बचाने के लिये पिछले कई वर्षों से धूप-विषों का प्रयोग हो रहा है। धूप-विषों में हाइड्रोसायनिक एसिड (Hydrocyanic acid), कार्बन बाई सलफाइड (Corbon bisulphide) सलफर डाइआकसाइड (Sulphur dioxide) तथा पेट्रोल मुख्य हैं। वे ही धूप-विष अच्छे माने जाते हैं जोः—

(१) कीट-पतंगों को मारने की शक्ति रखते हों।

(२) प्रयोग करने पर पौधों को नष्ट न कर सकें।

(३) हवा में अधिक उड़ने वाले हों।

(४) हवा में अधिक फैलने वाले हों।

(५) सस्ते हों।

रहने वाले घरों में मच्छर, मक्खी, खटमल तथा मेज कुर्सी इत्यादि सामान के कीड़ों को दूर करने के लिये भी धूप-विषों का प्रयोग होता है। चूहों की बिलों में साइनों गैस प्रयोग करने से चूहे तक मर जाते हैं।

धूप-विष का प्रयोग करते समय उस स्थान की सभी खिड़कियों और दरवाजों को कसकर बन्दकर देना चाहिये। इससे धूप-विष बाहर न उड़ सकेगा। धूप-विष प्रयोग करने के पहिले कमरे अथवा गोदाम से आग या प्रकाश (लालटेन दीपक) हटा लेना चाहिये क्योंकि बहुत से धूप-विषों से आग लग जाती है जिससे समूची गोदाम के भस्म हो जाने का डर रहता है। धूप-विष को प्रयोग करने वाले को शीघ्र ही बन्द जगह से बाहर निकल जाना चाहिये। जिस समय कमरे में धूप-विष का प्रयोग हो रहा हो उस समय उसके भीतर किसी को भी नहीं जाना चाहिये क्योंकि इसमें दम घुटकर मर जाने का डर रहता है। आवश्यक समय तक कमरे को बन्द रखने के बाद उसकी खिड़की और दरवाजे खोल देना चाहिये जिससे भीतर की विष-गैस बाहर निकल जाय। कहीं कहीं तो दीवालों के ऊपरी भाग में पंखे लगे होते हैं। धूप-विष समाप्त करने के बाद वे पंखे खोल दिये जाते हैं। ध्यान रखिये कि खिड़की दर-वाजे खोलते ही उसमें कभी न घुसिये। इस समय भी यदि कोई आदमी उसमें घुसता है तो उसे चक्कर आने लगता है तथा उसके सिर में दर्द होने लगता है। इसके लिये उसे शीघ्र ही बाहर निकाल लेना चाहिये। साफ़ ताजी हवा उसे थोड़ी देर में होश में ला देगी। धूप-विष का मनमाना प्रयोग किसी को भी नहीं करना चाहिये। इस कला में निपुण व्यक्ति ही धूप-विषों का प्रयोग कर सकते हैं।

<u>हाइड्रोसायनिक एसिड</u>:—यह एक प्रकार की गैस है जिसे गंधक के तेजाब और पोटैशियम या सोडियम साइनाइड से तैयार किया जाता है। युनाइटेड स्टेट्स कृषि विभाग के डी० डब्लू० काक्युलेट (D. W. Coquillett) ने सन् १८८६ में सबसे पहिले इसका प्रयोग कैलीफोर्निया में किया था। यह गैस बखार के कीट-पतंगों को मारने में अपना सानी नहीं रखता। परन्तु अपनी इस विशेषता के साथ साथ यह उतना ही खतरनाक भी है। जो लोग इसकी जानकारी न रखते हों उन्हें इसे प्रयोग करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिये। साधारणतया देहाती भाइयों में तो इसकी चलन का प्रचार तक खतरनाक है। भारतवर्ष में यह गैस बड़ी बड़ी सरकारी तथा सैनिक गुदामों के कीट-पतंगों को मारने के लिये प्रयोग की जाती है। विदेशों से आने वाले अन्न के बोरों पर इस गैस का प्रयोग बन्दरगाह के पास ही एक विशेष स्थान पर कर दिया जाता है जिसे क्वेरेनटीन कहते हैं। इस गैस के प्रयोग में अब अधिक सुधार ला दिया गया है। आजकल अब इसका पाउडर आने लगा है जिसे साइनों-गैस कहते हैं। इसको पौधों के रस चूसने वाले अनेक पतंगों, भूमि में रहने वाले पतंगों तथा चूहों को मारने के लिये प्रयोग किया जाता है।

<u>कार्बन बाइसलफाइड</u>—यह तरल रसायन है। बोतल का मुँह खोलते ही यह उड़ने लगता है। जिन पौधों या दानों को बचाने के लिये यह रसायनिक गैस

प्रयोग की जाती है उन्हें कोई नुकसान नहीं होता। लेकिन यह जल उठने वाली वस्तु है। इसलिये इसको सम्भाल कर रखिये और इस क्रिया में चतुर आदमी से ही इसका प्रयोग कराइये। इस विष का मनमाना प्रयोग भी नहीं करना चाहिये। कमरे को नापने के बाद उचित मात्रा में ही इसे व्यवहार कीजिये। ३० घनफुट स्थान के लिये १ छटाँक कार्बन बाइसल्फाइड २४ घंटे तक प्रयोग किया जाता है। इसे उचित मात्रा और समय तक प्रयोग किये जाने पर अधिक सफलता मिलती है। इस गैस के लगते ही सभी कीड़े-मकोड़े (घुन इत्यादि) मर जाते हैं।

सल्फर डाइआक्साइड—यह धूप-विष गंधक को सीधे आग पर जलाने से उत्पन्न किया जाता है। गंधक की बनी बत्तियाँ भी बाजार में मिल जाती हैं। इस गैस को आसानी से प्रयोग किया जा सकता है। साधारण देहाती घरों में भी थोड़ी बुद्धि रखने वाले लोग इसको प्रयोग कर सकते हैं। पर इतना सब कुछ होते हुये इसमें एक बुराई है। इसका धुआँ धातुओं को काला कर देता है। इसलिये किवाड़-दरवाजों की मुठियाँ और खूटियाँ काली पड़ जानी हैं। अगर बरसात के दिनों में इसका धुआँ दिया जाय तो नमी में गंधक का धुआँ गंधक का तेजाब बनकर पर्दों तथा लटके हुए और कपड़ों को गला देता है। इसकी इन बुराइयों को ध्यान में रखते हुए इस गैस को पैदा करने के पहिले :—

(१) जहाँ तक हो सके धातु के बर्तन अलग कर दीजिये। मुठियों पर ग्रीस या घी लगा दीजिये।

(२) गंधक का बर्तन ऊँचाई पर रखकर उसमें गंधक जलाइये।

(३) खाने की चीजें, आटा इत्यादि पर भी इस गैस का प्रभाव पड़ता है। इसलिये उन्हें भी हटा दीजिये।

(४) इस गैस को सूखे मौसम में ही प्रयोग कीजिये। एक हजार घनफीट के लिये आधा सेर गंधक लगता है।

इन विषों के अतिरिक्त क्लोरोपिकरिन, मिथाइल-ब्रोमाइड, इथाइल-डाई क्लोराइड, तथा पैराडाइक्लोरोबेनजीन इत्यादि अन्य दूसरे धूप-विष भी हैं, लेकिन स्थान की कमी के कारण उनका वर्णन असम्भव जान पड़ता है।

वर्तमान वैज्ञानिक युग के दो प्रधान कीटमार

डी० डी० टी० और बी० यच० सी०

डी० डी० टी० जिसका पूरा नाम डाइक्लोरो-डाइफिनाइल-ट्राइक्लोरोइथेन है। यह विश्व के अधिकांश हानिकारक कीट-पतंगों के सर्वनाश के लिये अपना सानी नहीं रखता। और सच पूछिये तो इसके आविष्कार के साथ ही साथ मनुष्य, पशु और कृषि को हानि पहुँचाने वाले कीट-पतंगों के सर्वनाश की समस्या ही हल हो गई। यों तो डी० डी० टी० का सर्वप्रथम आविष्कार जरमनी के एक रसायन शास्त्र के विद्यार्थी, ओथमर जीडलर ने सन् १८७४ में ही किया था परन्तु इसके गुणों के आविष्कार का

श्रेय स्विटजरलैण्ड की गाइगी-कीटमार-निर्माण कम्पनी के पालमुलर महोदय को ही है जिनने अनेक रस रसायनों के गुणों की जांच के साथ साथ सन् १९३९ में डी० डी० टी के गुणों का अध्ययन कर इसे कीट-पतंगों का उदर तथा स्पर्ष-विष घोषित किया। मनुष्य तथा पशुओं पर कुप्रभाव डालने वाले खटमलों, मच्छरों, मक्खियों, तिलचट्टों तथा अन्य कीट-पतंगों पर इसका प्रयोग सर्वप्रथम उन्होंने ही किया। परन्तु फिर भी इसके गुणों का और अधिक परीक्षण करने के लिये लगभग २० पौण्ड डी० डी० टी० युनाइटेड स्टेट्स के ब्युरियो आफ एण्टोमालाजी एण्ड प्लांट क्वैरेनटीन को भेजा गया। चूंकि उस समय विश्व का द्वितीय महायुद्ध चल रहा था अमेरिका में डी० डी० टी० का परीक्षण मच्छर, मक्खी, जुआं तथा चीलर इत्यादि पर किया गया। इन कीट-पतंगों के सर्वनाश में डी० डी० टी० ने जो गुण दिखाये उनका इस पुस्तक में वर्णन करना असम्भव है, फिर भी इतना अवश्य कहा जा सकता है कि अमेरिका में किये गये प्रयोगों की सफलता ने मुलर महोदय के दावों की पुष्टि कर दी। इसके फलस्वरूप सन् १९४३ ई० में डी० डी० टी० का व्यवसायिक पैमाने पर निर्माण प्रारम्भ हो गया और नवम्बर सन् १९४४ में पहिली बार २,०००,००० पौण्ड डी० डी० टी० तैयार किया गया।

डी० डी० टी० का जितना गुणगान किया जाय वह थोड़ा है। संसार के वे भाग जहां विषैले कीट-पतंगों के कारण रहना कठिन था डी० डी० टी० के प्रयोग के कारण मनुष्य के रहने योग्य बना लिये गये हैं। इतना ही नहीं मलेरिया, टाइफस और आमातिसार फैलाने वाले मच्छर और मक्खियों का डी० डी० टी० द्वारा विनाश कर इन रोगों का विकास रोक दिया गया। अपने देश में ही भाभर-तराई तथा अन्य नमी वाले भागों में डी० डी० टी० द्वारा मच्छरों का विनाश कर मलेरिया समाप्त कर दिया गया। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि सन् १९५१ में लगभग ५,०००,०००,० व्यक्ति ऐसे मकानों में रहे जिनमें डी० डी० टी० का छिड़काव हुआ। कहने का अर्थ यह कि मनुष्य तथा मनुष्य के साथी पशुओं को हानि पहुँचाने वाले जूँ, चीलर, मक्खी और मच्छर जैसे कीट-पतंगों का यदि आज दिन तक किसी वस्तु से सही माने में विनाश हो पाया तो वह है डी० डी० टी०।

किसी स्थान पर ५% शक्ति वाले डी० डी० टी० के छिड़काव मात्र से वहां बैठने वाले मच्छर और मक्खियां मर जाती हैं। यह प्रभाव लगभग कई महीनों तक बना रहता है।

मक्खी, मच्छर तथा खटमल इत्यादि पर इसका परीक्षण करने के साथ ही साथ सन् १९४३ ई० में युनाइटेड स्टेटस में डी० डी० टी० का प्रयोग कृषि-हानिकारक कीट-पतंगों पर भी किया गया। इसके फलस्वरूप यह निश्चय हो पाया कि इन कीट-पतंगों का भी डी० डी० टी० से सर्वनाश किया जा सकता है। डी० डी० टी० का प्रयोग करने के पश्चात विशेषज्ञ इस निशकर्ष पर पहुँचे कि:—

(१) अन्य कीटमारों की अपेक्षा डी० डी० टी० से अधिक कृषि हानिकारक कीट-पतंग नियंत्रित किये जा सकते हैं।

(२) डी० डी० टी० कृषि हानिकारक कीट-पतंगों तथा उनको नष्ट करने वाले अन्य कीट-पतंगों का बड़ा भयंकर विष है।

(३) उस घास के चरने पर, जिस पर डी० डी० टी० फेंकी गई हो जानवरों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। उनके दूध से निकाले गये मक्खन में क्या भिन्नता आजाती हैं अभी तक इस पर कोई राय नहीं प्रकाशित हुई है।

(४) डी० डी० टी० द्वारा कपास की ढोंढ़ के सुण्डे तथा कुछ और दूसरे कीट-पतंग नहीं नष्ट हो पाते।

(५) कीट-पतंगों का इतना भयंकर विष होते हुये भी यदि डी० डी० टी० का नियमनुसार मनुष्य पर प्रयोग किया जाय तो कोई हानि नहीं पहुँचाता। लाखों व्यक्तियों के देह पर रेंगने वाले जुयें और चीलर १०% शक्ति वाले डी० डी० टी० से नष्ट किये गये हैं।

भारतवर्ष में भी पिछले कई वर्षों से इसका बराबर प्रयोग किया जा रहा है। अस्पतालों तथा औषधालयों के साथ साथ खेत के कीट-पतंगों को नष्ट करने के लिये इसका प्रयोग दिनोदिन बढ़ता जा रहा है। टिड्डियों के सर्वनाश के लिये डी० डी० टी० का प्रयोग वहुत ही लाभदायक सिद्ध हुआ है।

बी० यच० सी० का पूरा नाम बेन्जीन हेक्जाक्लोराइड है। इसे सर्वप्रथम सन् १८२५ ई० में मिचेल फैराडे ने तैयार किया था, लेकिन इसके गुणों का आविष्कार फ्रांस और ब्रिटेन में क्रमशः १९४१ और १९४२ में हुआ। परन्तु द्वितीय महायुद्ध के कारण इस सम्बन्ध की अमेरिका में कोई सूचना नहीं प्राप्त हुई। यह तो मार्च १९४५ की बात है कि अपने एक भाषण में महोदय आर० स्लेड ने इसका वर्णन अमेरिका में किया था। सन् १९४६ और ४९ के बीच इसका व्यावसायिक आधार पर निर्माण प्रारम्भ हुआ।

बी० यच० सी उदर तथा स्पर्ष विष है। इसके शरीर में लगते ही कीट-पतंग प्रभावित हो जाते हैं। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि इस विष के शरीर में लगने के १५ मिनट के भीतर ही कीट-पतंग चित होकर अपने हाथ पांव फटकने लगते हैं और थोड़ी देर बाद मर जाते हैं। इसकी गंध इतनी तेज होती है कि इसके समीप रखने पर ही कीट-पतंग भागने लगते हैं। चींटी और चींटा समूह के पतंगों का तो यह भयानक विष है। ५% से ७% शक्ति का यह विष कृषि हानिकारक कीट-पतंगों के सर्वनाश के लिये पिछले कई वर्षों से प्रयोग किया जारहा है। धान के गंधी पतंग को नष्ट करने के लिये यह धान उगाने वाले सभी क्षेत्रों के किसानों के बीच घर कर गया है। इसके प्रयोग से प्रौढ़ पतंगों के साथ ही साथ सुण्डे भी समाप्त हो जाते हैं।

इस समय अपने देश में कई ऐसी फर्में हैं जो डी० डी० टी० तथा बी० यच० सी० नामक कीटमारों को अनेक प्रकार के व्यवसायिक नामों से बेंच रही हैं। ये दोनों कीट-मार पाउडर रूप में भुहराने तथा पानी में घोलकर छिड़कने वाले रूप में कीटमार बेचने वाली दूकानों से प्राप्त किये जा सकते हैं। इण्डियन केमिकल इण्डस्ट्रीज की बनी गैमे-क्सीन एक प्रकार का बी० यच० सी० पाउडर ही है। कृषि हानिकारक कीट-पतंगों को

नष्ट करने के लिये यह सरलतापूर्वक खेतों में यंत्रों द्वारा बखेरा जा सकता है। इसी प्रकार बम्बई की भारत-पल्वराइजिंग-कम्पनी हेकज़ामार ट्रेडमार्क के अन्तर्गत कई प्रकार के कीटमार बनाकर अधिक अन्न उपजाओ आन्दोलन में योग दे रही है।

कीट-पतंगों से दूर रहने के लिये

खेती के सम्बन्ध में कुछ आवश्यक बातों का ध्यान रखिये।

कृषि हानिकारक कीट-पतंगों की रोक थाम के लिये कई विषों के प्रयोग का वर्णन किया गया। वे सब बहुत ही सफल सिद्ध हुये हैं। परन्तु इतना सब कुछ होते हुये भी उनसे मन चाहा छुटकारा नहीं मिल पाता। फिर प्रश्न यह उठता है कि वह इलाज किस काम का जो रोग ठीक न कर सके। इसलिये इस प्रश्न के अनुसार इसका उत्तर यह है कि दवा और उपचार करने की अपेक्षा ऐसी परिस्थिति ही क्यों न पैदा कर दी जाय जिससे हानिकारक कीट-पतंगों को विकास का अवसर ही न मिल सके। किसानों की लापरवाही कीट-पतंगों के आक्रमण और उनके विकास में सहायक होती हैं। अतः आगे बताये गये कुछ नियमों का सदैव ध्यान रखिये।

(१) खेतों को खूब साफ रखिये :—फसल को छोड़कर खेतों में या खेत के मेड़ों पर की बाकी सभी बेकार घासों को निकालते रहिये, क्योंकि इन बेकार घासों में फसल के हानिकारक कीट-पतंग छिपे रहते हैं और अपनी आवश्यक फसल पाते ही आक्रमण करना आरम्भ कर देते हैं। धान की माछी और धान के गंधी धान बढ़ने के पहिले अगल बगल की घासों में छिपे रहते हैं।

(२) सूखे-मुरझाये हुये पौधों को खेत से निकाल दीजिये :—बहुत से पौधे या पौधे के कुछभाग सूख जाते हैं और सूख कर गिर जाते हैं। इस समय यही समझना चाहिये कि या तो उन पर आक्रमण हो चुका है या हो रहा है। इसलिये उन्हें जल्दी से जल्दी खेतों से बाहर हटा दीजिये। भांटे के पौधों के ऊपर के भाग सूखकर लटक जाते हैं, क्योंकि उन डालों में सुण्डे घुसकर उनको निर्जीव कर देते हैं। इस प्रकार के अनेक सुण्डों का आक्रमण भी अन्य पौधों पर होता है और उनकी भी यही दशा होती है। कभी कभी पेड़ की छाल अपनी जगह से हटकर ढीली हो जाती है। उसे भी निकाल दीजिये। पेड़ पौधों में जहाँ कहीं दरार या खुरचन दिखाई पड़े उसे शीघ्र ही तारकोल या मिट्टी से भर दीजिये।

(३) फसल काट लेने के बाद खेत का कूड़ा-करकट साफ कर दीजिये :—अधिकांश भारतीय किसानों को केवल फसल की कटाई पर ही ध्यान रहता है। खलिहान की लालच के कारण वे फसल काटकर अपने खेत में खूटियाँ, डंठल और खर पतवार यों ही छोड़ देते हैं। यह ठीक नहीं है। इनके नीचे ही कीट-पतंग या उनके अण्डे-सुण्डे छिप जाते हैं और अवसर मिलते ही भूमि में घुस जाते हैं। वे वहीं अपनी जीवनवृत्त पूरी करने के बाद अगली फसल पर फिर आक्रमण कर देते हैं। इस तरह उनके रोक थाम पर किसान को शारीरिक और आर्थिक कष्ट उठाना पड़ता

है। अरहर की कटाई के बाद खेत में खूंटियाँ पड़ी रह जाती हैं। थोड़े दिनों के बाद उनको खाकर दीमकों को बढ़ने का अवसर मिलता है। इस तरह से अनेक कीट-पतंग घास और खरपतवार में छिप जाते हैं। इसलिये भविष्य में कीट-पतंगों के विकास को रोकने के लिये खेत के सब खरपतवार इकट्ठा करके खेत की सफाई के साथ उन्हें किसी गड्ढे में डालकर खाद बनाई जा सकती है।

(४) खेत की गहरी जुताई कीजिये :—इससे भूमि में छिपे सुण्डे और अण्डे बाहर होकर सूर्य प्रकाश और अन्य जीव-जंतुओं द्वारा नष्ट कर दिये जाते हैं।

(५) समय-समय पर मेड़ों को तोड़ कर नया करते रहिये :—इससे मेंड़ में दिये जाने वाले टिड्डे और फिनगों के अण्डे भी नष्ट हो जाते हैं। फिनगे खेती को कम हानि नहीं पहुँचाते। ये ही फिनगे बरसात में पानी की कमी हो जाने पर नये उगते हुये अरहर, ज्वार और बाजरे के छोटे छोटे पौधे काटकर गिरा देते हैं। इसी समय किसान कहते हैं कि खेत में कटुआ लग गये हैं।

(६) यदि सम्भव हो तो कुछ देर के लिये खेत को पानी से भर दीजिये:—इससे खेत में छिपे सुण्डे इत्यादि बाहर निकल आवेंगे और उन्हें पक्षी खा डालेंगे। चने या आलू के कटुओं को नष्ट करने के लिये यह अच्छा ढंग है।

(७) एक खेत में लगातार एक ही फसल न बोइये:—किसान ऐसा करते हैं लेकिन पैदावार की दृष्टि से। फसलों के बोने में इस हेर फेर से एक फसल के कीट-पतंग दूसरे फसल को नुकसान नहीं पहुँचा पाते। गंधी-पतंग को ही लीजिये यदि उसी खेत में बराबर धान बोया जाय तो पतंग के अण्डे बच्चे सालभर बढ़ते और मरते रहेंगे। लेकिन अगर धान के बाद उस खेत में दूसरी फसल बो दीजाय तो गंधी को भोजन ही नहीं मिल पायेगा। अतः फल यह होगा कि अधिकांश गंधी मर जांयगे और बचे हुये कीट-पतंग इधर उधर भाग जांयगे। इसलिये केवल पैदावार की दृष्टि से नहीं वरन् कीट-पतंगों की बाढ़ को रोकने के लिये भी फसल की बोआई में हेर फेर करते रहना चाहिये।

अन्न को बखार में सावधानी से रखिये.

बालियों की दवांई मिंजाई के बाद ही लोग जल्दी जल्दी अन्न को बखार में भरने का प्रयत्न करते हैं। अन्न के साथ घुन, पाई तथा अन्य कीड़े-मकोड़ों का बन्द हो जाना असम्भव नहीं है। वे ही कीट-पतंग बखार में जाकर बढ़ते और समूचे अन्न को बरबाद कर देते हैं। अन्न ही नहीं बल्कि बोरा बन्दी करके रक्खी जाने वाली दूसरी चीजें, आलू, अदरख, लासुन, प्याज तथा हल्दी और अन्य मसालों की भी यही दशा होती है। इसलिए बखार में रखने के पहिले:—

(१) कोठिला या बखार की पूरी सफाई कर लीजिये:—उसमें कोई बिल या छेद न रहने पावे। सफाई करने के बाद उस स्थान में आग पर लोबान या गंधक सुलगाइये और सब खिड़की दरवाजे बन्द कर दीजिये। इस क्रिया को करते समय भीतर किसी को न जाने दीजिये।

(२) अन्न को बोरों में रखने के पहिले उन्हें खूब साफ कर लीजिये:—सफाई के लिये अच्छा हो कि कपड़ा धोने वाले सोडे और पानी को आग पर खौलाकर बोरों को साफ कीजिये और फिर उन्हें सुखा कर उनमें थोड़ा गैमेक्सीन लपेट कर तब अन्न को भरिये। अपने पास बोरा न रहने पर गांव वाले अपने पास पड़ोस से बोरे माँग कर मनमाना बोराबन्दी करते हैं। यदि उन बोरों में कहीं घुन और पाई छिपे होंगे तो क्या आप सम्भव समझते हैं कि आपका अन्न घुनने से बच जायगा। इस लिये मनमाना बोरा बन्दा न कीजिये। यदि आपने अपने अन्न को सावधानी से नहीं रक्खा तो आपकी सारी कमाई पर पानी फिर जायगा।

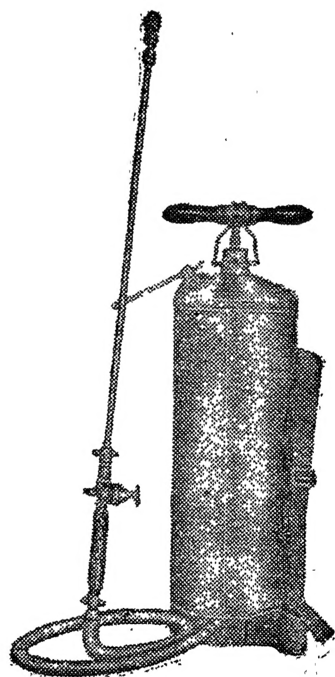
(३) बखार में लेजाने के पहिले अन्न को खूब तेज धूप में सुखाइये:—इससे कीड़े मकोड़े भाग जाते हैं। गीले अन्न को बखार में रखने से उनके सड़ने का डर रहता है।

(४) कूड़ा करकट से अलग करके ही अन्न को बखार या बोरों में रखिये। डंठल और गांठों में कीट-पतंगों के अण्डे लगे हो सकते हैं। इसलिये कूड़ा-करकट से सदा सावधान रहिये।

(४) खेतों में बोआई आरम्भ करने से पहिले बीजों का चुनाव भी हो जाना बहुत ही आवश्यक है। घुने बीज तो अलग हो जांयगे ही लेकिन कमजोर बीजों को भी खेत में मत बोइये। स्वस्थ बीजों को बोने से उनके पौधों में रोग और कीट-पतंगों से बचने की अधिक शक्ति होती है। गन्ने को बोने से पहिले उनके टुकड़ों को तारकोल में लपेट कर बोइये इससे उनकी दीमक से रक्षा होती है।

कीटमार प्रयोग करने के लिये यंत्र

आपको अनेक कीट-पतंगों तथा उनके नियंत्रण के लिये प्रयोग किये जाने वाले कीटमारों (विषों) के सम्बन्ध में बताया गया है। इसके साथ मैंने यह भी कहा है कि कीटमारों को हाथ से प्रयोग करने से सफलता नहीं मिलती। हाथ के बखेरे गये पाउडर अथवा हाथ से छिड़के जाने वाले छिड़काव पौधों के ऊपरी भागों पर ही रह जाते हैं। इस तरह पौधों पर कीट-पतंग पत्तियों की निचली सतह में छिप जाते हैं। फिर इस रीति से आवश्यकता से अधिक कीटमार खर्च हो जाता है और वह हर स्थान पर बराबर पहुँच भी नहीं पाता। इन सभी बुराइयों को दूर करने के लिये छोटे से छोटे हाथ से चलने वाले यंत्रों से लेकर बिजली और इंजन तक से चलाये जाने वाले बड़े बड़े यंत्र बनाये गये हैं। विदेशों में इन यंत्रों का बराबर प्रयोग हो रहा है। अशिक्षा और गरीबी के कारण अभी हमारे देश में इनकी

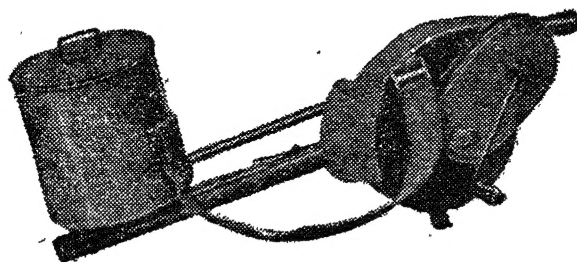


चित्र ३८—कम्प्रेस्ड एयर स्प्रेयर

अधिक चलन नहीं हो पायी है। इन कठिनाइयों का विचार करते हुये मैं केवल दो यंत्रों का ही वर्णन करूँगा जो सभी फसलों को हानि पहुँचाने वाले अनेक पतंगों को नष्ट करने के लिये बहुत ही आवश्यक हैं।

इनमें से एक यंत्र वह है जो पानी में घुले कीटमारों को छिड़कने में प्रयोग किया जाता है। इसे कम्प्रेस्ड-एयर-स्प्रेयर कहते हैं। इसमें एक टंकी और एक फुहारा देने वाली नली का प्रबन्ध रहता है। टंकी में कीटमार भर देने के बाद उसमें लगे हुये पम्प के द्वारा हवा भर दी जाती है। नली का मुँह खोल देने से उसमें से कीटमार का फुहारा निकलने लगता है। फुहारे के रूप में कीटमार पौधों पर छिड़क दिया जाता है। यह यंत्र बाजार में मिलता है। इसका मूल्य ११५) रुपये से लेकर १३५) रुपये तक होता है।

दूसरा यंत्र सूखे कीटमारों को भुहराने के लिये प्रयोग होता है। इसे हैंड-डस्टर कहते हैं। इस यंत्र में एक पीपा, पंखा और यंत्र का मुँह होता है। पीपे में सूखा कीटमार भरकर पंखा चलाया जाता है। पंखे के चलने से पीपे का सूखा कीटमार



चित्र ३६—हैन्ड डस्टर

यन्त्र के मुँह से बाहर निकलने लगता है। इस यंत्र के बाहर कीटमार धुयें की तरह निकले इसके लिये इस यंत्र के मुँह में दूसरा खोखला चोंगा लगा होता है जो यंत्र के साथ ही मिलता है। ये डस्टर बाजार में मिलते हैं। इनका मूल्य १००) से ११०) रुपये तक होता है।

नीचे लिखे हुये स्थानों से भी आप ये यंत्र मंगा सकते हैं :—

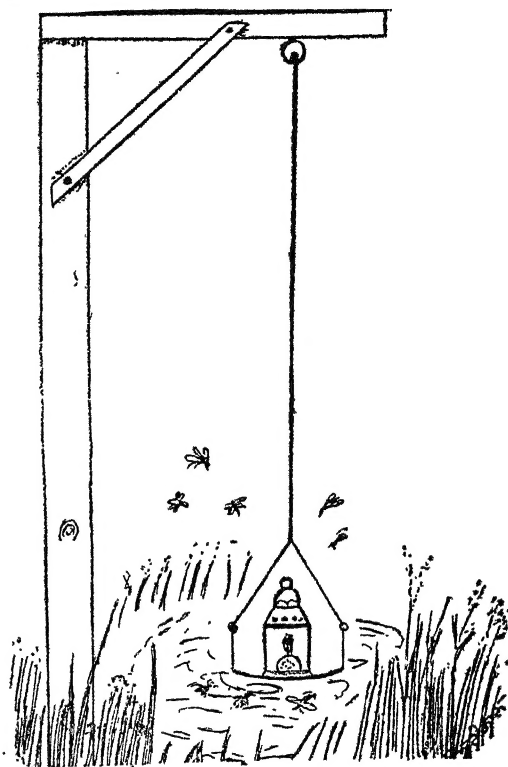
१—एमेरिकन स्प्रिंग एन्ड प्रेसिंग वर्क्स, शान्ताक्रुज बम्बई, २३

२—वाली एन्ड कम्पनी, १६८ चांदनी चौक, दिल्ली।

प्रकाश जाल क्या है ?

कुछ कीट-पतंग ऐसे होते हैं जो दीपक, लालटेन तथा अन्य प्रकाश की ओर आते हैं। लाभदायक पेड़-पौधों को हानि पहुँचाने वाले भी कुछ ऐसे कीट-

पतंग हैं जिन्हें नष्ट करने के लिये प्रकाश-जाल का प्रयोग किया जाता है। इसके लिये एक दीपक किसी बाँस अथवा पेड़ की डाल के सहारे लटका दिया जाता है। इस प्रकाश के नीचे भूमि में एक गड्ढा खोदकर उसमें पानी डाल दिया जाता है। फिर इस



चित्र ४०—प्रकाश जाल

पानी में थोड़ा मिट्टी का तेल अथवा चक्की का तेल, छोड़ दिया जाता है। यदि गड्ढे की सुविधा न हो तो किसी बर्तन में पानी और तेल रक्खा जा सकता है। यह प्रकाश-जाल है। प्रकाश की ओर पतंग लपकेंगे और फिर इधर उधर उड़कर तेल पानी में अवश्य गिरकर मर जायँगे।

कीटमार (विषों) के लिये:—

१—अपने शहर की चांद-मार्का-खाद बेचने वाली दुकान से पूछिये। या

२—भारत पलवराइजिंग कम्पनी, चिंचपोकली क्रासलेन, बाइकुला, बम्बई २७, को लिखिये।

कृषि हानिकारक कीट-पतंगों के जन्तुशास्त्रोक्त नाम

हिन्दी नाम	पृष्ठ	जन्तुशास्त्रोक्त अंग्रेजी नाम
दीमक	१०	Cyclotermes obesus Ramb.
टिड्डी	१३	Schistocerca gregaria Forsk.
टिड्डा	१७	Hieroglyphus nigrorepletus Bol.
भालू सुण्डा	१६	Amsacta moorei Butl.
मकाई, ज्वार तथा बाजरे का सुण्डा	२२	Chilo zonellus Swinh.
तिलका सींगधारी सुण्डा	२३	Acherontia styx Westwood.
तिल का पतंग शत्रु	२५	Antigastra catalaunalis Dup.
तम्बाकू का पतंग शत्रु	२६	Prodenia litura Fabr.
धानका गांधी पतंग	२८	Leptocorisa varicornis Fabr.
धान के तने का सुण्डा	३१	Schoenobius incertellus ,W.
धान का कटुआ पतंग	३३	Spodoptera mauritia ,B.
गन्ने का पाइरिल्ला	३४	Pyrilla perpnsilla Walk.
गन्ने की सफेद मक्खी	३७	Aleurolobus barodensis Mask
गन्ने का अग्रिम भाग का सुण्डा	३६	Scripophaga nivella Fabr.
गन्ने के तने का पतंग	४२	Argyria stricticraspis Hampson.
गन्ने की जड़ पतंग शत्रु	४३	Emmalocera depressella Swinh.
सरसों का पतंग शत्रु माहू	४५	Siphocoryne indobrassicae Das.
चने का कटुआ सुण्डा	४७	Agrotis ypsilon Rott.
चने की ठोंठी का सुण्डा	४६	Heliothis armigera Hubn.
मटर की पत्ती का पतंग	५०	Euxoa segetis Schiff
कपास का लाल सुण्डा	५१	Platyedra gossypiella Saunders.
कपास का धब्बेदार सुण्डा	५४	Earias insulana Boisd.
कपास का पत्ती मोड़ सुण्डा	५६	Sylepta derogata Fabr.
कपास का लाल पतंग	५८	Dysdercus cingulatus , F.
कपास का जेसिड पतंग	५६	Empoasca devastans Disf.
कुम्हड़ा, लौकी की पत्तियों का लाल पतंग	६२	Aulacophora foveicollis K.
मूली, गोभी का काला कीड़ा	६३	Athalia proxima Klug.
भांगा या भांभा पतंग	६५	Begrada picta Fabr.
भाटे के फल का कीड़ा सुण्डा	६६	Leucinodes orbonalis.
आलू का सुण्डा	६८	Phthorimoea operculella.
फलों की मक्खी	७१	Chaetodacus cucurbitoe C.
शकरकंद का कीड़ा	७३	Cylas formicarius ,F.